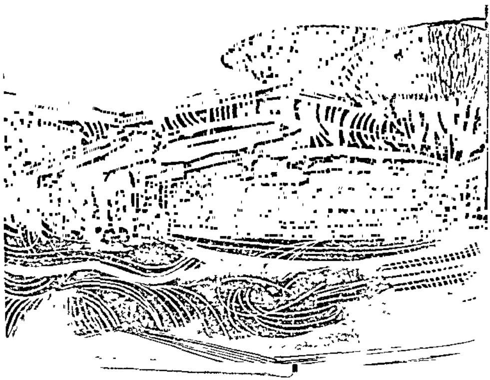
पराग प्रकाशन, दिल्ली-३२



राजेन्द्र अवस्थी

सूरज किरन की छांव



मूल्य : सोलह रुपये / संस्करण, १९७६ / आवरण : नीला चटर्जी / प्रकाशक : पराग प्रकाशन, ३/११४, कर्ण गली, विश्वासनगर, शाहदरा, दिल्ली-३२ / मुद्रक : डिम्पल प्रिंटर्स, दिल्ली-३१

SURAJ KIRAN KI CHHANVA *(Novel)* : Rajendra Awasthi

आमुख

'सूरज किरन की छाव' मेरा पहला उपन्यास है और पुस्तकाकार प्रकाशित होने के पहले धारावाहिक रूप से प्रकाशित भी हो चुका था। पहली कृति मे मुझे अपने प्रिय पाठकों का जो स्नेह मिला था, निरतर बढता जा रहा है। मैं अपने उन हजार-हजार पाठको का आभारी हूं, जिन्होंने समय-समय पर अपने विचार व्यक्त कर और पत्र लिखकर मुझे प्रोत्साहित किया और सम्भवत. इसी का परिणाम है कि मैं आज भी अपने पाठकों की सेवा कर रहा हूं।

यह इस उपन्यास का पाचवा सस्करण है। तब भी मैंने इसमे किसी तरह का परिवर्तन करना ठीक नही समझा। इतना समय व्यतीत हो जाने के बावजूद मैं आज भी अपने पात्रों के बीच उसी दर्द के साथ जीता हू और बजारी का दर्द अब विस्तृत आयाम मे समूची पिछडी हुई मानवता का दर्द बनकर और गहरे समा गया है।

मुझे विश्वास है नये पाठक इस कृति के द्वारा मेरी आगे की समूची रचना-प्रक्रिया को समझ सकेंगे।

राजेन्द्र अवस्थी

सम्पादक 'कादम्बिनी'
हिन्दुस्तान टाइम्स
नयी दिल्ली

सूरज-किरन की छांव



१

तेन्दू के झाड़ पर चढा वह उसे जोर-जोर से हिला रहा था और पके तेन्दू पकी साहों की भांति नीचे टपक रहे थे। तब मैं कुम्हड़ा टोला के नकटा नाले से पानी भरकर आ रही थी। बड़े-बड़े और पीले तेन्दुओं को देखकर जीभ होंठ चाटने लगी। झुककर मैंने एक तेन्दू उठा लिया, तो ऊपर से खोपड़ी पर पड़ापड दो-चार गिरे। कांखकर मैं वहीं अरअरा गई। ऊपर आंख उठाकर देखा, विलियम झाड से उतर रहा था।

विलियम हमारे गांव के गायता[1] का अकेला लड़का है, और सारे गांव में छैला बना फिरता है। चाहे जिसे छबीली कहकर चुहटी ले देता है और कभी गाल पर थप्पड़ भी जड़ देता है। उसकी इस आदत से गांव की हम-जोली लड़कियां परेशान हैं। कल ही बढ़ई की लड़की झरपन ने शिकायत की थी कि विलियम ने उसका जूड़ा इतने ज़ोर से पकड़कर खींचा कि वह कांखकर रह गयी। आंख में आंसू भरे कह रही थी, "नेताम[2] ने यह सब देख लिया था, तो गांव भर में बात बो दी। कहता था—ऐसी चट लड़की से मेरा क्या रिश्ता।"

दईमारा विलियम यहीं जन्मा है और यहीं बडा भी हुआ, पर इत्ता भी नहीं जानता, कि किसी उठती बछेरी का जूड़ा खींचने से क्या होता है। बेचारी दिन-रात रोती है, अपने करम देहरी में पीटती है। कोई दिन था जब नेताम ने उसका आंचल थामकर पांव चूमा था; आज वह उसका अंगूठा भी चूमती है तो वही गोड़ दिखाता है। ऐसे अनाड़ी को देखकर मेरा

१ मुखिया। २. झाड़-फूक करने वाला ओझा।

खून सूख गया। कई दिनों से विलियम मेरे पीछे पडा था। गैल-हाट में मुझे देखकर सीटी बजाना और मटकाना उसका रोज का धन्धा था।

झाड से उतरकर उसने मेरी बाह पकड ली। बोला, "तेन्दू उठाती है?" दूसरे हाथ मे मेरे गाल मे उसने धीरे से एक चांटा मारा और मुझे अपने पास खीचते हुए बोला, "गुस्सा हो गयी, बजारी? अरी, तू तो मेरी जिन्दगी है। तुझे भला मैं क्यो मारूं? यह तो प्यार किया था तुझे!"

प्यार का नाम सुनकर घबरा उठी। गुस्सा आ गया। बोली, "बड़ा आया है प्यार करने वाला! गांव की हर जवान लड़की को छेड़ता है और सबसे प्यार जताता है। तेरे बाप ने गाव पर एहसान किया है, तो इसका मतलब यह नही कि तू हमारी इज्जत लूटे।"

"हमारी-तुम्हारी का भेद कैसा, बजारी?" वह हौले से बोला, "हम क्रिश्चियन हैं, तो क्या तुम लोग नहीं हो? नही जानती, मेरे बाप ने सारे गांव को बचाया है। जब अकाल पडा था, तो दाने-दाने को सारा गांव तरस गया। तब कोई सामने नही आया। मेरे बाप ने खून-पसीना एक कर दिया, शहर से बोरो अनाज लाकर गाव भर को मुफ्त बाटा—और देखती नही बंजारी, कितनो को मौत के मुह से बचाया। गांव मे अस्पताल बनवा दिया है ··"

"बड़ा अच्छा किया है"—मैंने दात दिखाते हुए कहा, "बढ़ई रोज पानी पी-पीकर तेरे बस भर को कोसता है। और कोसे क्यों नही? उसकी रोजी-रोटी छीन ली तेरे बाप ने। जरा-सा सिर चढता है किसी का, तो सूटवारे साहब को बुला लाता है और देह मे हाथभर की सूजी घुसड़वा देता है।"

"अच्छा तेरी सही, तू कहेगी तो डागघर को भगवा दूंगा और तेरे बाप की भी टिकट कटवा दूगा। तू मत बिगड़, जब आख तरेरती है तो मेरी छाती फटती है। आज घटे भर से तेन्दू गिरा रहा हूं। तुझे नाला जाते देख लिया था। सोचा, लौटेगी तो ढेर-से आचल मे बाध दूगा। तब तेन्दू की फाक जैसे तेरे गाल फूल उठेंगे।"

विलियम ने इतना कहकर मेरी दोनों बाहे जोर से पकड ली और मुझे अपनी ओर खीचा। मैं चीख उठी। मेरी आवाज सुनकर सिन्दीराम दौडा। वह आसपास कही खेत जोत रहा था। गांव के रिश्ते मे सिन्दीराम

मेरा काका लगता है। उसने दूर से आने की आवाज़ दी, तो विलियम छोड़कर भाग गया।

सिन्दीराम ने मुझे छाती से लगा लिया, "कौन था, बेटी ?"

"वही, गायता का लाड़ला विलियम। माइलोटा[1] कहीं का !"

सिन्दीराम ने मेरे सिर पर हाथ फेरा, "रंगा स्यार है छोकरा। उसके बाप को क्या इसलिए गायता बनाया था। हमारी जान बचायी, यह सही है; पर मनमानी भी तो करता है। गांवभर का चंदा लेकर 'विलायती चरच' खड़ी कर रहा है। कहता है इसमें तुम्हारा बड़ा देव बैठेगा; हरामजादा···लड़का सांड बना है, गांव भर की छोकरियों पर फंदा डालता रहता है। आज संझा को···अच्छा बेटी, तू जा, कह तो गेंवड़े तक पहुंचा दूं।"

"नहीं काका, चली जाऊंगी, अभी तो उजेला है।"

गांव की ओर बढ़ी, तो रह-रहकर विलियम की शकल आंखों के सामने झूलने लगी। उससे मुझे डर लगने लगा था। लगता था, हर झाड़ और मेढ़ के पीछे वह छिपा है। यहां से नहीं निकला तो वहां से निकलेगा। कब निकलेगा, कब निकल आए, क्या पता। पैर ठिठक जाते थे। अड़कर चारों ओर देखने लगती थी, पर नजर कुछ न आता।

सामने से लरकू का काला कुत्ता आता दिखा तो ढाढ़स बंधा। चलो, कोई साथी तो मिला, पर कुत्ता भी पांव सूंघकर आगे भाग गया। पास बोदीराज देवता का पीपर था। हाथ जोड़कर मैंने उसे सिर झुकाया। आंख खोली तो दंग रह गयी, सामने विलियम खड़ा था। देवता, झाड़, खेत-खलिहान और गैल सब घूमने लगे थे। पर, अब की बार विलियम ने हाथ नहीं पकड़ा। वह दूर खड़ा रहा। बोला, "माफी मांगने आया हूं। मुझे मालूम नहीं था बंजारी कि तू मुझे नहीं चाहती। मैं तो जाने कब से तुझ पर लुट गया हूं। चाहता था तेरे पैरों पर अपना माथा धरकर ज़िन्दगी बिता दूं। खैर, तू नहीं चाहती, न सही। यह ले दो रुपये।"

मैंने रुपये लेने से इनकार कर दिया, तो उसने जबरन मेरे आंचल में बांध दिये। बोला, "छोटी-सी भेंट है।" और सिर झुकाकर, जहां से मैं आयी

[1]. एक तरह की गाली।

थी, उसी ओर भाग गया। मैंने लौटकर देखा, वह दौड़ता जा रहा था। भारी मन से मैं आगे बढ़ी। आंचल खोला, चांदी के दो गोल रुपये थे। मन हुआ इन्हें फेंक दूं। इन टुकड़ों को डालकर वह मेरी इज्जत लूटना चाहता है, पर हाथ से रुपये न फेंके गये। दो रुपये थोड़े होते हैं! यहां तो चील का घोंसला है। तापे[1] दिन भर छाती मारता है तो छह-आठ आने कमाता है और आवा[2] तपती दुपहरी में खेत काटती है तो एक पायली कमा पाती है। दो रुपये पाना तो दूर, देखना हराम है। आज जिन्दगी में पहली बार देखने में मिले हैं तो फेंके नहीं गये। आंचल की गांठ मैंने जोर से बांध दी और कमर में खोंसकर संतोष की सांस ली।

घर के सामने गैल में पहुंची तो कबरी, भूरी और बिजरा लड़ रहे थे। डंडा उठाकर उनका झगड़ा मिटाया और उन्हें थान के हवाले किया। तब तक तापे लकड़ी का बोझ लेकर घर आ गया था और आवा ने भी चूल्हे में सिर डाल दिया था।

बियारी तक जी घबराता रहा। बार-बार जी में आता कि विलियम की छेड़खानी की चर्चा करूं, पर हाथ कमर के पास गांठ में चला जाता और मैं सांस लेकर रह जाती। सिन्दीराम का भी रास्ता देख रही थी। वह तापे से विलियम की बात बता ही देगा। घंटों उसकी गैल हेरती रही, पर वह न आया। गांव के कुत्ते भूकने लगे, तो मैं लुढ़क रही। एक हल्की-सी झपकी आयी और फिर जो नींद खुली, तो रात तारे गिनते बीती।

विलियम मेरी आंखों के सामने झूल रहा था। सोचती थी कितनी अजीजी से दो रुपये मेरी छोर में बांध गया। जिन्दगी भर जिस दौलत को आंखों से मैंने नहीं देखा था, आज उसे देखा ही नहीं, पा भी लिया। अन्धे को आंख मिली, लंगड़ा उचटने लगा। यदि मैं उसे नीची नजर से देखूं तो देवता कोसेगा···पर वह तो खिरची है—मैंने सोचा। स्याने कहते हैं, इनका देवता यहां से हजारों मील दूर समुद्र पार रहता है—पर नहीं, विलियम का तापे तो गांवभर का सरदार है। सब उसे मानते हैं। वह भी आड़े बखत सबका साथ देता है। कहता था, 'चरच' में बड़े महादेव रखूंगा, द्वारे पर हेकिर देवता बैठेंगे, भीतर बड़े महादेव की आसनी रहेगी। जो

१. पिता। २. मां।

देवता बाहर पड़ा दुःख देखता है, छाया पा लेगा तो गांव भर में छाया करेगा।...फिर विलियम बुरा भी तो नहीं। देखने मे खूबसूरत है, लच्छेदार बालों पर कितनी लहरियां पाड़ता है, और पैसे...मैं खूब जोर से हंसी, तो दादी झपटकर उठ बैठी, "क्या हुआ, बेटी ? सपना देख रही थी क्या ?"

मैंने हां मे सिर हिला दिया, तो दादी की चिन्ता का अन्त नहीं। आवा को उसने जाकर उठाया। बोली, "टुरिया सपने मे खिलखिलाकर हंसी है, भगवान न करे..."

"कुछ नहीं होता, दादी !" मैंने कहा, तो वह झल्ला पड़ी, "बडी पुरखन आयी है, तू क्या समझे है, सपने में हंसना सारे घर मे रोना लाता है।"

मैंने कई तरह की बातें बनायी और आवा तथा दादी को समझाने की कोशिश की, पर वे न मानी।

मुर्गे ने बांग दी और आज मजूरी में जाने के बदले सारे लोग मुलदेवा की पूजा की तैयारी मे लग गये।

२

सिन्दीराम बेरी के जंगल के पास मिल गया। बोला, "कल नही आया बिटिया, तू तो रास्ता देखती रही होगी। फिर उस कलमुहे ने तो नहीं छेड़ा ?"

"नही, काका!" मैंने कहा, तो वह बोला, "बुरा न मान बेटी, मैं रातभर सोचता रहा। मैंने सोचा—तेरे बाप से बताऊंगा तो वह गांवभर मे बात बो देगा, हसी तेरी होगी, सो गम खाकर रह गया...पर विलियम अब कभी मिला तो...?"

"नहीं काका, अब वह कभी गड़बड नही करेगा।" मैंने कहा।

सिन्दी मेरे पास आकर बोला, "बेटी, आदमी बांका है। गांव के अन्नदाता का बेटा है। कहीं हाथ आये तो छोड़ना नही। बाका नौजवान है। और तू, मेरा भरोसा रख, जब तक चाहेगी, किसी को राई भर भी खबर न होगी।"

सुनकर मैंने गॅवडे वाली बात काका से कह दी। मैंने दो रुपये उन्हें दिखाये। वह खूब हंसा, उसने मेरे हाथ से रुपये ले लिये और मेरे गालों को मसककर बोला, "छटी है, आखिर है किसकी भतीजी। जा, दाहिने हाथ से मुड जा, नरवा किनारे बसरी लेकर गया है। कहता था नाले में नयी-नयी मछलिया आयी हैं।"

रुपये लुटाकर मैं दाहिनी ओर मुड गयी। मुझे गम नहीं था। फूला मन आज विलियम से माफी मागने के लिए उतावला था। जाकर उसके सिर पर अपना माथा टेक दूगी और किये के लिए आंसू बहा लूगी।

बड़े वीरन के खेत के मोड पर कगला मासी मिल गया। वह बेवर की सफाई कर रहा था। अठारह वरस का कगला, लडका तो भरई का था, पर पला वीरू की गोद में था। वीरू आदमी बडा है। आसपास के गावों में भी उसके बेवर बिखरे पडे हैं। इसी से तीन लडकों के रहते हुए भी उसने कंगला को गोद लिया था। है भी वह खूब मेहनती। नाम से भले ही कंगला हो, पर दिल से कंगाल नही। गाव के अच्छे लडकों में उसकी गिनती होती है। मैं उसके घर से दूर रहती हूं। वह रहता है गाव के उस पार छोटे टोले मे। मेरा घर गांव की इस नुक्कड मे है। पर मुझसे वह अनजाना नहीं। अनजाना क्यों, मेरे मन मे उसके लिए प्यार है।

दो बरस पहले। महुआ के लाल-लाल फूल गाव को घेरे थे, जैसे उसके कपाल मे कुमकुम भरा हो। हरपू पाडुम का त्योहार। नीले आकाश मे पूरा खिला चाद। वीरन का ढोल और हरपू के दिल मे चुभने वाले गीत। रात भर वह मजमा जमा कि आज भी उसकी याद आती है। महुआ की लांदा[1] की दो-चार बोतलें एक साथ खाली कर दी। मैंने भी उतनी ही की। आखिर होड़ लगी थी। कहता था, मटका भर लादा हजम करने की ताकत रखता हूं। मैं क्या कम थी? भोग का नाम, लादा पीने मे, गाव भर जानता है। पीकर आकाश-पाताल के कुलाबे मिला देता था। उसकी लड़की जो हूं। न जाने उस दिन होड में हम कितनी पी जाते, बद्दई ने रोक दिया। कहने लगा, "छोकरे हो, क्यो जान पर खेलते हो?" जोड़ बराबरी पर टूटी।

यहा तो निबट गये, पर हरपू के मजमे मे फिर बाजी लग गयी। एक से

१. शराब।

एक पैंतरे, एक-से एक चाल। करमा के साथ ददरिया, शैला के साथ रीना, झरपट और झुम्मा। जिसने उस दिन का नाच देखा, दांतों तले अंगुली दबाकर रह गया। आज तक वैसा हरपू पाड्डुम कभी नहीं मनाया गया।

इसके बाद हम दोनों की दोस्ती घनी होती गयी। दोनों रोज मिलने लगे। गांव के दोनों छोर हमारे लिए डग भर रह गये। मैं हिरनी बनकर उचाट भरती कि उस पार पहुंची; वह खरगोश की दौड़ लगाता कि मेरे आंगन में खड़ा मिलता। गांवभर हमारे बारे में न जाने क्या-क्या बातें करता। उनमें कितनी सच हैं, कितनी झूठ—मैं खुद नहीं जानती।

आज एक हफ्ते के बाद वह मिला। मुझे देखकर उसने घास काटना छोड़ दिया। बोला, "आज कहां बरसेगी।"

"यहीं समझ ले!" मैंने चुलबुलाहट में कहा, तो उसने मेरी चुटिया दबा दी। कहने लगा, "आज सह लूंगा, हफ्ते बाद मिली है, जी भर बरस ले, फिर जाने कब मिलते है।"

"भला क्यों? फिर कहीं जा रहा है?" मैंने पूछा तो रुआंसा होकर बोला, "धमधा में नये बाप के घर मारका पांडुम है, न्यौता आया है नाच का।"

"नया बाप कौन?" मैंने पूछा। घृणा भरे शब्दों में वह बोला, "मेरी पुरानी मां ने नया कर लिया है। नये खसम के लड़के का ब्याह है।" फिर होंठों को दांतों में दबाकर वह शरारत से बोला, "नयी बहू आयेगी घर।"

मैं चुप रही। उससे न रहा गया। मेरे हाथ खींचते हुए बोला, "जब तू खसम करेगी, तो मारका पांडुम में दिल खोल दूंगा।"

मुझे हंसी आ गयी। खूब खिलखिलाकर हंसी। फिर गुस्सा आया, तो मैंने हाथ छुड़ा लिया। बोली, "तुझे नाचने को मिलेगा? मिहरिया के ब्याह में खसम नाचता है?"

उसकी बत्तीसी धतूरे के फूल-सी फूट पड़ी। बोला—"सच!"

"और नहीं क्या?" मैं उचाट भरते चली गयी। वह बुलाता रहा, पर मैंने लौटकर भी नहीं देखा। मन इस समय विलियम पर लगा था। जब तक उससे माफी न मांग लूं, चैन कहां!

नरवा के किनारे एक पत्थर पर बैठा विलियम देख रहा था। मुझे शरारत सूझी। पास ही अगिया वैताल की दीवार के पीछे छिप गयी और एक अजीब डरावनी-सी आवाज़ मैंने निकाली। उसने लौटकर देखा। मैंने फिर आवाज़ की। दो-तीन आवाज निकालते-निकालते उसकी हिम्मत पस्त हो गयी। वह कांपने लगा और ऐसा लगा कि अब नाले में गिरता ही है। मैंने दोडकर उसे पकड लिया, तब उसे ढाढस आया और डींग मारने लगा। बोला, "मैं भला डरने का, बहाना बना रहा था।"

मैंने उससे ज्यादा मजाक करना ठीक न समझा। बोली "बहाना सही। मैं तो तुझसे माफी मांगने आयी हूं।"

वह उठकर खडा हो गया, "काहे की माफी, बंजारी ?"

"मैंने तुझे त्रास दिया था, विलियम !"

मेरा इतना कहना था कि उसने मेरे दोनों हाथ पकड़ लिये, "मेरे तो भाग खुल गये।" और वह अपने आप नाचने लगा। नाच देखकर मुझे हंसी आ गयी। मैंने हाथ छुडा लिया। उसका एकाएक हाथ पकड़ना मुझे अच्छा न लगा, पर करती क्या। नरवा के किनारे से उसने चार मछलियां उठायी; बोला, 'आज सगुन अच्छा था। तेरा बडादेव बहुत खुश रहा है। चार-चार हाथ लगी।"

मछलियां बडी थी, सेर-सेर भर की। एक तो रोहू थी। देखकर ही मुंह में पानी आ गया। इस सड़े-से नाले में रोहू ! रास्ता भूल गयी होगी।

"तू यहा कैसे आ धमकी ?" उसने पूछा।

"तुझे ढूढती चली आयी।"

"पता कहां लगा ?"

"सिन्दीराम जो हल जोत रहा था—मुझे रातभर नीद नहीं आयी। कब तारे डूबे, भुनसारा हो और कब तुझे पकडू। तू हमारे अन्नदाता का बेटा है। व्यर्थ ही तुझे कल मैंने नीचा दिखाया।"

"यह तेरा अधिकार है, बंजारी।" उसने खीसे से एक नोट निकाला और मेरी ओर बढाते हुए कहने लगा, "ले अपना मिहनताना।"

"मिहनताना काहे का ?"

"यहां तक आने का।"

मोड़ पर सिन्दीराम मिला, पर मैंने उसे आवाज नही दी। आगे बढ गयी। मेरी उचाट बढ़ती जा रही थी, पर घर दूर भागता जा रहा था। दो-चार जगह गिरती-फादती किसी तरह घर पहुंची। दरवाज़े मे बड़े वीर बैठे थे। बोले, *"आज तो फूली नही समाती, क्या हो गया है तुझे ?"*

वीर को धक्का देते मैं अदर घुस गयी और आवा के हाथ रोहू देते हुए मैंने कहा, "ले, तू कहती थी रोज पेज पीते-पीते मन ऊब गया है, आज मन बदल ले।"

मैं आवा से लिपट गयी और खुशी से मैंने उसे उठा लिया। तभी पोलका से दस रुपये का नोट नीचे गिरा। आवा की आंख पडी, तो मुझे छोडकर वह उस पर टूट पडी, "कहा से लायी, री ?" मैं हक्का-बक्का हो गयी। खुशी के मारे मैंने गलीभर यह न सोचा था कि इसका उत्तर क्या दूगी। मैं थोडी देर उसका मुह देखती रही। उसने फिर पूछा, तो अनजाने मुह से निकल गया, "मछरी मारने नरवा के तीर गयी थी, वही रास्ते मे डला था।" आवा ने नोट अपनी टेंट के हवाले किया, और मेरे हाथ से मछली लेकर चूल्हे की ओर चली गयी; पर बड़े वीर ने मामले को खतम न होने दिया। उसने नोट के बारे मे पूछताछ की। इसी बीच तापे भी आ गया और सारे घर में हगामा मच गया। नोट कहा और कैसे मिला—इससे उतरकर बात इसमे ठहर गयी कि नोट किसका है। तापे उसे रखने को तैयार नही हुआ। उसका कहना था, "हम गरीबी मे रह लेंगे, एक जून पानी पीकर गुजार देंगे, पर किसी के धन पर नजर न डालेंगे। साथ पसीने की कमाई ही देती है, फोकट के धन का क्या ठिकाना।" उसने मुझसे खोद-खोदकर सवाल किये—किस बखत, कहां, कैसे वह नोट मिला, आसपास कौन था ? जो कुछ भी जी मे आया मैंने बता दिया, पर आसपास कौन था, यह मैं न बता सकी। बताती भी कैसे ? पर तापे को जैसे वह नोट काट रहा था। उसने कहा, "गांव में दो-तीन ठिकाने ही तो है। पटेल का होगा, पटवारी का होगा या गायता का। चौथा यहा कौन है ? और किसी का गिरा होता, तो अब तक गावभर में 'रेर' पड जाती।"

मैंने तापे को रोका, बोली, जिसका नोट है उसे चिन्ता नही, फिर तुम क्यो सिर मारते हो ?" पर उसने एक न मानी।

घंटे भर बाद वह लौट आया। नोट पटवारी ने ले लिया था, अपना कहकर। मेरे सामने की धरती घूमने लगी थी। न वह मेरे हाथ लगा, न विलियम को वापस मिला। दो चोरों के सौदे में तीसरा हाथ साफ कर गया। बन्दर के हाथ ऐनक लगने से और क्या होता है ?

कल की रात विलियम की याद में बितायी थी, आज की रात दस रुपये लुट जाने की चिन्ता में बीती। अपनी मूर्खता पर मैं अपने आप तरस खा रही थी। मैंने निश्चय कर लिया कि कुछ भी हो, आज से विलियम से नगद पैसे कभी नहीं लूंगी। वे मेरे लिए नागिन हैं। एक रोज मेरा राज खोल देंगे, मेरा सुख लूट लेंगे।

३

कंगला से अब मुझे नफरत होने लगी थी। क्यों ? सो मैं नहीं जानती। इतना ही कह सकती हूं कि उसने मेरा कुछ नहीं बिगाड़ा था। पर अपने आप मैं उससे दूर खिचती गयी।

एक दिन तापे को हरारत हो आयी। हरारत एकाएक तेज बुखार में बदल गयी। उसे सुध-बुध नहीं रही। वह ऊलजलूल बकने लगा। खाना-पीना सब बन्द। सारा घर मुसीबत में था। ओझा ने खूब झाड़-फूंक की, पर रोग उसकी समझ में न आया। सरईपाली, नरपागांव और डडा होरी के गुनिया आये। सबने अपनी ताकत आजमा ली, पर कुछ काम न बना। न जाने कितनी जड़ी-बूटी खिलायीं, कितने पत्तों का रस पिलाया, पर सब बेकाम गया। अन्त में गायता के पास खबर गयी। उसने आकर हमें ढाढस बंधाया और पीपरदेही से मिशनरी के डॉक्टर को लेकर घंटे भर में ही आ गया। दो-चार सूई उसने लगायी, सफेद लाल-पीली दवा दी, और शीशी में काला-सा घोल देकर वह चला गया। दो दिन के बाद तापे ने आंखें खोल दीं। हमारे जी में जी आया। गायता को हमने खूब असीसा। अब तापे उठने-बैठने लगा था। गायता रोज संझा को घर आता था, क्षेम-कुशल पूछता और चला जाता था। तब उसका लड़का विलियम शहर गया था।

दो दिन बाद वह लौटकर आया। जब उसे मेरे तापे के बारे में पता लगा, तो वह सीधे मेरे घर चला आया। विलियम को देखकर मेरा मन अपने आप खिल उठा। लगा जैसे कोई बडा सहारा मिल गया है। शहर की बहुत-सी बातें उसने मुझसे ही की। जाते वखत लाल रंग की एक साडी और एक लाल पोलका उसने मेरी तरफ बढा दिया। तापे ने मना किया। बोला, "हम गरीब है, यह पहनकर कहा रहेंगे, मालिक। आदमी ऐसा पहने-ओढ़े जैसा सब दिन निभे।"

"सब निभता ही है, भोगा पटेल ! मैं तुम्हे कुछ थोड़े दे रहा हूं; दे भी कहा सकता हू। यह तो बजारी बहन के लिए छोटी-सी भेंट है।"

उसने बहन कहा तो मैं चौंकी, पर तापे को संतोष हुआ। बोला, "भाई की भेंट भला कौन टालता है ! ले ले, बजारी।" विलियम से उसने कहा, "पर अब आगे हम कुछ न लेंगे। तुमने इसे बहन माना है बेटा, तो जिन्दगी भर यह नाता निबाहना।"

विलियम चला गया। दूसरे दिन गाव के बाहर नयी बन रही चरच के पास वह खडा मिला। मैंने पास पहुंचकर चिहुटी ली। बोली, "भइया !" उसने चौंककर मुझे देखा, "क्या कहा ?"

मैंने दुहराया, "भइया…"

उसने भवें तान ली, "बहन बनती है ?"

"तूने ही तो बनाया है रे कल, भूल गया ?"

उसने हंस दिया, बोला, "पगली कही की, नाते-रिश्ते तो मानने के होते हैं। जब जो जी चाहे बना लो और बिगाड लो। मां को छोडकर, सब बदलाहट के नाते है, बंजारी। जब जो जमे बैठाल दिया। तू इत्तने ही से बहक गयी। तू ही बता, क्या कहता तेरे तापे से ?"

"क्या कहता है, विलियम ? नाते-रिश्ते बदलते हैं ! हमारे यहां ऐसा नही होता। मिलावट तेरे यहां ही है, बदलाहट भी वही होगी।"

"बहन कहने से कही बहन हो गयी ? तू पागल हुई है। कहने से *काम होने लगे, तो जमाना खाक हो जाय। मैं कह दू कंगाली भर जाय…"*

मैंने दौडकर उसके मुह पर हाथ रख दिया। मुझे अच्छा नही लगा। जैसा भी हो, कगाली मेरा है। विलियम पर बरस पडी, "बड़ा आया है

मनसबदार कही का। आखिर तेरी जात खुल गयी, हर काम मे मतलब। मतलब बिना जैसे तेरे डग ही नही उठते। हम लोग ऐसे नहीं है और यदि तू ऐसा समझता है, तो गलती करता है। मैं आज ही तापे से कहूंगी…"

उसने मुझे बीच मे रोक दिया, बोला, "चल, तू मुझे भाई मानना, मैं तुझे अपनी रानी मानूगा। बात सिर्फ मानने की है न, जिसे जो ठीक लगे वह माने, इसमें क्या झगडा है?"

विलियम की बातें चुभ गई थी, बिना कुछ बोले वहा से चली आयी। वह बुलाता रहा, पर मैंने लौटकर भी नही देखा।

विलियम की लायी नयी साड़ी और पोलका पहने जब मैं बाहर निकली, तो गांवभर मे हलचल मच गयी। गाव की हर निगाह अनोखी लगी। मेरी सहेलिया मुझपर व्यंग्य करने लगी। इधर तापे और आवा के पेट मे भी बात न पची। वे जहा-तहां विलियम की दरियादिली की चर्चा करने लगे थे। यह पता लगते देर न लगी कि साड़ी और पोलका का धनी विलियम है।

रधिया ने बेवर के पास मेरा आंचल पकड़ लिया और उससे झूलने लगी। बोली, "भाग लेकर आयी है गुनिया। हममे इत्ता गुन कहा। हम तो तरसते हैं, कोई प्रेमी आकर प्यार भरी चुटकी ही ले जाय, तो अपने भाग सिराहें।" मैंने उसे झिड़क दिया, वह ताने जो कस रही थी। अगूर खट्टे है तो जल रही थी। मैं आंचल छुड़ाकर चली गयी।

सिन्दीराम ने मुझे देखा, तो बखर छोड़कर मेरी ओर लपका, "बड़ादेव की करपा बिटिया, विलियम जैसा छैल-छबीला किसकी मुट्ठी में आता है।" उसने दौड़कर मेरा मुह चूम लिया, बोला, "सरपा को भी गुन सिखा दे न।"

सरपा सिन्दीराम की लड़की थी। सिन्दीराम ने उसे एक लमसेना[1] से बांध दी थी। लमसेना था तो मेहनती, पर बड़ा झगड़ालू था। सरपा को जब-तब मारपीट देता था। सरपा बेचारी अपने फूटे करम पर रोती थी। कहती, "अभी तो ब्याह नहीं हुआ। जब इसके घर जाऊंगी, तो भूजकर ही खा जायेगा।" सिन्दीराम ने कई बार चाहा कि लमसेना को निकाल दे, पर

१. पिता द्वारा नौकर के रूप में रखा पुत्री का भावी पति।

कोई दूसरा लडका उसके लिए लमसेना बनने के लिए तैयार ही नही था। सरपा थी भी जरूरत से ज्यादा काली और एक पैर से लगडी भी।

आगे बढी, और टौरिया के पास पहुंची तो करौदा की छांव में बैठा विलियम बासुरी बजा रहा था। उसकी तान मे बड़ी मिठास थी। उसने मुझे दूर से आते देखा, तो खिल उठा। बांसुरी के स्वर और सुरीले हो गये। आम के झाड तक मेरे पहुंचते-पहुंचते उसने तान बद कर दी; और लपक-कर मुझे खींच ले गया। करौंदा की घनी छाव मे उसने प्रेम के हजारों किस्से सुनाये। जाने वे कहा-कहां के थे। मुझे तो सिर्फ इत्ता ही याद है कि जिन दो जोडों की वह चर्चा करता था, वे प्रेमरस मे सराबोर थे। बातों ही बातों में उसने कहा, "ऐसी साडियो से लाद दूगा बजारी, और सोने-चांदी के जेवर भी बनवा दूगा। कानों के लिए झुमके, नाक के लिए नथ, गले में हमुली, सिर मे छूटा और पाव मे पयरी। पहनकर निकलेगी, तो छम-छम होगी। जहानभर की आखें तुझ पर उठेंगी और उनके कलेजे मे कांटा गड़ेगा।"

"कांटा तो अभी गडने लगा है, रे!" मैंने कहा, "गांवभर की आंखों में खटक रही हूं जब से तेरा दिया लिबास पहना है।"

जाने कितनी रस भरी और प्रेम भरी बातें उसने कीं, और बातों की भूलभुलैया मे ही उसने मुझे अपनी गोद मे लिटा लिया। करौंदा की ठडी छाव मे मैं खो गयी। जब उठी, तो सूरज सिर पर था और विलियम यहां से भाग गया था। मुझे अपने आप से घृणा हुई। मेरी समझ में आ गया कि विलियम मुझ पर क्यों कल्दारों की वर्षा करता था। नये कपड़ों के दान का भेद भी खुल गया। डर था कही यह भेद कोई जान न ले। कही कंगला को पता न लग जाय, तापे न जान ले। डरती-डरती उस दिन घर पहुंची। भाग बड़े थे, जो रास्ते में कोई नही मिला।

विलियम अब मुझको अकसर मिलने लगा था। नित नया लालच देता, पर सब कमल के पत्ते पर पडीं पानी की बूदो की तरह बेकार जातीं। कगला जब घमधा से लौटकर आया, तो अलग बिगड गया। इतनी सावधानी रखने पर भी उसे सब कुछ मालूम पड गया था। वह भूलकर भी मेरी ओर न देखता। मैं उससे बात करती, तो वह अनसुनी कर देता। अब वह अकसर

गुम्मा की लड़की टिमकी के साथ दिखता था। टिमकी दिन-रात उसके गुन बखानती रहती थी। मेरे मन में सांप लौटता था। टिमकी को मैं अपनी सौत समझने लगी। कभी लगता कि अकेली मिल जाए तो उसका गला दबा दूं।

गांवभर की उपेक्षा मेरे हाथ लगी। खैर यही थी कि तापे और आवा ठंडी सांसें तो लेते थे, पर मेरे सामने कुछ न बोलते। गांव में मेरे ब्याह की बातचीत भी तापे ने शुरू कर दी थी। उसे शायद यह पता लग गया था कि अब कंगला मेरा नहीं है। मेरे सामने भी अंधेरा था। सहेलियों की उपेक्षा, प्रेमी की दुत्कार और बड़ों की चिन्ता ने विलियम के पास फिर जाने के लिए मुझे विवश कर दिया। विलियम ने हिम्मत दी कि मैंने कोई पाप नहीं कर लिया है। वह मुझसे ब्याह कर लेगा। कुछ ढाढस आया। सोचने लगी, 'विलियम से व्याह कर लूं, फिर सबसे निबटूंगी।"

नुका नोंरदाना पांडुम का त्योहार था। गांवभर की लड़कियां रीना[1] गा रही थीं। 'रि रीना रीना रे रीना हो' की टेर गूंज रही थी। मैंने भी उसमें भाग लिया। नाच का मुझे अच्छा अभ्यास था। घंटों नाचती, पर थकती नहीं थी। मेरा नाच गांवभर में प्रसिद्ध था। कंगला मेरे नाच पर ही तो मुझ पर झुका था। आज जाने क्या हुआ कि आधा घंटा नाचने के बाद ही मुझे चक्कर आ गया। मैं गिर पड़ी। सिर से खून निकल आया। वइदे ने जांच-पड़ताल की। उसने बताया कि मेरा पेट आ गया है। मैंने सुना तो कान फट गये। तापे, आवा और बड़े बीरने सिर पीट लिया। बात हवा हो गयी। घंटेभर में ही सारे गांव में मेरा नाम उड़ने लगा। जात वालों ने रोटी-पानी बंद कर दी। मेरे यहां उनका आना-जाना भी बंद हो गया।

मेरा गांव में रहना मुश्किल था। शरम के मारे मैं अपने आप गड़ी जा रही थी। कंगला का पेट होता, तो चिन्ता नहीं थी। पिछले साल सिरीराम की छोटी लड़की का भी पेट आ गया। उसका 'भूत बिहाव'[2] हो गया था।

---

१. 'रीना' आदिवासी युवतियों का प्रिय नृत्य है। इसमें केवल महिलाएं ही भाग लेती हैं।

२. जब कोई कुमारी गर्भवती ऐसे व्यक्ति से ब्याह करे जिसका किया यह गर्भ न हो तो उसे 'भूत बिहाव' कहते हैं।

हंसी होने का समय नही आया। यहां बात और थी। विलियम, चाहे वह जैसा भी हो, है तो परजात। उसका धरम हमारा धरम नहीं। उसका देवता हमारा देव नही।

सिन्दीराम ने भी मेरा साथ छोड दिया था, उसी ने मुझे बढावा दिया था, पर अब वही कन्नी काट गया। वही मेरे बारे मे यहां-वहां ऊलजलूल बातें करता था। कहता था, "बडी बदजात लडकी है।" मैं सब कुछ कान मे तेल डाले सुनती थी। करती क्या, अपनी बिटिया के पीछे लगे छोटे-से कलक को धोने के लिए ही शायद उसने मुझे आगे बढ़ने के लिए उभारा था। फिर भी मेरे लिए थोडा सहारा था—विलियम की बातों का, "घबड़ाने की इसमे क्या बात है बंजारी, मैं तो तुझसे शादी करने को तैयार हूं।" इसी आधार को लेकर मैंने तापे और आवा को ढाढस दिया। मैंने कहा, "बाबा, भूल मुझसे हुई है। मैं नही चाहती दर्द तुम्हारे सिर हो। मुझे घर से निकाल दो और तुम गाव की जात मे मिल जाओ। विलियम ने मुझसे···" तापे ने अपने आंसू पोछे, "अच्छा बेटी, आज ही मैं विलियम के बाप से मिलता हूं।"

तापे वहा गया, तो रग ही और था। विलियम ने कह दिया कि वह मुझसे कभी नही मिली। बोला, "बजारी तो मेरी बहिन है पटेल।" पर वह है बडी छटी। मैंने उसे कई बार कई लड़कों के साथ देखा है। आवारा फिरती रहती है। रोज झिरिया किनारे घूमने जाती थी। मेरा लेन-देन तो खुला है, वह भी तेरे सामने।"

मैंने सुना तो मुझे काठ मार गया। मैंने सपने मे भी न सोचा था कि विलियम, इतनी बातें करने के बाद, इतना बड़ा धोखा देगा। उसने जो सब्जबाग दिखाये थे, हवा में काफूर हो गये। करौंदा की छाया देखकर मुझे डर लगने लगा। पर मैंने हिम्मत नही हारी। मैंने तय कर लिया कि तापे से कहकर पंचायत कराऊंगी और गांवभर के सामने उसकी इज्जत का भंडाफोड़ करूंगी।

पंचायत भरायी गयी। मैंने सारी लाज-शरम छोड़कर, सब कुछ खोल-खोलकर बखान दिया। दस रुपये के नोट की बात भी की और पटवारी की बदनियती का भी भंडाफोड कर दिया। विलियम सब कुछ सफा टाल गया। उसने दो-चार ऐसे छोकरो का नाम बताया, जिन्हे मैं जानती

भी न थी। बहन बनाने की बात पर अड़ा रहा। पंचायत फैसला क्या करती। पाप तो मेरे अंदर भरा था। आखिर विलियम के बाप ने कहा, "कुछ भी हो, बंजारी अभी छोकरी है। किसी के बहकावे में आ गयी होगी। जो कुछ हो गया, उसमें उसका कोई दोष नहीं। यदि जात का कोई लड़का उससे ब्याह करने को तैयार नहीं है, तो मैं ब्याह करा देता हूं—विलियम से नहीं, जोसेफ से। आखिर बंजारी मेरी भी तो बेटी है।"

जोसेफ जात का गोंड था। अब क्रिश्ची बन गया था और पास के किसी गाव मे चरच का काम देखता था। मैं नहीं चाहती थी कि जात-बदल करूं। ऐसी जात मे जाऊं, जिससे मैं नफरत करती थी; पर तापे और आवा के आसुओ ने बेजार बना दिया था। गांव का हुक्का-पानी बन्द था। दुःख-सुख का कोई नहीं था। मजूरी मिलना मुश्किल। मालगुजार की नजर मे भी उतर गया था। उसका दुःख मुझसे न देखा गया।

अन्त में उसी दिन आधी बनती चरच के सामने ईशू की मैंने शपथ ली और जोसेफ का हाथ पकड़ा। अपने घर-बार को छोड़ा, जात-पांत को छोड़ा, अब नाम भी मुझे छोडना पड़ा। बंजारी से बदलकर पादरी ने मेरा नाम मिसेज बेंजो जोसेफ रख दिया।

बिलकुल सादे ढग से मेरा ब्याह हो गया। जोसेफ के कमरे मे आ गयी। यह अपने एक रिश्तेदार के यहां ठहरा था। उस गाव में पलभर भी ठहरना मुझे भार लगा। गांव के हर करौंदे की छाया मुझे नागिन-सी लगती थी। हर परजात मे मुझे विलियम की शक्ल दिखाई देती। जोसेफ से मैंने अपने मन की यह कचोट कह दी और दूसरे दिन तिरतिर बेरा होते ही हम दोनों ने गांव छोड़ दिया।

रास्ते में नरवा नाला मिला तो आंखों मे आंसू छलछला आये। इसी पापी नाले ने मुझे जात से छुडवाया और अब गांव-बदल करा रहा है। जोसेफ ने मेरी आंखों मे आंसू देखे, तो छाती से लगा लिया।

नाले के किनारे पहुंची तो पानी में अपनी छाया देखकर घबरा गयी, उसका पानी मैं नही छूना चाहती थी। जोसेफ ने गोद में उठाकर कराया। टीला चढते-चढते सुबह का सूरज उग आया था। उसकी नयी किरणों को मैंने सिर झुकाया और जी पर मनभर का पत्थर

आगे बढ गयी।

फिर मैंने पीछे लौटकर कभी नही देखा।

४

यह नया गाव चेतमा था, मेरे पुराने गाव से कम से कम तिगुना। कच्ची फूस की झोंपडियो के सिवाय इंट की खूबसूरत दो-चार इमारतें भी थीं। इनकी चमक से सारा गाव जगमगाता रहता था। जोसेफ ने मुझे बताया कि ये मिशनरी की इमारतें हैं। एक इनमें अस्पताल है, दूसरी पाठशाला। बांसों के झुरमुट के बीच बने मकान मे पादरी रहता है और उसकी बाजू मे ही बाहर से आये बड़े अफसरों के ठहरने की जगह है। वहीं सामने चरच है, नीले रंग की खासी ऊंची पूरी मीनार जैसी। सारा गाव साफ़-सुथरा था। आसपास जगल थे पर सरई के। करौंदा की छाया कहीं देखने को नही मिली। इसलिए मन यहा रम गया।

हम लोग चरच के घेरे मे ही एक कमरे मे रहते थे। जोसेफ चरच की देखभाल करता था। लोग उसे चौकीदार कहकर पुकारते थे। बड़े अफसरों की सेवा करना उसका काम था। सप्ताह मे एक बार उस चरच में बड़ा मजमा जमता था। विनती और मिन्नतें होती थी। पादरी उपदेश देता था। मैं भी चरच जाती थी, पर वहां अच्छा नही लगता था। जितनी देर वहां रहती, मन कचोटता रहता था। उस बड़ी भारी इमारत मे कहीं कोई देव नही था। दीवारों पर दो-चार फोटो लगी थी, और सामने फांसी जैसे तख्ते पर एक साधू जैसे आदमी की तसवीर लटकती थी। वही पीतल का एक चिह्न चमकता था। कही न कोई कोर थी, न झंडी और न त्रिशूल। हल्दी कूकू किसी को नहीं लगता था। वहां न बाजे बजते और न नाच होता। धीरे-धीरे घंटी थोड़ी देर बजती रही और फिर सब तरफ खामोशी।

चरच के अन्दर सब लोग घुटनो के बल बैठ जाते। पादरी कुछ कहता तो सब उसे दुहराते। बस, आधा घंटे के भीतर सब खतम हो जाता। सब चले जाते और चरच का घेरा फिर सूना का सूना रह जाता।

मेरे गांव जैसी चहल-पहल यहा नही थी। न वह मस्ती और न उमंग ही कहीं मिली; इसलिए बार-बार गांव की याद आ जाती। कंगला का चेहरा मेरी आंखों के सामने झूलने लगता। दिन को भी मैं प्राय. सपने देखा करती। कभी देखती कि बेजर मे बैठा कंगला घास काट रहा है। कभी उसे नरवा के किनारे चुल्लू मे लेकर पानी पीते देखती। कभी वह हंसता दिखता, कभी रोता और कभी सिसकता। सिन्दीराम हल जोतते ही नजर आता था। तापे और आवा के आंसू मुझसे देखे न जाते थे; इसलिए जब वे आंखों के सामने झूलने लगते, तो मैं उठकर खड़ी हो जाती थी। यह सब भूलने की कोशिश करती। झरपन, तिजिया और चेतराम भी भूले-बिसरे नजर आ जाते थे। इनकी याद तभी आती, जब हरपू का मजमा आंखो मे झूल जाता। टिमकी, ढोलक और मादर की आवाज कान मे गूजने लगती। लगता बढ़ई ने टेर लगाई है। गायता ने लादा का हांडा खोल दिया है। दोना लेकर एक के बाद एक सब आते हैं और जी भर पीकर मैदान मे कूद पडते है। झरपन बार-बार पैर फटकारती है, तो उसकी पायल बज उठती है। बीरन ने ढोल पर थाप दी है, तो जोड़े के जोड़े मैदान मे उतरने लगे है। झूलते बास जैसी देह लचकाकर झरपन ने राग आलापी :

ये हे हे, हाय रे हाय

चैतू ने जवाब दिया :

ओ होऽऽ हाय रे हाय

सिन्दीराम अपना बुढ़ापा भूल गया, टिमकी लेकर उचटने लगा। कंगला भला कैसे थमता! उसने तिरछी आंखों से मेरी ओर देखा। मेरी बांह फड़क उठी। पैर मेढक की तरह उचाट भरने लगे। उसकी तिरछी आंखों ने जैसे परदा हटा दिया। दोनों कमर में हाथ डालकर मैदान में उतर पड़े। झरपन देखती रही, सिन्दीराम टिमकी की कमची सम्हालता रहा; मैंने आकाश को मुंह दिखाकर दिल खोल दिया :

हे हे हे ऽऽ हाय रे हाय
मोला मयरी के साघ रे,

लय दे ऽऽ
हीरा रुनझुन बाजे रे !

जो भी वहां खडा था, चुप न रहा। सबके पैर थिरकने लगे। आवा और तापे भी अपना बुढापा बिसर गये। दो टोलियां बन गयीं। एक में सारे आदमी और दूसरी में सब औरतें—बूढ़े-जवान दोनों। बीच मे सिन्दीराम, मुफती और बरजू बाजे-गाजे से डट गये।

कंगला अपने दल का मुखिया बना। मैं अपने दल की। दोनों में होड़ लगी। मांदर मन का हौसला बढाता था, तो ढोल प्रेम की लुकाछिपी को खुलने से रोकता था। कगाली के दल ने राग छेड़ा :

ओ हो ऽऽ हाय रे हाय

जब तक वे राग भरते कि यहा के दल ने हमला बोल दिया,

चुटुक चुटुक तुर चुटकी बाजे,
पैरिन के झकार,
आने गुस्सा झै हावे,
मही लगे हों पार। हो हो हो हाय रे हाय ऽऽऽऽ !

अब कगला चेता .

नहिं चाही ककना बोहटा
तोला, लयदेवो पयरी
हो लयदेवो पयरी
गोर माया के कारन गोरी
सब तो जरथें बैरी ऽऽ, ओ हो हाय रे हाय
सब तो जरथें बैरी।

यह हमारे लिए चुनौती थी। झरपन ने मेरी चिहुंटी ली और गोड़ दबाये। फिर क्या था, बरसात की धार लग गयी :

हे हे हाय रे हाय, हाय रे हाय
कारी पीरी चेरिया पहिने, बीच में पहिने ककना,

दिनभर नजर मे झूलस, रात में आवै सपना,
हे हे रात में आवै सपना।

अब मौका बाजा बजाने वालों का आया। सबने जीभर मजमा जमाने की कोशिश की। हमारे दल की हर लड़की के पर निकल आये थे। हाय छोड़कर सब एक गोल दायरे मे फैल गयीं। आदमियों ने हमारा पीछा किया, तो हमने फिर एक चोट दी :

हे हे ऽऽ हाय रे हाय
नैं तो चाही चुटकी मुदरी, नैं चाही चूरा,
रे नैं चाही चूरा ऽऽऽ,
आने सुख देवे हीरा ऽऽ, तोर हात के टूरा,
रे तोर हात के टूरा ऽऽ !

होडा-होडी के मैदान में कौन जीता, कौन हारा, पता नहीं। पर हमारी यह चुनौती आदमियों को बुरी तरह कचोट गयी। तापे वेजार बुढापे से तंग मैदान छोडकर भाग गया। दो-चार बूढ़ों ने उनका साथ दिया। बाकी जवान बगलें झांकने लगे। उनकी लाज सिन्दीराम ने बचा दी। उसने टिमकी पर चोट पर चोट दी। मारा दल बिखर गया और लहकने लगा। करमा का मजमा लहकी और ददरिया में बदल गया। कंगला ने मेरे पैर को जोर से दबाया। मैं कांख कर रह गयी। बांस की हरी शाखा जैसी डोलने लगी। मेरी खुशी का अन्त नहो। कंगला ने पैर दबाकर प्यार जो जताया था। मैं तो पहले ही उस पर मरती थी। अब बुन्दा को फुन्दा[1] मिली और फुन्दा के भाग शेर हो गये।

इसी बीच गायता अपने बेटे विन्नियम के साथ जलसा देखने चला आया—उसकी शकल नजर आयी, मैं आसमान से नीचे जा गिरी। भूले-बिसरे ज़माने की यह मीठी याद हवा हो गयी।

मैं अपनी परछी में थी। विनियम की याद से सारी देह में आग लग गयी। कलेजे का फोड़ा जैसे करौंदा के कांटे मे चुभ गया। न जाने कब का

१. यह गोंडों की एक प्रेम-कहानी है। कहते हैं, बुन्दा (आदमी) और फुन्दा (औरत) दोनो में लैला-मजनूं जैसा प्यार था। दोनो मुश्किल से मिल पाये थे।

मवाद बाहर बहने लगा। आंखों के सामने अंधेरा छा गया। बरसात की झड़ी लग गयी।

जोसेफ वहां आ गया। उसे आता देखकर मैंने आंचल से आंसू पोंछे, पर मन का बांध एकाएक फूट गया था, एकदम रोकना मुश्किल हो गया। जोसेफ ने मेरे आसू पोंछे। बोला, "रो रही हो ?" अपने पर काबू खो बैठी। सिसककर फूट पड़ी और वही बैठ रही। जोसेफ ने छाती से लगा लिया और सिर पर हाथ फेरा। तरह-तरह की बातें कहीं। बड़ी देर में मैं अपने मन पर काबू कर सकी। आसू रुके तो हिचकी आयी। जोसेफ ने मेरे दर्द पर मरहम लगाया, बोला, "तेरी खुशी मे मेरी जिन्दगी है, रानी ! तू तो मेरी आंख लगी है री। यहां मन न लगे तो तेरे गांव लौट चलें।"

मैं उसके पैरो पर गिर पड़ी, "गांव का नाम न ले, बैरी।"

"अच्छा तो विलियम को···"

विलियम का नाम उसने लिया, तो सारा दुःख काफूर हो गया। गुस्से से मेरा तन-बदन कांपने लगा, "हरामजादे का नाम फिर कभी भूलकर न लेना··" जोसेफ चौंका। उसे गुस्सा नहीं आया। उसने दातों के बीच होंठ दबा हंस दिया। बोला, "अब नही लूंगा।"

मुझे संतोख मिला। बाहर अद्दी तर्राने (धूप तेज होने) लगी। उठकर हम लोग कमरे मे चले गये।

जोसेफ कालपी का रहने वाला था। कालपी मेरे गाव से रण्ड कोस[1] और चैंतमा से दबकणो कोस[2] दूर है। तीन-चार बरस पहले वह कालपी छोड़ चुका है। उसने बताया कि गाव छोडने की भी एक लम्बी कहानी है। उसकी आबा तो तब मर गयी थी जब वह जन्मा था। तापे ने उसी गाव की एक रांड (विधवा) को अपने घर बसा लिया। वह सोधन थी। जन्तर-मन्तर खूब जानती थी। गांवभर उससे घबराता था। चाहे जिस लड़के की जान लेना उसके लिए खेल था। गाव के भीतर पांच-छह लड़के वह चाट चुकी थी। खैर तो यह थी कि गांव का ओझा होशियार था। ऐसे-ऐसे मंत्र पढ़ता कि वह चुड़ैल छटपटाने लगती थी। जोसेफ की दो बहनें और थीं। दोनो उससे

१. चार मील। २. बीस मील।

उमर में सयानी थी। एक का ब्याह उसी गांव में दो साल पहले हो गया, अब वह दो जुडवां बच्चों की मां है। दूसरी बहन का किस्सा मेरे जैसा है। एक परजात से उसने भी नाता जोड़ लिया था, सो आज तक पाप के फल भुगत रही है। एक क्रिश्चियन से उसने ब्याह किया है और पास के किसी शहर मे रहती है। ब्याह के बाद उसने गांव को काई की तरह छोड़ दिया। कहते है तब से आज तक उसने फिर लौटकर नही देखा।

दूसरी लडकी के ब्याह के दो दिन बाद जोसेफ की यह सौतेली मां भी मर गयी। वह हीकुर कंडा[1] बीनने जंगल गयी थी। वहीं बाघ ने उसे पकड लिया और साफ कर गया। वह निपूती थी, सो जोसेफ का बाप तीसरी मिहरिया ले आया। वह बड़ी कुलच्छनी निकली। घर मे उसके पांव पडते ही जोसेफ का बाप चल बसा। रात को एकाएक चक्कर आया और भुनसारे होते-होते वह ठंडा भी पड गया। गांव के लोगों का कहना है कि उसकी रांड मिहरिया उसे खा गयी। मरने के बाद उसने उसे भी बुला लिया। इसके पहले वह कई बार उसे फेर में डाल चुकी थी। एक बार चौकी के पास वह चक्कर खाकर गिर पड़ा था। एक बार खेत की मेढ से लुढक गया था। उसके घर के सामने बरगद का पेड़ था। गांववाले कहते थे कि मरकर वह बरम बनी है, उसी बरगद में रहती है।

जो भी हो, घर में जोसेफ अकेला ही रह गया। तब उसका नाम जरपन भोई था। गांव के सयाने उसे जरपू कहते थे। बाप बनी-मजूरी कर पेट भरता रहा। बेवर उसके पास थी नही। लांदा बिना वह पलभर नहीं रह सकता था। यहां-वहां का करजा कर वह गुजर चलाता रहा। मरने के बाद वह साहूकार का करजा छोड़ गया था। उसकी एक कच्ची झोंपडी थी, सो भी रहन थी। करज के बदले जोसेफ ने यही झोंपडी साहूकार को दे दी। कहते हैं यह करजा जोसेफ के खानदान में पांच-छह पीढियों से चला आ रहा है। हर पीढी वह पट जाता है, पर साहूकार का खाता कभी नहीं कटता। मेरे यहां भी यही हाल था। मेरे ताप ने कभी करजा नही लिया, पर साहूकार के खाते में एक कोरी कल्दार नाम पडे हैं। कहता है, मेरे आजा ने कभी लिये रहे हैं।

[1] गोबर के कडे।

सब कुछ लुटाकर जरपू बनी-मजूरी की तलाश मे चैंताम चला आया। यहां किसी ने उसे आसरा न दिया। एक झाड़ के नीचे डकारी[1] डालकर पड़ा रहा। कही मजूरी न मिली तो भूखा कब तक मरता, भांडी में जीने लगा[2]। एक दिन पादरी से उसकी भेंट हो गयी। पादरी ने उसे समझाया कि भांडी की जिन्दगी से मरना भला है। उसने जरपू की पीठ ठोंकी। बोला, "अभी तो जवान पट्ठा है रे, भांडी में कब तक ज़िन्दगी गुज़ारेगा। तुझे काम नहीं मिलता तो चल हमारे यहां।" जरपू क्या करता, वह पादरी के यहां काम करने लगा। उसने रहने को खुली खोली दी, पहनने को कपड़े और दो जून का खाना। एक दिन पादरी बोला, "तुम्हारा धर्म कैसा है? तुम्हारे लोग कैसे हैं? तुझ जैसा हट्टा-कट्टा आदमी भूखों मर जाय और तेरी जाति वालों के कान में जू तक न रेंगे। यदि हमारे धर्म मे तू आ जाय, तो जिन्दगी भर आराम से खायेगा। जहां तेरा पसीना बहेगा, हम अपना खून बहा देंगे।" जरपू ने यहां कई लोगों को देखा था, कितनी चैन की ज़िन्दगी वे गुजार रहे थे। इस चमक-दमक मे वह आ गया और एक दिन जरपू से जोसेफ बन गया। जोसेफ बने उसे तीन-चार बरस हो चुके है। अब वह एकदम बदल गया है। गोंडो जैसा न उसका रहन-महन है और न खाना-पीना। उतनी अच्छी गोंडी भी वह नहीं बोलता। उसकी बोली मे अकडपन आ गया है और बिलायती भी वह थोडी सीख गया है। बड़े-बड़े बाबुओं का साथ पडा है, सो चंट भी हो गया है। उसे देखकर मैं यह सोच भी नहीं सकती थी कि वह कभी गोंड भी रहा है। बातें करता है तो महुआ के बूंद-सी उसमे लुमराई (चालाकी) टपकती है।

जोसेफ की बीती कहानी सुनकर भरोसे पर पानी फिर गया। बचपन में तापे और आवा की छाया रही। समय ऐसा रहा कि कभी घी घना, कभी मुट्ठी भर चना तो कभी वह भी नही, क्योंकि—

जमत के गुनहरी, बाढत के भौड,
पक गये तो किसान, नातर गोड के गोंड।

'गोड के गोंड' रहने के दिन ज्यादा देखने को मिलने, पर मैंने कभी

१. रूखा। २ भीख मागकर खाना; यह एक विशेष प्रकार की भीख होती है, जिसमे भिखारी से थोडा काम भी कराया जाता है।

दुःख नहीं देखा। भूखे रहकर भी आवा और तापे ने मेरा पेट भरा है। चिन्ता-फिकर से दूर अलमस्ती की ज़िन्दगी मैंने काटी है। भाग का फेर कि यही मस्ती बबूल का कांटा बनी। बेमर्जी से सब कुछ चौकड़े की तरह छोड़कर यहां आ गयी; करम जो फूटे थे। न सास मिली और न ससुर। अकेला घर था और हम दोनों। आसपास न टूरा थे और न टेरियां। बाड़े में तीन-चार लोग और रहते थे। दो-एक के यहां जवान लड़के और लड़कियां तो थी, पर बच्चा किसी के यहां नही था।

घर मे दिनभर अकेले बड़ा खराब लगता। यहां कोई काम-धाम था नहीं। रोटी बनाना वह भी एकदम बदली। वहां तो भुनसारे से मुरगुल[1] मे मका खाकर चल देती थी। मरँया[2] मे पेज साथ देती, तो चर्कौड़ा, पथरचटा, कजरा, खटुआ और कचनार के पत्ते बियारी[3] में। यहां सुबह हुई कि चाय चाहिए, सिर पर सूरज आते तक खाना। चांवर, कोदों और कुटकी यहां कमी नही थी। गेहूं भी मिलता, दाल तो खूब थी और भाजी के सिवाय, भटा, भेडा, आलू, लहसन और प्याज तरकारी के नाम मिलते थे। पहले तो खाना बनाने में ही मुझे तकलीफ हुई। रोटी पोना मुझे आता नही था। हां, चावल की खिचडी अच्छी बना लेती थी। जोसेफ ने उसकी तारीफ भी की थी। रोटी बनाना सिखाने मे मेरी मदद ग्रेसरी ने की।

ग्रेसरी मेरी पडोसिन की लडकी थी। उसकी मां का नाम था मरियम, बाप का ठिकाना नही था। कोई कहता — उसका बाप अभी ज़िन्दा है, उसने दूसरी मिहरिया कर ली है। कोई कहता— बाप को मरे ज़माना बीत गया। ग्रेसरी ने कभी इस बारे में कोई चर्चा नहीं की। मैंने भी उससे नहीं पूछा। पूछती भी कैसे? मरियम मिशनरी के अस्पताल मे काम करती थी। रोज उजले कपड़े पहनकर जाती थी। बीमारों की सेवा करना वह अपना धरम बताती थी। ग्रेसरी गाव के स्कूल मे पढ़ती थी। कहती थी—इस साल स्कूल की सारी पढाई खतम कर देगी। थी वह बड़ी बुद्धिमान लड़की। बातें करती ज़बान कैंची-सी चलती। बातों में इतने बड़े-बड़े शब्द बोलती कि मैं सुनकर हक्का-बक्का हो जाती। ज़रा-सा दिमाग, उसमे इतनी बड़ी बातें। ज़रूर सेरमाई का वरदान होगा। मैं मैंरव उसका मुंह ताकती

१. सुबह का खाना। २. दोपहर का खाना। ३. रात का खाना।

रहती। उसकी कई बातें तो मेरी छोटी-सी खोपडी में घुसती भी न थी। पर ग्रेसरी लडकी भली थी। उसका गला मीठा था। वह अकेले में कई किस्से सुनाती। ये किस्से प्रेम के होते थे। मुझे लगता कि उसने जो कुछ पढा है, उसमें प्रेम के सिवाय कुछ है ही नही। उसकी बातें बडी प्यारी लगती थी। मेरी दुःख भरी जिन्दगी में ये कथा-कहानियां मरहम का काम देती थीं।

ग्रेसरी ने मुझे धोती पहनना भी सिखाया। धोती के ऊपर पोलका पहनना जरूरी हो गया। अपने गांव में तो पोलके की उतनी फिकर मुझे नहीं रहती थी। था भी केवल एक ही, वह भी फटा, वह भी मालगुजार की बिटिया का दिया। जोसेफ ने यहां मुझे दो पोलके ले दिये। दो धोती भी थीं—बडी खूबसूरत, बडी चटकदार। उन्हें पहनकर जब कंघी करती, तो मैं अपने आपको भी सुन्दर लगने लगती थी। ग्रेसरी ने मुझे बीताभर की कंघी लाकर दी थी। वह लकडी की छोटी कंघियो से ज्यादा सरल थी।

रोज संझा को जोसेफ मुझे घुमाने ले जाता। गांवभर के सब घरों और झोंपडियों को वह दिखाता। उनके बारे मे बड़ी-बडी बातें करता। अपने पादरी की वह जी खोलकर तारीफ करता था। कहता, "आदमी नही देवता है। उसने मुझे दहका (कीचड) से बचाया है। अब तक कब का राख बन गया होता। ईसू उसे लम्बी उमर दे।"

इस नयी जगह मे मेरा मन बराबर नही रम पाया। जो जिन्दगी मैं बिता चुकी थी, उसमें इसमें बडा अतर था। यहां तो जैसे किसी ने आसमान से जमीन पर फेंक दिया था। यहां की हर चाल अजीब थी। यहां के हर आचल का छोर निराला था। जिन्दगी यहा एक नया तूफान थी, जो अपने मे लपेटकर मुझे एक ओर घिस रही थी, तो दूसरी ओर उबार रही थी। बंजारी घिस रही थी और मिसेज बेंजो जोसेफ उबर रही थी।

५

वह मगलवार था। सूरज सिर से उतरा तो जोसेफ ने चाय पी। वह

एक-एक चुस्की लेता जाता था और मेरी ओर एकटक देख रहा था। मुझे शरम लगती। बार-बार आंख उससे मिलती पर मैं नीचे झुका लेती। पर उसकी आंखों को न जाने क्या हो गया था। मुंह से बातें करे तो हरज नहीं, पर अनबोले टकटकी लगाये आंख गड़ाये तो न जाने कैसा लगता है। कभी शरम आती, कभी गुस्सा चढ़ता था। काफी देर उसके नखरे देखती रही, न देखा गया तो बोली, "आंख क्यों फोड़ रहा है ? क्या कभी देखा नहीं !" वह शरारत भरी हंसी हंसा। बोला, "तेरी लौकी जैसी फूली गोरी देह देख रहा हूं। देखा तो है, पर आंखें निगोडी नहीं मानती। तू ही बता क्या करूं।"

अपनी तारीफ भला किसे बुरी लगी है। सुनकर मेरा मन फूल गया। मन की छाया आंखों पर उतरी, उतरकर होंठों पर आ समायी। यदि बत्तीसी साथ न देती तो पहाड़ी नाले-सी फूट पड़ती। होंठों को दांतों तले दबाकर सारी मुसकान पी गयी। बोली, "क्यों हंसी उड़ाता है ? लौकी से बराबरी करते लाज नहीं आती ? जानती हूं, रंग में कोयला हूं; पर यह तो तू भी देखता है—और क्या तब नहीं देखा था ?"

मेरी आंखें चढ़ गयी थीं। उसने यह जान लिया था। बोला, "बिलकुल हिरनी है। कुछ नहीं समझती···"

"क्या तेरे जैसी स्यार बनूं"—मैंने भी वार करने में कसर न की। वह बिगड़ उठा। खटिया से उठते हुए बोला, "स्यार कहती है निगोड़ी। अपने मटका जैसे पेट से पूछ। कह तो विलियम को बुला दूं। सपने में आता होगा।"

बात कहा से कहां आ गयी। जिस विलियम को बिसारने की कोशिश करती हूं, वही इस घाट उस घाट उतर आता है। देहभर में आग लग गयी। मन हुआ, कह दूं— यह तो तू जानता था, फिर पानी पीने क्यों उतरा, पर बात बढ जाती, सब कुछ पीकर रह गयी। आंचल का कोना आंखों में दबा लिया और उठकर वहा से चली गयी। रसुइयां की खिडकी के पास खड़ी होकर फूट पड़ी। बड़ी देर तक रोती रही। जोसेफ उठकर कहीं चला गया।

जब आंसू रुके, तो बीती बातों पर नजर फेंकी। सोचती रही—वह

आज कैसे बिगड़ गया। कभी उसने तून्ता नही किया। बहुत सोचा पर कारण समझ मे नही आया। मैंने चिहुंटी भी न ली थी, देह क्यों उचटी।

बाहर से किसी की आवाज आयी। मुंह धोकर देखा, तो ग्रेसरी खड़ी थी। आते ही मुझसे लिपट गयी। मेरे हाथ पकड़कर उचटने लगी। मैंने पूछा, "किस भगवान के हाथ गाल पर लगे हैं ?"

कनेर के फूल की लाली उसके गाल पर बिखर गई। बोली, "हटो भी, तुम्हें तो खूब मजाक आते है।" वह मेरा हाथ पकड़कर झूलने लगी, बोली, "चलो न, भाभी !" मैंने पूछा, "कहां ?" तो अजीब नाक-भौंह मटकाकर कहने लगी, "नही जानती ? आज बजार है यहां का। खिरका में भरता है।" "बजार है ?" मैंने अचरज से पूछा, तो हाथ छोड़कर वह चिल्लायी, "हां···आ···ती···हूं, तैयार···भा···भी···"

वह दौडती अपने घर भाग गयी। बाजार जाने का मेरा मन हो गया। सोचा, जरा जी बदल जायेगा और गाव का कोई मिल गया तो आबा और ताये का हाल पता लग जायेगा। मैं तुरन्त तैयार हो गयी। ग्रेसरी को आते देर न लगी। जाने लगी, तो देखा टेंट खाली थी। बाजार में कुछ मिल जाय, ग्रेसरी ने एक रुपया उधार दे दिया, उलझन सुलझ गयी।

बाजार भारी था। पचास-साठ दूकानें लगी थी, हिंडोला भी झूलता था। बचपन में महुआ और आम की डगालो मे खूब झूली हूं। हिंडोला देखकर जी उचाट भरने लगा, पर ग्रेसरी ने रोक दिया। हंसते हुए बोली, "ऐसे मे नही झूलते, झूलने मे खतरा है।" वह मुझे खीचकर आगे ले गयी।

कोने मे भीड लगी थी। बढकर देखा, एक मदारी दो बन्दरो को नचा रहा था। मदारी हुक्म देता तो बन्दर तुरन्त हुक्म बजाते। उसने डंडे पर चोट की, कमर से मुरली निकाली और उसको बजाने लगा, तो दोनो बन्दर झूलने लगे। एक-दूसरे से लिपट गये। मदारी के साथ एक औरत थी। उसके हाथ मे डुगडुगी थी। उसने वह जोर से पीटी। कमर मे लचक देकर दोनों गोडों के बल झूलती हुई वह गाने लगी : आभा के खादी हो हो···

एक बन्दर नीचे से उचका और उसके दाहिने कन्धे पर बैठ गया। दूसरा जमीन पर उसकी पिन्डरी पकड़कर खड़ा हो गया। मदारी ने मुरली की तान छेडी। औरत ने गीत को धकियाया :

आभा के खांदी बेंदरा झूली जाय,
जानी सूनी के लकड़ी का बरभूली जाय।
सहज सीकना सुलंगी घउरा,
बाट छोड़ी देरे डौकी खेलाऊं भौरा।[1]

गीत सुनकर आंखें अपने आप भर आयीं। उसका तमाशा चलता रहा, पर मेरा मन बिगड़ गया। ग्रेसरी रुकना चाहती थी। उसने मुझसे चिरौरी की, पर मैं न रुकी, आगे बढ गयी। ग्रेसरी को भी अपना मजा किरकिरा करना पडा। गीत ने मेरे सोये मन को जगा दिया था। गांव की सारी स्मृतियां उडते बादल-सी आंखों के सामने झूल रही थीं। मुझे लगा जैसे यह गीत मेरा कंगला गा रहा है। वह सिसक रहा है, हिचकियां भर रहा है। मेरी बांहें पकड़कर मस्ती से झूल रहा है। मैंने उसका हाथ छुड़ा दिया, तो वह दूर जा गिरा। उसके सिर से पत्थर आ टकराया, वह लहूलुहान हो गया, पर हंसता रहा और चौरी झाड़ की याद दिलाता रहा।

ग्रेसरी ने मुझे धक्का दिया, बोली, "आंखें गीली क्यों करती है, भाभी! भइया की याद यहां भी···"

सामने गुम्मा, झरपन और सरपा खड़ी थी। मुझे देखकर दौड़ पड़ीं। लंगडी सरपा उचाट भरने में सबसे बाजी मार ले गयी। वह मुझसे लिपटकर भेंट करने लगी। जिन आंसुओ को मैंने जबरन रोका था, उन्हें बहने का मौका मिल गया। मैंने खूब खुलकर भेंट की, ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाकर रो। ।, एक के बाद एक और इस तरह तीनों से भेंट हुई। जब रोकर सब थक गयी तो खिलखिलाकर हंस पड़ीं। जहर भूल गया था। धतूरे का फूल हवा की लहरो मे झूम रहा था।

सब वहीं बैठ गयीं। ग्रेसरी बराबर मेरा साथ दे रही थी। सिन्दीराम, गुम्मा और मुफ्ती भी पीछे से टूट पड़े। सिन्दीराम ने सबसे पहले हाथ मेरी साड़ी पर लगाया। उसका हाथ फिसल गया, बोला, "हजारों की होगी।" ग्रेसरी ने हंस दिया। सिन्दी को शायद यह हंसना अच्छा न लगा, उसने मुंह

१. आम पर जैसे बन्दर झोंका लेते हैं, उसी तरह जान-बूझकर भी तू प्रेम के भुलावे में भूल रही है। इतने दिन तू मुझे भूल गयी, चौरी बृक्ष पास है, वह सब जानता है।

बना लिया था। मैं ताड़ गयी, बोली, "मेरी सहेली है, बड़ी नटखट। अंगरेजी सरपट बोलती है।" सब लोगों ने उसे आंख फाड़कर देखा। वह पीले रग की फूल वाली फिराक पहने थी। मैंने कहा, "काका, यह सिलक की साडी है, सिर्फ दस रुपल्ली की।" 'दस कल्दार की !' उसने अचरज से दुहराया, "इनके दर्शन कहा होते है बजारी, तू रुपल्ली कहती है।"

महीनों बाद बजारी नाम सुना था, खुशी का ठिकाना नही रहा। मैंने कहा, "काका, फिर तो कह।" उसने पूछा, "क्या, बेटी ?" मैं बोली, "वही जो अभी कहा था, ब···जा···"

वह खूब हसा। इतना कि पेट फूलने लगा। वह हंसता ही रहा और झरपन तथा सरपा ने खिलखिलाते हुए जोर से कहा, 'बं···जा···री !' मैं दोनो के गले से झूम गयी।

बाद मे मैंने कुशल-क्षेम पूछी। गांव भर के आदमियों की याद की। झरपन ने बताया, आबा और तापे मेरी याद में दिन-रात नदिया बहाते रहते है। आबा की आखें कमजोर पड गई है। तापे का भगवान मालिक है। कमर टूट गयी है उसकी। सरपा ने बताया कि आजकल झरपन की चकाचक है। कगला की नजरें उस पर सीधी है। झरपन ने मेरे गाल पर चिहुंटी ली, इशारा किया, दो कदम बाजू ले गयी। उसने धीरे से कान मे बताया कि कगला अब भी मेरी याद नही भूला। दिन भर रोता रहता है। कहता है—बजारी ने दगा किया है, तो जिन्दगी क्वांरी बिता दूंगा। यहा गुम्मा ने एक नयी बात बतायी, सुनकर कलेजा फट गया। उसने बताया कि विलियम टिमकी के पीछे पड़ा है। टिमकी उसके प्यार मे अधी हो गयी है, गाव भर उसे समझाता है, पर वह नही मानती। मैं गुम्मा के गले मे लिपट गयी और रोने लगी—टिमकी को बचा लो दीदी, बचा लो टिमकी को। विलियम कसाई है, उसे कच्चा खा जायेगा। न माने तो उसे मुलदेवा के कुएं में ढकेल देना—पर विलियम···बचा लो, दीदी !

सिन्दीराम ने बढ़कर मुझे कलेजे से लगा लिया। मेरे सिर पर हाथ फेरा, मन को शान्ति मिली। मुझे इन्होने ठुकराया नही, क्या यही कम है। उसने बचन दिया कि इसी चैत मे टिमकी को चैतू के गले लगा देगा। उसने मेरे हालचाल पूछे। जोसेफ के बारे मे बातें की। वह खुश था; मैं खुशी

हूं, यहां सारा सुख सिमटकर आ गया है। वह मेरे चारों ओर चक्कर काटता है और मैं बीच में रानी बनकर बैठी हूं। मन में जो ज्वाला सुलग रही थी, वह किसी ने न देखी। उसमें आग लग जाय, वह जल उठे तो भी खैर है, पर वह न बुझती, न जलती, केवल धुए की तरह सुलगती है। इस सुलगन में कितना दम घुट रहा है, यह किसे मालूम। दर्द उसे ही होता है जिसे कांटा गडता है। यह भी इस दुनिया का एक चक्कर है—वह समझती है मैं स्वर्ग की रानी हूं, यहां वैतरनी पार उतरना कठिन हो रहा।

बाजार गयी थी, मन हलका हो जाय, भारी मन लेकर लौटी। मन भर का पत्थर जैसे किसी ने छाती पर घर दिया था। रात को चुपचाप सो गयी। जोसेफ को मनाने का भी जी नही हुआ। वह भी मुझसे नहो बोला। एक खूंट में लुढ़क गया, सकारे पता लगा कि उसने कल ज्यादा चढ़ा ली थी।

जोसेफ का हाथ गहे अभी तीन-चार महीने ही हुए थे। इस छोटे समय मे ही मैं काफी बदल गयी थी। बदलाहट की चाल तेज़ थी। जो आज थी सो कल न रही, जो कल बनी सो परसों न थी। सुबह का हर नया सूरज मुझे एक नयी किरण दे जाता था। यह किरण कभी एक नयी गरमी सारी देह में दे जाती। अधपके महुए की शराब की पहली बूंद जैसी मादकता अंग-अंग में भर जाती, तो कभी पीड़ा, क्रोध और घृणा से मन बिगड़ जाता। पेट में जैसे शूल उठता, गले मे कोई भारी गोला अड़ जाता। आंखों के सामने अंधेरा और सारे शरीर में सुनसुनी। जिन्दगी से तब मौत अधिक सुन्दर दिखती। यह सब क्यों कब और कैसे होता, मैं नहीं बता सकती। जितना खुद अनुभव करती थी, काश, उतना प्रकट कर सकती!

चरच के खुले मैदान के सामने मैं टहल रही थी। घर मे अच्छा नहीं लगा, सो बाहर निकल आयी। जोसेफ चरच के पादरी के साथ किसी दूसरे गाव गया था। कहता था—साहब दौरे पर जा रहे हैं, उनके साथ रहूंगा। पादरी अकसर आसपास के गांव जाता रहता था। वहां रहने वाले क्रिश्चियनों के सुख-दुःख की जानकारी करता था। कितने नये इस जमात में मिले, इसकी पूछताछ करता था। खुद उपदेश देता और अपनी बड़ी-बड़ी बातों से देहातियों को चकरा देता। जो काम दूसरे ईसाई महीनों मे न कर पाते,

पादरी पलभर मे हल कर देता। जोसेफ पादरी के साथ प्राय: हमेशा आता था। लौटकर आता तो उसकी तारीफ के लम्बे-लम्बे पुल बांधता। उसकी बड़ाई करते कभी तो सारी रात बिता देता था।

आज भुनसारे ही जोसेफ गया था। कल सूरज डूबे तक लौटने का वादा कर गया था। आज की रात अकेले कैसे काटूंगी, यही उलझन थी। अभी तक ग्रेसरी मेरा साथ देती थी। जब जोसेफ घर न रहता, ग्रेसरी मेरे घर ही सोती थी। पर आज वह भी नही है। कहती थी—स्कूल की पिकनिक में जा रही हूं। जंगलो मे आग जलाकर सब लड़के-लड़किया नाच-गाकर रात बितायेंगे। खूब धूम-धड़ाका होगा, खूब मजा आयेगा।

बाहर मैदान मे घूमती मैं जाने क्या-क्या सोच रही थी। सामने सरई के जगलो को देखती, तो देखती रहती। आखो के सामने न जाने कितने दृश्य झूलते, बनते और बिगड़ते। घूमते-घूमते सरसो-सी फूली और उजली दोपहरिया ढलकर स्याह हो गयी। पक्षियों के झुड के झुड आये, मेरे सिर से उडकर चले गये। कुछ चरच के घेरे मे लगे झाड़ों की डालों पर चहचहाने लगे। एकाएक न जाने किस जमाने की याद आ गयी।

सामने गगासागर का बाघ गेहूं की पकी बालियों से लदा था। हवा का झोंका उस पर से जब गुजरता, तो समुद्र की तरह सारे खेत मे ज्वार-सा उठ जाता। लगता किसी ने सोते खेत को जगा दिया है और उस पर पड़ी सोने की चादर हिला दी है। मेरा कलेजा कसक उठा। मैं कराह उठी। मैंने खेत के चारों ओर नजर डाली—झुड के झुड औरत और मरद दिखाई दिये, पर आखो की प्यास नहीं बुझी।

चैत की धूप खेत मे अचेत पड़ी सो रही थी। हंसिया की पैनी धार गेहूं के पौधो को जमीन पर सुला रही थी। मैं भी एक हाथ से पौधो को थामती, दूसरे हाथ की हंसिया कसाई की तरह उन पौधो पर चला देती। गीतों की धुन से सारा खेत गूज उठता। एक गीत खतम होता, तो कोई खड़ा होकर दूसरा शुरू कर देता। गीतों का साथ मेरा कठ बराबर दे रहा था, पर नजर काबू के बाहर थी। आखें जाने किसे ढूढती थी। खेत की दूसरी बाजू वह पसीने मे लथपथ फसल काट रहा था। सब गा रहे थे पर वह चुप था। मैं भला यह कैसे सहन करती। वह गीतो के साथ विद्रोह जो कर रहा था। मैंने मिट्टी

का एक ढेला उठाकर उसकी ओर फेंका और फिर अपनी कमर पर लचक देकर हवा के साथ झूलने लगी। अबकी बार उसका मन डोला। भर्राई आवाज़ मे उसने ऐसी तान छेड़ी कि तीर मेरे कलेजे के पार उतर गया। गीतों की अदला-बदली देर तक चली, चलती रहती, यदि सामने से मालिक आता दिखाई न देता। उसे देखकर मैं बैठ गयी, सब बैठ गये थे। अपने-अपने काम मे ऐसे जुट गये थे, जैसे कुछ हुआ ही नहीं। मेरा मन हाथ के बाहर हो गया था। मन न लगा, तो फसल काटने की दिशा ही बदल दी। उसकी ओर बढ़ी, जब पास आ गयी तो मैंने पूछा, "तुझे तो खूब लहकी आती है, रे!"

"क्यों नहीं···" खुशी से उसने कहा, "तेरी सूरत देखकर कौन न गा उठेगा।"

"सच!" खरगोश के बच्चे की तरह मैं उचटी, "मेरी सूरत पसन्द है न?"

उत्तर में मुह बनाकर वह ऐसा हंसा कि उसकी हंसी मेरे कलेजे में गड़ गयी। मैं एक हाथ आगे सरकी, बोली, "तेरा नाम?"

"कंगला माझी।"

"बाप-महतारी कंगाल है।" मैंने शरारत की। उसने मेरी नाक मसकी, बोला, "पर बेटा नही···तेरा नाम?"

"बंजारी!" मैंने लपककर जवाब दिया, फिर बोली, "पसन्द है?"

"खूब, बंजर सही, बेवर की तरह खुरपकर खूब उपजाऊ बना दूगा।"

उसका मजाक सुनकर दग रह गयी। दिखने में तो गोबर गनेश, बातों में टिड्डी।

उसने फिर मुह उघारा, "कहां रहती है?"

मैंने तपाक से जवाब दिया, "वहीं जहां तू रहता है।"

"अच्छा!" अचरज से वह बोल उठा, "किसकी लड़की है?"

"भोंगा मेरा बाप है।"

"नुक्कड़वाला?"

"हां, वही रे, जिसे मुंह दिखाये बिना गाव मे घुसना हराम है।" मैंने बड़ी खुशी-खुशी जवाब दिया, फिर बोली, "तू कहा?"

"नुक्कड में।" उसने कहा, "जिसे मुंह दिखाये बिना गांव से जाना हराम है।"

मैंने थोडा पास आकर कहा, "देखती तो तुझे रोज़ हूं, रे ! हां, यह तो बता, मिहरिया है ?"

उसने मेरा जूड़ा पकड़कर घुमा दिया। मैं कांख उठी। बोला, "देखा नही, अभी ढेला उठाकर मारा था उस चुलबुली मिहरिया ने।" मैं शरम से गेहूं हो गयी। शरारत भरी आंखें नीचे झुक गयी, बोली, "देख लेगी तो सिर के बाल न बचेंगे। परायी लड़की से आखें लड़ाता है ?"

वह मेरे और करीब आ गया। बोला, "देख लेने दे, तेरी बला से !" मैंने एक चुटकी ली तो वह उचटकर एक कदम दूर गिरा। मैंने फिर पूछा, "सच बता रे, मिहरिया है ?"

"कहा तो है, हां ! अभी मिट्टी का ढेला मार रही थी। तूने नहीं देखा?"

मेरे पैर अपने आप उचाट भरने लगे। हंसिया छोड़कर भागी। उसे कई दिनों से बराबर देख रही थी, पर बात करने का मौका नहीं मिला था। आज एकाएक वह मिला, तो मेरा मनोरथ पूरा होने की खुशी में फूला था।

मैं आंख मूदकर भाग रही थी। एक ढेले से ठुबटा लगा और नीचे गिर पड़ी। सब काम छोडकर मेरी ओर दौड़े। पाव से खून निकल रहा था। उसने सिर से पगिया फाड़कर बाध दी। दोनों हाथों से उठाकर मेढ तक ले गया। मेढ पर उसने उतारा तो लगा जैसे किसी ने आसमान से नीचे फेंक दिया है। मन कहता था, ज़िन्दगी भर उन हथेलियों पर नाचूं। कितना…

दो औरतों ने चरच के फाटक खोले। चरऱ्चूं की आवाज़ हुई। भूली-बिसरी ये स्मृतियां हवा मे काफूर हो गयी। न जाने कहां उड़ गयी थी। यही तो वह दिन था, जब सबसे पहली बार मैंने उसका परिचय पाया था। फिर वह हरपू में मिला, नाच में मिला और न जाने यह पहली मुलाकात… हाय खाकर रह गयी। आंचल से मैंने आखें पोंछी।

औरतें मेरी ओर बढ़ी आ रही थीं। दोनों दूध से धुले सफेद कपड़े पहने थी। उनकी पहनावट एकदम निराली थी। मुह और हाथ की हथेलियों के सिवाय कुछ नही दिखता था। सारा बदन कपड़ों से ढका था। गले में काली गुरियों की माला लटक रही थी। कमर के पास सफ़ेद वर्दी पर एक ढीला-

ता काला पट्टा बंधा था। छाती के सामने पीतल की मूरत झूलती थी। वह ईसा भगवान की तसवीर थी।

मेरे पास आकर एक ने मेरी पीठ पर थपकी दी, बोली, "अकेली क्या कर रही हो? वह कहां है?"

"दौरे पर गया है। काम नहीं था, घूम रही हूं।" मैंने जवाब दिया।

दूसरी बोली, "चलो, तुम्हारे घर चलें।"

यह तो मैं चाहती ही थी। सूने घर में अकेले जाने का मन नहीं हो रहा था। साथ मिला तो खुशी-खुशी चली गयी। परछी में मैंने एक पट्टी बिछा दी। दोनों उस पर बैठ गयीं। मेरा हाथ पकडकर एक ने बैठा दिया। मैंने कहा, "चाय बना लाऊं।" दोनों ने इनकार कर दिया। दूसरी जो ऊंचाई में बड़ी थी, बोली, "फिर कभी पी लेंगे। जोसेफ को आने दो। हमे पता लगा था तुम आयी हो। तुम्हारे स्वभाव की तारीफ भी सुनी थी। काफी दिनों से हम तुम्हारे पास आना चाहते थे, पर समय न मिला—आज आ सके है।"

पहली बोली, "बड़ी होशियार दिखती हो—यहां आकर तुमने अच्छा किया। उस जंगल में पडी सड़ जाती।"

दूसरी ने कमर में हाथ ले जाकर एक थैली निकाली। उसमे कुछ कागजात निकाले। एक कागज उसने पढकर सुनाया। क्या पढा था, मुझे पूरा याद नहीं, पर था ईसा भगवान के बारे में। पहली ने मेरी पीठ पर हाथ फेरा, बोली, "जिन्दगी जीने के लिए है बेजा, एक दिन हर आदमी ईसू की गोद में जाता है। जब तक सांस है, रस पी लो—आत्मा और दुलहन कहती है, 'आ' और जो प्यासा हो, वह आवे; और जीवन का जल खुलकर ले। फिर पछताना होगा बजा।" उसने एक गुटका जैसी छोटी-सी किताब मुझे निकालकर दी। ऐसी किताब मेरे गांव के पंडितजी के पास थी। कहते थे—इसमे रामनाम लिखा है। मैंने सोचा, यह वही गुटका होगा। मैंने उसके पन्ने पलटाये। उसमे एक रंगीन फोटू थी, ईसू भगवान् की। उसमे क्या लिखा है, मैं अपढ़-गवार क्या जानू।

दूसरी मेम ने कहा, "बड़ी लगनशील हो। रोज पढ़ा करो। इसमें यहोवा और ईसू के उपदेश लिखे है।"

"कौन यहोवा?" मैंने पूछा। इतने दिन मुझे आए हो गये, पर मैंने

यहोवा का नाम नही सुना था। सिर्फ ईशू मसीह का नाम जानती थी। उसकी शक्ल पहचानने लगी थी।

पहली बोली, "यहोवा अपना सबसे बडा भगवान है।"

"बडा महादेव से भी बड़ा ?" मैंने पूछा।

वह बोली, "कौन महादेव ? वह भी कोई देवता है ? पत्थर में भला देव रहता है ? ये जगली जाने क्या-क्या पूजते है। हर झाड़ को देव—हर पत्थर को भगवान !"

दूसरी बोली, "हा, वेंजो, उससे भी बडा, दुनिया भर मे बड़ा, उससे बड़ा कही कोई नही।"

मैंने दोनो हाथ जोडकर सिर झुका दिया, बोली, "धन्य हैं यहोवा देव को, तुम उसकी मूरत ला देना, मैं रोज पूजा करूगी।"

दोनो औरतें खूब हसी। एक बोली, "पगली कही की, मूरत कहा की ? यह तो हर जगह है, हर रूप मे है। एक रूप हो तो मूरत बनायी जाय।"

मैंने कहा, "हमारा महादेव भी ऐसा ही है मेम साहब, पर उसकी मूरत है।"

"होगी !" एक बोली, "सब ढोंग है। उन जगली लोगों ने तेरा दिमाग खराब कर दिया है। वह भूल जा। हम तुझे ठीक रास्ता बतायेंगे। यहा सब तरफ पुण्य है, पाप कही नही। सब तरफ सुख और आराम है, दुख कहीं नही।"

दूसरी ने कहा, "देख मिसेज़ वेंजो, तेरा मन न माने तो इसी किताब को यहोवा और ईशू समझकर पूजा कर। धीरे-धीरे तू अपने आप सब कुछ समझ जायेगी।"

"यह ठीक है।" मैंने खुश होकर कहा। मैंने फिर पूछा, "भोग क्या चढाऊगी, मुर्गी या सूअर; जो देवता को ज्यादा पसन्द आये, उसे ही अरपन करूंगी।"

दोनो ने अपने होठ दातों के बीच दबाये। मैं समझ गयी, वे हंसी रोक रही थीं। यह क्यो ? मैं न समझी। आखिर मैंने क्या ऐसी बात कही है जो हंसने लायक हो।

छोटी मेम बोली, "निरी पागल है।"

बड़ी ने कहा, "अपना देवता कुछ नहीं खाता, बेंजो। वे जंगली देवता के नाम पर न जाने क्या-क्या करते हैं। यह सब तू भूल जा। अपना देवता बड़ा सीधा है। उससे डरने की कोई बात नहीं है। सारे काम तुम निर्भय होकर करो।"

अपनी जाति के लिए ये सब मुझे खराब लगे। मन हुआ कि जवाब दूं, पर डर था। सोचती, ये यहोवा की दूत होंगी। यहोवा यदि सचमुच बड़ा देव हुआ, तो मुझे नरक ही मिलेगा। वह मेरे शरीर में सुई चुभायेगा। मैं चुप रह गयी। किताब के पन्ने पलटने लगी।

एक ने कहा, "पढ़ो भला।"

मैंने कहा, "बिलकुल नहीं आता।"

दूसरी बोली, "कोई बात नहीं। स्कूल में तुम्हारा नाम लिखा देंगे। महीने भर में अक्षर पहचानने लगोगी। धीरे-धीरे पूरी किताब पढ़ना आ जायेगा।"

"पूरी पढ लूंगी !" मेरी खुशी का ठिकाना नही था। मैं उससे लिपट गयी, बोली, "मुझे पढा दो मेम साहब, जनमभर एहसान मानूंगी। पूरी किताब जोर-जोर से बांचूगी, बांचकर सुनाऊंगी 'आबा और सापे को सुनाऊंगी।"

"बस-बस !" एक ने रोका, "तू दुनिया भर को सुनाना। तुम बड़ी तेज दिमाग की हो, जल्दी पढ जाओगी।"

मैंने उतावली से पूछा, "सच !"

उसने कहा, "हां, जोसेफ को आने दे, स्कूल में भरती करा दूंगी।"

वे उठकर चली गयीं। हाथ में किताब लिये खुशी के मारे मैं घंटों भीतर-बाहर घूमती रही।

६

सूरज का मुंह लाल हो गया था और धीरे-धीरे धरती में धसता जा रहा था। बकरियों का एक बड़ा रेवड़-सा सामने होकर गुजरा, सड़क की

धूल आसमान तक चढ गयी। क्षणभर को मैं सोचने लगी—इस समय उस सारी धरती पर ऐसी ही धूल उडती होगी. आंखो के सामने मेरा पुराना गाव और वहा का खिरका झूलने लगा। मैं उन बकरियों को आख गाड-गाडकर देखने लगी। मन मे आया कि दौड़कर एक बकरी से लिपट जाऊ। आख चितकबरे रंग की उस बकरी मे अटक गयी—अरे, यह तो साल्हो है।···पर···नही, वह यहा कैसे आ सकती है—बिलकुल उससे मिलती जैसी·· मैं चकरा गयी। पीछे से किसी ने आकर मेरी आंखें बन्द कर दी थी। उन हथेलियों को मैंने छुआ। फूल जैसी नरम, पहचानते देर न लगी, वह ग्रेसरी थी। उसे पाकर बेहद खुश हुई। सारी रात जागते बितायी थी। हजार कोशिश करने पर भी नींद नहीं आयी थी। ग्रेसरी आ गयी तो बडी राहत मिली। वह खुश थी। मेरा हाथ पकड़कर वह मुझे अन्दर ले गयी।

ग्रेसरी बडी देर तक पिकनिक की बातें बताती रही। बार-बार वह जेकब नाम के किसी आदमी का नाम लेती थी। उसकी बडी तारीफ करती। कहती—बडा सुन्दर है, मुह से मीठा और काम मे चुस्त। जब तक वह वहां रही, जेकब सदा साथ रहा। वह उसकी देखभाल करता रहा। जंगल से नागफनी के नीले-नीले फूल लाकर ग्रेसरी के बालो मे लगाता रहा। बडी देर तक जेकब की चर्चा सुनती रही। उसके बारे मे कुछ गहराई से जानने को जी हुआ।

मैंने पूछा, "यह कहा का फरिश्ता आ गया।"

उसने आंखों मे खरगोश के बच्चे जैसी चमक लाकर कहा, "ईशू का भेजा है, बडा अच्छा, खूब सुन्दर, खूब सलोना···' बोलते-बोलते वह खुशी के मारे कमरे मे चाई-माई करने लगी। मैंने उठकर उसे पकड लिया, बोली, "आखिर कुछ बतायेगी भी कौन वह अनोखा राजा है, जिसने मेरी सखी की जोत सुलगा दी।" काफी आनाकानी के बाद वह बोली, "शहर मे रहता है, खूब बडा अफसर है, चार सौ रुपये कमाता है, दूध जैसे सफेद कपडे पहनता है, फुलपैंट पर कॉलर वाली शर्ट, ऊपर से कनेर जैसी लाल रंग की टाई, पैरों मे सफेद मोजे और काले बूट···बस, कुछ न पूछो भाभी, हिरन जैसी चाट भरता है···और 'बाल डान्स'···अरी, उसका क्या कहना, डान्स

करते-करते उसने मुझे तीन बार 'किस' किया···' ग्रेसरी ने जो बकना शुरू किया, तो पानी की धार की तरह बकती रही। बहुत-सा तो मेरी समझ मे न आया। चाहती थी उससे पूछूं, पर जब वह पूछने का समय दे। उसने इत्ता ही बताया कि वह खूब पढ़ा है, इतना कि उसके बाद पढ़ाई बची ही नहीं। दो-चार दिन में वह इस गांव मे भी आने वाला है।

बाहर से झगडने की आवाज़ सुनाई दी। वह धीरे-धीरे इतनी बढी कि हमारा ध्यान वहीं जा लगा। बाहर निकलकर देखा, सामने कुएं पर झगड़ा हो रहा था। आसपास कुछ हंडे फूट पड़े थे। झगड़े मे औरतों के साथ-साथ मरद भी शामिल थे। एक बाज़ार-सा लगा था वहां। हल्ला इतने ज़ोर से हो रहा था कि कुछ समझ मे न आता, कौन क्या कहता है। मैं तो घरच के फाटक के पास ही खड़ी रही पर ग्रेसरी उचट गयी, झगड़े के ठिकाने पर जा लगी।

कुछ देर खड़ी रहकर वह लौट आयी, बोली, "भाभी, दो जात वाले लड़ रहे हैं।" मैंने पूछा, "कौन हैं ?" वह बोली, "अरी वही तिजरिया, जो हमारे मैदान में झाड़ू लगाती है।"

"तिजरिया मिहतरानी ?"

"हां-हां, वही। कुएं में पानी भर रही थी, पंडित के लडके ने देख लिया तो गांवभर को भडका दिया। गांव के लोग लट्ठ लेकर दौड़ आये, बोले, उसकी इत्ती हिम्मत !"

"जब वह चिल्लायी तो गांव के डुमार भी आ गये, चमारों ने उसका साथ दिया, महारों ने भड़काया और बसोरों ने लट्ठ दिये।"

"लेकिन पहले तो ऐसा कभी नहीं हुआ, ग्रेसरी !"

"हां, भाभी, नहीं हुआ। चमार और डुमारों का अलग कुआं है, वे उसी में पानी भरते हैं। कहते हैं, आज एक भैंस उसमे डूब मरी। जब तक उसे निकाला न जाय, पानी कहां से आये, सो आज बेचारी यहां चली आयी।"

"यह तो खराब हुआ।" मैंने कहा, "किसी पंडित को पानी भरकर उसे दे देना था।"

"पंडित क्यों दे, भाभी ?" ग्रेसरी ने आंखें चढ़ाकर

गांवभर का है, पंडितों के बाप का नहीं। उससे सब पानी भर सकते हैं। तुम नही जानती इसे अपने पादरी ने बनवाया है। पहले इस गांवभर में कुआं नही था।"

"फिर लोग पानी कहां से लाते थे ?" मैंने प्रश्न किया। उसने कहा, "सामने के नाले से। गर्मी मे यह भी सूख जाता था। झाड़ों के नीचे झिरिया खोदकर पानी उलीचते थे।'

"हमारे गांव मे तो अब भी यही होता है, ग्रेसरी। तुम्हारे पादरी बड़े दयावन्त है।"

ग्रेसरी बोली, "तुम्हारे क्यों, हम दोनों के है न, हमारे कहो।" मैं उससे लिपटकर हंस पडी, "हां, हमारे पादरी, ग्रेसरी !"

सामने से काले रंग का घोड़ा उचाट भरते चला आ रहा था। कुएं के पास आकर वह खडा हो गया। पादरी नीचे उतर पड़ा। उसके नीचे उतरते ही सब चुप हो गये, जैसे किसी ने सबके मुह को एक साथ सी दिया हो। पलभर मे ही दूसरा घोड़ा आ गया। उस पर जोसेफ था। पादरी ने जोसेफ को पास बुलाकर कान मे कुछ कहा। वह बराबर सिर हिलाता रहा। फिर जगत पर जा उसने दो-चार आदमियों को बुलवाया। उनमे पंडित भी थे। पादरी ने झगड़े का कारण पूछा, सुनकर वह खूब हंसा। बोला, "क्या बेहूदा धर्म है तुम्हारा। ओ भाई, सब आदमी एक ही देव के बनाये हैं। तुम सब उसी की सतान हो, फिर यह झगड़ा कैसा !"

पडित ने आंखें तरेरीं, "लाट साहब होगे अपने धर्म के। सारे गाव को बरबाद कर दिया, आधे ईसाई बना लिये···"

पादरी हंसा। उसकी हंसी मे नीलापन था, बोला, "पडितजी, चाहो तो अब सबको वापस बुला लो। इसमें गरम होने की क्या बात है।" आगे बढ़कर उसने पंडितजी के कंधे पर हाथ रखा, "बुरा मत मानना भाई···"

पंडित ने हाथ नीचे कर दिया। 'राम-राम' कहते वे चलते बने। बोले, "अब जाकर स्नान करना पड़ेगा।"

पादरी ने बाकी लोगों को समझा दिया। यह भी कहा कि दूसरे कुएं से भैंस की लाश कल निकलवा दी जायेगी। फिर जोसेफ को कुछ हुक्म देकर वह चला गया। जोसेफ वहीं खड़ा रहा। एक के बाद एक आकर सब

चुपचाप कुएं से पानी भरकर ले गये। देखते-देखते सब चहल-पहल खतम हो गयी। सबको रफा-दफा कर जोसेफ घर आ गया। खूब थका था, चाय पीकर खटिया में जो पड़ा तो खुर्राटे भरने लगा।

ग्रेसरी मेरे पास बैठी रही। मैंने कल की सारी बातें बता दीं। मेमे जो किताब मुझे दे गयी थीं, वह भी मैंने ग्रेसरी को बता दी। उसके बारे में मैंने पूछा। उसने बताया कि इस किताब का नाम बाइबिल है। यह ईसाइयों के धर्म की पोथी है। इसमें बड़े अच्छे-अच्छे किस्से हैं। उनमें यहोवा और ईसू की चर्चा है। उसने यह भी बताया कि यहोवा दुनिया का सबसे बड़ा देवता है। उसकी बराबरी का जहान भर में कोई नहीं है, सारी पृथ्वी में वही राज करता है।

मैंने कहा, "हमारे गांव का बढ़ई तो कहता था कि महादेव और दूल्हा-देव से बड़ा दुनिया में कोई देव नहीं है। ककानी जहान भर की माता है। मैं नहीं समझी ग्रेसरी, कि आखिर बड़ा कौन है—यहोवा कि महादेव।"

ग्रेसरी थोड़ी देर चुप रही। शायद कुछ सोच रही थी, फिर बोली, "यहोवा और ईसू ही बड़े हैं। बचपन से मैं उसी की बड़ाई सुनती आ रही हूं। उसकी महिमा अपरम्पार है। यहोवा की कृपा से गदही ने भी बिलाम से बात की थी[1]। जानवरों को भी जबान मिल जाती है, ऐसा देवता है यह।"

मुझे उसकी बातों से संतोष नहीं हुआ। मेरे गांव का पण्डा भी यही कहता था कि नीम वाली शेरमाई के पास रोज शेर आता है, अपना सिर पटकता है, मुंह से विनती करता है, विनती करते वक्त आदमी जैसा बोलने लगता है। जब माई खुश हो जाती है, तो हुक्म देती है। उसी के हुक्म से वह जानवर या आदमी का शिकार करता है। एक बार बड़ा महादेव ने एक मरे आदमी को जिन्दा कर दिया। होलेराय की किरपा से एक कुत्ता बोलने लगा था—फिर यह सब क्या है? मैं चक्कर खा गयी, असलियत न समझ सकी, बड़ा कौन है यह न जान सकी। मैंने ग्रेसरी से पूछा, "तू तो बड़ी-बड़ी पोथी बांचती है, उसमें तो दोनों देवताओं के बारे में लिखा होगा?"

---

1. देखिए, गिनती पर्व, अध्याय २२, पृ० १६८ (बाइबिल का हिन्दी संस्करण)। यहां यह कथा विस्तृत रूप से समझायी गयी है।

उसने बीच मे रोककर कहा, "नही भाभी, उसमें सिर्फ यहोबा और ईशू के बारे मे लिखा है। हां, एक जगह यह जरूर कहा है कि किसन चोर था, राम दगाबाज था…"

मैंने दोनों हथेलियो से अपने कान बंद कर लिये। मैं यह क्या सुन रही हूं—राम दगाबाज था, किसन चोर! मैंने कहा, "एकदम गलत लिखा है, ग्रेसरी। राम ने तो दुष्टों को मारा था, पापियों का उद्धार किया था…"

"होगा"—ग्रेसरी ने जैसे बात टालते कहा, "मैं इससे ज्यादा कुछ नही जानती। मुझे तो यही पढाया गया है। मेरी किताब में यही लिखा है। पादरी यही बताते है। वे कहते है, सारी पृथ्वी के प्रभु उसके सामने मोम की नाई पिघल गये[1]। यहोवा धन्य है, ईशू, उसका काम खरा है, वह सच्चा ईश्वर है[2]। तुम्हारे देवता के बारे मे मैं नहीं जानती भाभी, पर भइया को मालूम होगा। उन्होंने तो दोनो देव देखे हैं।"

जोसेफ खाट मे पडा था। आंखें बन्द किये था। मैंने कहा, "अभी सो रहे हैं, फिर पूछूंगी।" फिर बोली, "मुझे भरोसा नही होता ग्रेसरी, यह किताब तुम मुझे पढा दो, तो आखों से देख लू। मेमे कहती थी, मेरा नाम इसकूल में भरती करा देंगी, मैं सब पढ लूंगी।"

ग्रेसरी खुश हुई, बोली, "अच्छा है, पढ़ लो भाभी, फिर तुम्ही बताना कौन देव बडा है, कितना बडा है।"

जोसेफ ने करवट बदली, अजीब-सा मुंह बनाकर बोला, "जान लेने को यह बडा देव है। हम भूखो मरते रहे, उस देव ने आख न खोली।" मैं मुंह बाये हक्का-बक्का उसकी तरफ देखती रही, बोली, "क्या कहते हो? बाप-दादो की जिन्दगी तो उसी ने काटी है। जिसने जरा-सा टुकडा फेंक दिया, उसी की बजाने लगे।"

मैंने बात सहज कही थी, पर जोसेफ बिगड खडा हुआ। बोला, "कुत्ता समझती है? अपनी जात पर इतना गरूर था, तो यहां झक मारने आयी थी! जब विलियम टुकड़े फेंकता रहा, तब अक्कल कहां गयी थी!"

विलियम का नाम सुनकर रो पडी। बोली, "उस हरामखोर का नाम

---

१. बाइबिल, भजन-संहिता, पृ० ५२६।

२. व्यवस्था-विवरण, पृ० १८३, अध्याय ३२।

न ले।" उसे शायद बहुत बुरा लगा, वह गन्दी गालियां देने लगा। मुझे गाली देता तो खैर···मेरी आवा और तापे को गाली देता-देता कंगाल पर बरस पड़ा। न जाने वह कौन-सी खीझ निकाल रहा था। मैंने कहा, "पागल हुए हो, आज तुम्हे क्या हो गया? रास्ते मे ज्यादा पी गये क्या?"

वह हड़बड़ाकर खटिया से उठ बैठा और उसने एक साथ दो-चार घूंसे मेरी पीठ पर जड़ दिये। फफक-फफककर मैं रो पड़ी। ग्रेसरी न होती, तो जाने क्या हो जाता। वह दौड़ी गयी और अपनी मां को बुला लायी। वहां खासा तमाशा खड़ा हो गया। यह मुझे अच्छा न लगा, घर का तमाशा बाहर के लोग देखें। मैंने सिसकते-सिसकते जोसेफ के पैर पकड़ लिये, बोली, "माफ कर दे, गलती हो गयी। मान गयी तुम्हारा देव बड़ा है; यहोवा बड़ा है, ईशू बड़ा है।"

सोचती थी जोसेफ इससे खुश हो जायेगा, पर वह लात फटकारकर भाग गया। ग्रेसरी भी जाने कब खिसक गयी। मरियम ने दो-चार शब्द कहे, वह भी चली गयी। मैं अकेली रह गयी। उस खटिया के पास जमीन पर पड़ी पड़ी सिसकती रही। सिसकते-सिसकते कब सो गयी, पता नहीं।

७

मेरा नाम स्कूल मे लिखा दिया गया। मेरे साथ ग्रेसरी गयी थी। वह भी उसी स्कूल में पढ़ती थी। वहां दोनो मेमे मिल गयी। मुझे देखकर दोनों मुसकरायी। एक ने आगे बढ़कर मेरी पीठ थपथपायी, बोली, "ईशू तुम्हारी मदद करे। बात की बात में पढ़ना-लिखना सीखो।" दोनों हाथ जोड़कर मैंने उसका एहसान माना। सब मेरे साथ अंदर गयीं। इसकूल की सबसे बड़ी अफसर से मेरी मुलाकात हुई। वह थी तो सबसे बड़ी अफसर, पर उमर में सबसे छोटी थी। पच्चीस-तीस से ऊपर की नहीं रही होगी। मेमों की दूध-सा सफेद लिबास वह भी पहने हुए थी। बोलने में बड़ी मीठी व्यवहार में दयावन्त। यह सब मैंने पहली नजर में ही जान लिया। एक कुर्सी में मुझे बिठाया, यहां-वहां की बातें पूछी, पढ़ने की लगन

सराहना की। फिर थोड़ी देर वह ग्रेसरी से बातें करती रही। क्या बात कर रही थी, मुझे पता नहीं। दोनों इंगलिस्तानी बोलती थी, बड़ी सरपट, जैसे तीर जा रहा हो। बातें करते-करते दोनों खूब हंसी। पीछे से एक दूसरी स्त्री कमरे में आयी। बडी अफसर ने मेरी ओर हाथ बढाया। कहा—"देखो··· अरे, हां, तुम्हारा नाम तो मैंने पूछा ही नहीं···क्या नाम है ?"

मैंने कहा, "बं···जा···री···नही-नही···बेंजो।"

ग्रेसरी तपाक से बोली, "नही, मिसेज़ बेंजो जोसेफ।"

मैंने सिर हिलाकर हा कहा। वह बोली, "अच्छा, देखो बेंजो, ये हैं तुम्हारी टीचर। यही तुम्हे पढायेंगी। इन्हे मेडम कहा करो।"

मैंने हाथ जोडकर सिर झुकाया। मेडम ने पास आकर कहा, "नही, यह तरीका गलत है।" मैं हक्का-बक्का उसके मुह को ताकती रही। वह बोली, "घबराओ नही, हमे अपना समझो। वह देखो दीवार मे टंगी घड़ी। कितने बजे हैं ?···"

मैं उस ओर देखती रही। कुछ आता होता तो बताती। यहा तो दुनिया सफेद थी। मैं चुप रही। उसने मेरी ठुड्डी ऊपर उठा ली। आंखें अपने आप नम हो गयी। पानी-सी दो बूदें गिरी, तो उसने जेब से रूमाल निकालकर मेरी आखें पोंछ दी। बोली, "पगली, रोती है ! चल, सब समझा दूंगी···महीने-दो-महीने मे राई का पहाड बन जायेगा। जब गुड गंजन सहता है, तभी तो मिसरी बनता है।"

ग्रेसरी ने मेरा हाथ पकड़ा, बोली, "हिम्मत न हार भाभी, अभी दो बजे हैं···कह दे न।" मैं न कह सकी। मेडम ने कहा, "बेंजो, बारह बजे के बाद 'गुड आफ्टर नून' कहा जाता है···कहो भला।"

फिर बोली, "गुड आफ···"

"गुड आफ।"

"आफटर नून।"

"आफटर नून।"

उसने मेरी पीठ थपथपायी। बोली, "शाबाश, गुड आफटर नून।"

उसने मुझसे हाथ मिलाया। कहने लगी, "यही कहकर हाथ मिलाना चाहिए।"

मैंने खुशी से सिर हिला दिया। सोच रही थी—पहली बाजी तो मैंने जीत ली।

"हां, इतनी कि मन में नहीं समाती।" मैं फिर बोली, "तू बहुत बड़ा है जोसेफ, तेरा साथ पाकर यह सरग देखा। मेरे भाग खुल गये।" खुशी के मारे मेरी आखें भर आयीं। जोसेफ मुंह से कुछ न बोला। दो कदम पीछे हट गया। धीरे से उसने यही कहा, "अब रोटी बना, भूख लगी है।"

मैंने ग्रेसरी से हाथ मिलाया—"गुड···आ···नून"। वह हंसी और चली गयी।

बड़ी मुश्किल से मैंने रोटी बनायी। रोटी बनाने का मन नहीं था। लगता था, पलभर में ही सारी किताब पढ डालूं। जैसे-तैसे रोटी पकायी, तो तरकारी सकारी हो गयी। रोटी जल गयी और भात खिचड़ी बन गया। जोसेफ भला यह कैसे सहता! बडबडाने लगा। बडबडाते-बड़बड़ाते थोडा खाकर उठ गया, बोला, "सूअर के आगे मोती डालने से यही होता है।"

मैंने माफी मांगी, "आज सचमुच खुश हूं, मन नहीं लगा। पर कल से गड़बड़ न होगी।"

"तू हमेशा यही कहती है, जंगली···"

सुनकर मुझे भी रोष आ गया, बोली, "जंगली हूं यह तो तू जानता है···कभी तू भी रहा है—क्यों भूलते हो, आखिर गोंड थे पर बुरा न मानो, मैं भी सुधर जाऊंगी···तेरा साथ जो मिला है।" मैंने बनावटी हंसी हंस दी।

उसने कुछ न समझा, बोला, "गधी, ताने मारती है। नागिन है नागिन, वैसे ही जहर लगा है, डंक क्यों मारती है।"

"क्या कह रहे हो?" मैंने मुंह खोला, तो उसने चूल्हे का लगूर मेरी पीठ पर दे मारा। "हाय राम, मरी!" चिल्लाकर रह गयी। सब कुछ भूल गई। चन्दा को घने काले बादलों ने आकर ढंक लिया था।

चन्दा रे अगन जोत, छिप गयी छतियां की छांय।

बिना खाये सो गयी। ग्रेसरी ने खूब दरवाजा खटखटाया, पर मैं उठकर न खोल सकी। तमाशा उसे क्यों दिखाऊं! बेचारी लौट गयी।

सुबह उठी, मन भारी था। रात की घटना नहीं भूली थी। जोसेफ क्यों खिंचता जा रहा है, पता न लगा सकी। उसकी हर बात मानती हूं,

जैसा कहता है, करती हूं। कभी घर और गाव की बात उससे नहीं करती। याद आती है, तो आंसू पी जाती हूं। कभी मैंने नहीं कहा कि गांव ले चल। कभी आवा और तापे का हाल उससे नहीं पूछा। उसे तन-मन दे दिया था, सब कुछ विसरकर, जैसे मेरा दुनिया मे और कोई नहीं है। सब कुछ यही है। पर न जाने मुझसे क्या बिगड़ता है। जो भी बिगड़ता हो, मैं नहीं जानती। इतना ही कह सकती हूं कि सब कुछ अनजाने होता है। मैं तो उसे अपना देवता मानती हूं, पर भाग का लिखा···

चाय पी रही थी तो सामने सलेट पर नज़र पड़ी। काली, सफ़ेद घेरे बन्द। सफ़ेद घुंघची के बीच जैसे काला दाग। चाय पीना भूल गयी, आधी छोड़कर दौड़ी। सलेट उठा लायी। पिनसल से आड़ी-तिरछी रेखाएं खींचती रही। आज मुझे इसकूल जाना है, दस बजे। चरच की घड़ी बजेगी, टन्-टन्-टन्—अभी तो सात बार बोली है, फिर आठ बार बोलेगी, फिर नौ बार, फिर दस बार—तब मैं सरग में रहूंगी। मेडम मुझे लिखना सिखायेंगी, पढ़ना सिखायेंगी। लड़कियों का वहा मेला लगेगा, कितनी होंगी—अगनित—खूब।

जोसेफ के पास गयी। वह चरच के दरवाज़े पर खड़ा एक लड़की से बातें कर रहा था। दोनों नज़दीक थे, बीच मे फाटक था। बीच-बीच में वह लड़की हस देती थी। बत्तीसी निकलती तो बादर में बीजुरी चमक जाती। मेरे जैसा उसका रंग था, पर दांत चमकते थे। बाल छोटे थे। वह फिराक पहने थी, पर फिराक उसे अच्छी न लगती। सामने छाती भारी थी। सटी फिराक मे दो बड़े पड़ते थे। लड़की बड़ी चचल थी, बार-बार पांव फटकारती, कभी बायां तो कभी दायां। जोसेफ उससे घुल-घुलकर बातें कर रहा था। कभी-कभी दोनों जोर से हंस देते थे। बातों-बातों में जोसेफ ने उसका हाथ चूम लिया। उसकी चुन्नी दूर से ही मैंने आंखों में देख ली। यह कौन लड़की है? कहां की है? हाय चूमा···क्यों?···जोसेफ मुझसे सन्नाया रहता है—इसलिए। लम्बी सांस लेकर भीतर लौट आयी।

चरच की घड़ी टन्-टन्-टन् कर नौ बार खड़क उठी। सामने मैंने ग्रेमरी को खड़ा पाया। खूब सजी-धजी, सुन्दर बाल गूंथे, रंग-बिरंगी पट्टी बाधे। "अरे, तुम तैयार नहीं हुई?"

"हो जाती हूं।" उतरे मन से मैंने कहा, "तुम्हारे भइया ने अभी खाना नहीं खाया।"

"वे तो बड़ी देर मे आयेंगे, भाभी। रख दो, आयेंगे तो खा लेंगे।"

"लेकिन पहले मैं कैसे खा लू, ग्रेसरी!"

ग्रेसरी हंसी, बोली, "भइया सच कहते हैं, जगली हो।"

ग्रेसरी के मुह से जगली सुनकर आग लग गयी। बोली, "तू भी कहने लगी? क्या हम तेरा···" उसने बात सम्हाल ली। मेरे मुह पर हाथ धर दिया, "मजाक कर रही थी, भाभी!···कुछ खा लो, भइया आकर खा लेंगे। वे तो रूबी के साथ···"

"यह रूबी कौन है, ग्रेसरी? एक लडकी सवेरे दरवाजे पर खड़ी थी, वही तो नही?" मैंने उतावली होकर पूछा।

"वही होगी भाभी, पर अभी चलो, फिर···"

"नहीं, ग्रेसरी, बताओ वह कौन थी? उसके चमत्कार मैं सवेरे देखती रही।"

ग्रेसरी ने बात टाल दी, बोली, "स्कूल का टाइम हो गया है, फिर···"

मैं कल का रखा बासी भात खाकर उठ गयी। ताजी रोटी बिना इसे खिलाये कैसे खा लू? मैंने कघा कर कपड़े बदले। धोती पहनने मे ग्रेसरी ने मदद की। सज-संवरकर आइने के सामने खड़ी हुई, तो अपने को न पहचान पायी। खुशी-खुशी हम दोनो इसकूल चल दिये। फाटक पर पहुंचते-पहुचते खूब घटे बजे। चारो तरफ से रग-बिरंगी तितलियो की तरह उड़ती लड़किया मैदान मे जमा हो गईं। ग्रेसरी गेंद की तरह दौड़ी। मैंने कदम जरा बढाये, तो ताकत लगी। धीरे-धीरे चली और एक कतार मे खड़ी हो गयी। लडकियां आठ-दस कतार बनाकर खड़ी थी। मैंने एक उड़ती नजर डाली। यहा सब उमर की थीं, लड़किया भी और पचास बरस की बूढ़ियां भी।

कतार के सामने पत्थर की एक मूरत बनी थी, सफ़ेद रंग की। किसी दाढ़ीदार आदमी की शक्ल थी। उसके पास दस-बीस मेमे खड़ी थीं। मेरी मेंदम भी उनमें थीं और बड़ी अफसर भी। जो मेम पोथी दे गयी थी, वे भी यहां खड़ी थीं। जिस कतार मे मैं खड़ी थी, उसमे बच्चियां अधिक थी। एक

बूढ़ी थी और दो-तीन मेरी हमजोली। ग्रेसरी मुझसे दूर कतार में खड़ी थी। उसकी कतार में सिर्फ़ आठ-दस लड़कियां थी। सब लगभग एक जैसी।

इसकूल के एक दरवाजे से पादरी बाहर निकला। वह मूरत के सामने आकर खड़ा हो गया। उसने उस ओर अंगुली दिखायी। कतारों मे खड़ी सब एक साथ चिल्ला उठी। बड़ी देर तक तो मेरी समझ मे न आया, पर हर बात को वे कई बार दुहराती थी, इसलिए कुछ याद रख सकी :

धन्य प्रभु ईशु, प्रेम परचारक,
उनके—सब—निस्तारी रे।
भारत गावे नाम ईशु का
लै लै जयजयकारी रे।

थोड़ी देर में ही यह खतम हो गया। खतम होने के पहले सबने मिलकर तीन बार चिल्लाया—आ···मी···न। पादरी ने अपनी छाती मे लगे पीतल के ईसू पर अंगुली छुलायी, फिर माथे पर लगायी और तब दोनो कंधों पर। सामने खड़ी मेमों ने भी यही किया। मुझसे जितना और जैसा बना करती रही।

इसके बाद पादरी ने एक लम्बा-चौड़ा 'भाखड़' दिया। पूरा तो मैं क्या याद रखती, किसी को याद नही रह सकता। बड़ी देर वह बोलता रहा। मुझे यही ठीक से याद है कि उसने कहा, "ईसू बड़ा परमेसर है, प्रार्थना करते बखत बक-बक मत करो, जैसा दूसरी जात वाले करते हे। वे सोचते हैं, बक-बक करने से ही वह सुनेगा। तुम्हारा पिता तुम्हारे मांगने के पहले जानता है कि तुम्हें क्या चाहिए—तुम मूरख मत बनो।"

पादरी ने बताया कि ईसू की किरपा हो, तो लंगड़े चलते हैं, बहरे सुनते है, अंधे देखते हैं, मुरदे जिन्दा हो जाते हैं। एक कोढ़ी को एक बार ईसू ने छुआ, तो उसका कोढ़ मिट गया। सुनकर मुझे अपने गांव की याद हो आयी। गांव की साम और पीपर के झाड़ के नीचे बैठे पंडित की बामनी। सामने एक बड़ी पोथी है, कहते हैं वह 'रामान' है। उसमें राम का परिसर लिखा है। राम के बराबर कोई नहीं। उसकी किरपा हो तो :

बिनु पद चले सुने बिनु काना,
कर बिनु करम करे बिधि नाना।

पंडितजी बड़े राग से यह कहते है। घंटों इसका अरथ समझाते हैं। समझाते-समझाते वे डोलने लगते है, सामने बैठी जनता भी झूम उठती है। राम के ध्यान मे खो जाती है। एक बार पंडित जी ने बताया था कि राम ने एक पथरा को लात मारी तो वह औरत बन गया। केवट कहता है, बिना गोड धोये नाव मे नयी बैठारो। मोरी नांव लुगायी वन जैहे, कैसो कर हों, घर म अलग लुगायी बैठी है, कैसे खवेहो···

सोचती रही दोनो एक बात करते है। भेद कहने में है। दोनों देव के रुप-रंग अलग हैं, जगह दोनो की निराली है। पर रस्ता, वह तो एक जैसा दिखता है। *सोचना तब बन्द हुआ जब पादरी ने फिर तीन बार आ···मी ···न कहा और सबने दुहराया।*

एक कतार बाधे सब लोग इसकूल मे घुस गये। मैं भी पीछे-पीछे चली। कमरे में बैठने के लिए लकडी की खुरची और टेबल थीं। कमरे के चारों ओर मैंने देखा। सामने एक अलग खुरची और टेबल रखी थीं। मेरी एक साथी ने बताया कि वह मेडम की जगह है। उसके पीछे दीवार पर बड़ा लम्बा काला-काला रंग पुता था। मुझे बताया गया कि उस पर मेडम सफेद पिनसल से लिखती हैं। उसी दीवार पर तीन फोटू थी। एक सहेली ने बताया कि उनमे एक ईसू की है, दूसरी ईसु की मां की, नाम मरियम है और तीसरी फोटू पादरी की है। उसने यह इसकूल बनवाया था। अब वह मर चुका है।

मेडम जैसे ही कमरे मे आयी, कि सब खड़ी हो गईं। देखा-देखी मैं भी खड़ी हुई। मैडम बैठी, तो सब बैठ गईं। मेरे पास आकर मेडम खड़ी हो गईं। मुझे थपथपाया, बोली, "खूब पढो, खूब पढो।" और आगे निकल गयीं। दो-चार से कुछ पूछा, फिर सबका नाम लेकर पुकारा। जिसका नाम वे लेती, वह खड़ी होकर 'येस' कहती और बैठ जाती। सुन-सुनकर 'येस' कहना मैं भी सीख गयी।

इस तरह मेरी पढ़ाई का सिलसिला जारी हुआ।

ग्रेसरी आज बड़ी खुश थी। घर में आते ही उसने धूम मचा दी। मेरी बगरी साड़ी उठाकर बोली, "क्या रद्दी साड़ी पहनती हो, बनारसी ले देगा।" दोनों हथेलियां आपस मे मिलाकर वह सारे कमरे में चक्कर काटती रही। मेरा पोलका उठाकर बोली, "डरटी…हू हू…बेकार …अरन्डी का बढ़िया बनवा दूगा।" यह नाटक वह क्यों कर रही है? वह चुलबुली जरूर थी, पर इत्ती नही। चौके से उठकर मैं उसके पास आयी। उसे पकड़ा तो वह पकड से बाहर हो गयी। मैंने पूछा, "आज क्या हो गया ग्रेसरी, खुशी फूट निकल रही है।"

"कुछ न पूछो, भाभी!…नाचो आज, गाओ खुशी के गीत!" वह मुझसे लिपट गयी। बोली, "आज वह आया है।"

मैंने पूछा, "वह कौन?" उसकी आखें चमक उठीं। बोली, "मेरी बड़ी अच्छी भाभी, वही आया है…तू ही बता न वह कौन है? बता, भाभी!"

मैं अचरज मे थी। ग्रेसरी के चेहरे से खुशी जैसे फूटकर निकली भागती थी। उसका गुलाबी चेहरा सिन्दूरी हो रहा था। मैंने कहा, "पहेलियां क्यों बुझाती हो ग्रेसरी, साफ क्यों नहीं बताती, कौन आया है?"

"बड़ी भोली हो!" उसने अपनी नरम हथेलियों से मेरे गाल दबाये, "वही जो मिला था…जेकब…जेकब…नहीं समझी, कौन जेकब…" फिर अपने आप उसने अपना बायां हाथ कपाल पर दे मारा, "हो गया, किससे पाला पड़ा है। घोड़ा बहा जाय तो नरघोड़ी पूछे, कित्ता पानी है। जाने कब समझोगी भाभी! वही जेकब री, जो पिकनिक मे मिला था।"

'ओफ, मैं कैसी औरत हूं!" मैंने अपनी याददाश्त को धिक्कारा। याद आ गया, कुछ दिन पहले जेकब के बारे मे उसने बताया था। उसकी बड़ी तारीफ भी उसने की थी।

ग्रेसरी ने बताया कि कल रात वह आया है। उसी के घर ठहरा है। रात भर ग्रेसरी से रसभरी बातें करता रहा। आज उसका रंग एकदम बदल गया था। एक रात में यह चुलबुली लड़की कितनी बदल गयी है। लगता है नदी मे पूरी बाढ़ आयी है। उसकी देह बहुत छोटी है, बाढ़ … करना कठिन है। मन की धारा अब उसे फोड़ने ही वाली है। वह जा रही है; मैंने गौर से यह सब देखा। कभी मुझे भी ऐसा …

पहली बार कंगला को मैंने देखा था। नाचते-नाचते उसने मेरे पैर का अंगूठा कितने जोर से दबाया था। मैं चीख भरकर रह गयी थी।···ग्रेसरी का मन परखने में अब मुझे ताकत नहीं लगी। मैंने पूछा, "क्या कह रहा था रात को?"

बोली, "बियारी के बाद जो बातें करने भिड़ा, तो करता रहा। मरियम सो गयी। सब दूर शान्त, केवल हवा हमारी बातें सुनती थी। सिलसिला तब टूटा जब चरच की घड़ी ने टन्-टन् कर दो बजाये। मेरा मन तब भी उठने का न था। उसी ने कहा, 'अब जाओ ग्रेसरी, कल बातें होंगी। ज्यादा रात जागना ठीक नहीं।'

"उतरे मन से चली गयी। मां तब भी सो रही थी। उसी की बाजू में पड़ रही, पर नींद बैरिन थी, रात काटना मुसीबत! लगता था, कब भनसारा हो और कब अपनी अच्छी भाभी से सब हाल कह दूं।" मैंने उसकी ठुड्डी पकड़कर उठायी। बोली, "तू भी चट है, विरतान्त तो बता।"

ग्रेसरी के मुंह की लगाम जैसे किसी ने ढील दी। बोली, "कहता था, तुझसे शादी कर लूंगा। तुम मुझे बड़ी अच्छी लगती हो। पिकनिक में तुम्हें क्या देखा, किसी ने मेरी आंखें छीन लीं···सबेरा होने दे, मैं तेरी मां से···'

"सच, कहोगे न?"

"हां, जरूर कहूंगा। तुझे अपनी रानी बनाऊंगा।" ग्रेसरी कहे जा रही थी, "वह डॉक्टर है भाभी, बहुत बड़ा डॉक्टर। जिसे छूता है, खड़ा हो जाता है। मुरदे भी सांस लेने लगते हैं। यहां से बड़ी दूर रहता है। बड़े शहर में, बहुत भारी असपताल है। उस असपताल का सबसे बड़ा अफसर··· चमचमाती कार···चार सौ तनखा···अनगिनत इनकम। सड़क से गुजरता है तो हजारों नजरें झुक जाती हैं। असपताल आता है तो हाथ उठाते-उठाते नाक में दम आ जाता है। बड़ा भारी घर है शहर में···ठाट-बाट क्या कहने ···गरमी में वहां नहीं रहता, कहता है आग बरसती है। पहाड़ों पर चला जाता है, तीन-चार महीने वहीं चैन से गुजरती है। एक भारी बंगला सरकार की तरफ से मिलता है।···कहता है, मुझे खूब पढ़ायेगा, मुझे भी डागधरनी बना देगा।"

मैं खुश थी। मेरी प्यारी सहेली जो खुश है। बातें करते-करते उसे

जाने क्या धुन सवार हुई कि उठकर भाग गयी। चरच फाटक के पास जाकर धड़ाम से गिर पड़ी। मैंने कदम बढ़ाये, पर वे इतने धीरे उठ रहे थे कि जब तक पास पहुँचती, कपड़े झाड़कर वह फिर दौड़ गयी। हिरनी जैसी वह उचाट भरती आँखों से ओझल हो गयी। मैं खड़ी-खड़ी देखती रही। वह न दिखी तो सामने आसमान का वह छोर था, जहाँ वह पहाड़ों से मिलता है। कहते हैं, इसका अन्त नहीं। न कभी आसमान खतम होता और न कभी पहाड़ मिटता। कितना चले जाओ, इन दोनों का बिछोह कभी नहीं दिखता। विरह जैसे इनकी जिन्दगी से दूर है—कैसे रहते होंगे ये। दिन-रात खूब हँसते होंगे, खूब गाते होंगे :

तलाइता पाडी पारो गुडरालो मरकाओ,
मरका फोडी जोडी बाया नीरा नावा जोडी ओ।[1]

सचमुच आम की फाँक की तरह दोनों एक हैं। कब तक रहेंगे क्या पता। कहीं हवा का रुख न बदल जाय, बहाकर उन्हें एक-दूसरे से दूर फेंक दे, जिन्दगी भर तड़पने को, मछली की तरह, जो पानी से पलभर को दूर हुई कि छटपटाने लगती है; अपनी जान तक दे देती है···पर, यहाँ तो वह भी नसीब नहीं, जान ऐसी सहज निकल जाय, ऐसे पुन्न कहाँ। मछली ने पिछले जनम में बड़े पुन्न किये होंगे···मैं करती तो मेरा कगन्ना···ओफ, मैं भी क्या सोचने लगी। जिन्दगी वैसे ही भारी है···भीतर आ गयी और अपने काम में लग गयी। मन नहीं लग रहा था, किसी ने सोता बालक जगा दिया था।

दरवाजे पर दस्तक हुई। वह होगा। धीरे-धीरे उठी। न जाने क्यों जोगेक मेरी जिन्दगी से दूर हो रहा है। उसे देखकर कभी बेहद खुश होती थी, अब मन गिर जाता है। घर आयेगा, फिर उठा-पटक करेगा, गाली देगा, चिल्लाएगा। भारी मन से दरवाजा खोला, तो प्रेमरी थी, एक आदमी के साथ। मैंने अपनी धोती सँवारी। दोनों को भीतर बुलाया। प्रेमरी दौड़कर मेरे गले से झूल गयी, बोली, "यही हैं वे, भाभी!" मैं एकाएक

१. तालाब के पार एक आम का झाड़ है। उस झाड़ में जो आम पके हैं, पके आम की दो फाँकें एक होती हैं। (इसी तरह) तू और मैं एक हों

गयी। यह भी कैसी पागल लड़की है। दरवाजा खोलने के पहले बताया होता। मैंने दोनो हाथ जोड़े। खटिया बिछायी। ग्रेसरी ने फिर बातों का सिलसिला जारी किया। तूफान जैसी वह बहती गयी। न जाने वह क्या-क्या कह गयी। कहते-कहते बोली, "भाभी, ये आज जा रहे है। इन्हे रोक लो न, मेरा कहना तो मानते ही नहीं, तुम कहोगी तो जरूर रुकेंगे।" उन्होंने भी अपना पक्ष पेश किया, बोले, "जरूर ठहरता पर काम छोड़कर आया हूं। ग्रेसरी की चिट्ठी गयी थी, चला आया।" मैंने ग्रेसरी की ओर देखा। वह शरम के मारे लाल हो रही थी। मुंह मे अगुली दबाये वह कभी मुझे देखती, कभी उन्हे। उसकी हालत अजीब थी।

मैंने कहा, "अच्छे आ गये। यह भी तो बेचारी तुम्हारी याद में दिन-रात एक कर रही थी।" उन दोनो ने एक-दूसरे की ओर देखा, तो देखते रहे।

मैं फिर बोली, "कहती है तो ठहर जाओ, एक दिन की तो बात है।"

ग्रेसरी का मुह एकदम खुल गया, "हां, जेकब, भाभी का कहना नही टालते हैं। मेरे लिए नहीं तो भाभी के लिए ठहर जाओ···आज का खाना इनके यहां ही होगा।"

मैं दग रह गयी। ग्रेसरी ने यह क्या कह दिया। मैंने घबरायी नज़र से ग्रेसरी को देखा, वह हंस रही थी। जेकब ने कहा, "अच्छी बात है, आप कहती है तो मैं आज ठहर जाता हू। पर खाना बहुत सादा खाऊंगा।"

ग्रेसरी तुरन्त बोली, "बिलकुल साधारण भाभी, तुम इनके लिए पेज बनाना, मका की रोटी और चिकोडा की भाजी।" मैंने उसकी शरारत भांप ली, बोली, "यह तो खिलाने वाले की मरजी पर है।"

जेकब ने कहा, "नहीं, ग्रेसरी ठीक कहती है। तुम्हारी बडी तारीफ करती थी। कहती थी, भाभी पेज बडी बढ़िया बनाती है···यों तो रोज खाता हूं, आज कुछ नयी चीज ही खाने को मिले, तो फायदा।"

ग्रेसरी और जेकब चले गये। मैं चिन्ता मे पड़ गयी, क्या खिलाऊं। क्या मिहमान को पेज खिलाना··· नहीं,···लेकिन मैंने बिना जोसेफ के पूछे यह क्या कर लिया। कहीं आ गया, तो पहाड़ टूट पड़ेगा।···पर मैं भी क्या कर सकती थी। इस नटखट लड़की ने ही मुसीबत सिर पर ला दी।···

मेरे पास कुछ पैसे थे, पर जोसेफ के बिना पूछे···नहीं-नहीं, खरच नहीं, करूंगी। एक बार मैंने चार पैसे की जलेबी ले ली थी, तो घंटों बकबकाता रहा था। पैसा मेरे पास है पर मेरा नहीं, जोसेफ का है। मैं उसके पास हूं, पर उसकी नहीं; मेरा अपना कोई नहीं।

बड़ी चिन्ता मे थी। तभी ग्रेसरी बहुत-सा सामान लेकर आ गयी। बोली, "भाभी, माफ कर दो। मैं कहकर हार गयी, पर न माने, आखिर क्या करती। यह लो खाने का सामान···"

"इसकी क्या जरूरत थी, ग्रेसरी ?" मैंने कहा। वह बोली, "मैं भइया को जानती हूं भाभी, हम-तुम तो एक हैं न। और घबराओ नहीं, जेकब को इसकी खबर नहीं है, न होगी,। हां, भाभी, वह सचमुच पेज, रोटी और भाजी खायेंगे। कहते थे, इस खाने का भी मजा चखा जाय। खूब अच्छी बनाना, भाभी। मैं भी खाऊंगी।"

"ग्रेसरी···" मैंने पुकारा, पर वह दौड़ते भाग गयी। मैं एहसान से दब गयी।

बड़ी लगन से मैंने खाना बनाया—वही पेज, मका की रोटी और चिकोड़ा की भाजी। जोसेफ घर आया, तो उससे मैंने सब कह डाला। जब उसे यह पता लगा कि डागधर खाने वाले हैं, तो बिगड़ खड़ा हुआ। बोला, "इत्ते बड़े आदमी को यही खिलाते हैं।"

मैंने कहा, "वही कह रहे थे, मेरे लाख कहने पर न माने।"

काफी देर यह बड़बड़ाता रहा, फिर बोला, "एक मिहमान मेरा भी है।" मैं बड़ी खुशी हुई, बोली, "बहुत अच्छा।"

रात को डागधर खाना खाने आये। जोसेफ उनसे अच्छी बातें करता रहा। डागधर ने घरच के हालचाल पूछे। कितनी पगार मिलती है ? पादरी का बेहार कैसा है ? वह दौड़े पर कहां-कहां जाता है, क्या करता है ? कितने आदमियों को उसने अब तक जात बदल किया ? ···इन सारे प्रश्नों के उत्तर वह बड़ी अदब के साथ देता रहा।

खाना खाने बैठने लगे तो मैंने जोसेफ को इशारे से बुलाया। बोली, "तुम्हारे मिहमान नहीं आया !"

"आती होगी।" उसने बाहर नजर डाली और एकदम बं

गयी।" आगे बढ़कर उसने स्वागत किया, "आओ, रूबी, तुम्हारे लिए ही हम लोग ठहरे थे।"

'रू···बी' नाम सुना तो विकल हो गयी। सब खुशी जैसे आयी थी, चली गयी। रूबी·· यह वही लड़की है जो फाटक के पास खड़ी खुल-घुलकर बातें कर रही थी। रूबी···रूबी ··मेरी आंखों से खून टपकने लगा। मेरा सुख लूटने वाली डाइन···

डागधर, ग्रेसरी, जोसेफ और रूबी—चारों खाने बैठे। जोसेफ ने डागधर से रूबी का परिचय कराया। बताया कि हसपताल मे वह नर्स है। चार-पांच साल मे वह काम कर रही है। बड़ी होशियार है, रोगियो की खूब सेवा करती है। डागधर ने रूबी से कुछ बातें की। उसने पादरी के बारे मे पूछा। वहा पादरी ही हसपताल का डागधर था। रूबी ने बताया कि पादरी बड़ा अच्छा डागधर है। वह कई चमत्कार जानता है। एक बार एक बच्चा बीमार पड़ा, सब दवाइया दी गयी, सूई लगायी पर वह ठीक न हुआ। बच्चे की मा पादरी के पैरो पर गिर पड़ी। उससे पहले उसके चार लड़के मर चुके थे। पादरी ने कहा, "यदि लड़के को ईसू को भेंट कर दो तो उपाय करू।" मा की ममता थी। उसने खूब चिरौरी की। बोली, "लड़के को भेंट कर दूगी और खुद ईसाई बन जाऊगी। मेरा अब कौन बैठा है।"

पादरी ने ईसू के सामने 'परायना' की। लड़के के सिर पर हाथ फेरा। एक जरा-सी पुड़िया मुह मे डाली। उसने आखें खोल दी। मां की खुशी का अन्त नही। उसने अपने को ईसू के चरणों मे भेंट कर दिया।··· नर्स इस तरह के कई किस्से सुनाती रही। डागधर ने कहा, "यह अच्छी बात नही। आड़े वखत किसी पर जबरदस्ती करना खराब है।"

जोसेफ एक अजीब लहजे मे बोला, "क्या खराब है, डागधर साहब? आप भी तो ईसाई हैं न?"

"तो क्या हुआ! मरजी से धरम बदले सो ठीक···"

"यह आप क्या कह रहे हैं, डागधर साहब?" नर्स ने आश्चर्य से पूछा। डागधर ने अपनी बात पर जोर दिया, "हां, मैं कह रहा हूं। औरो का भी तो धरम है। यदि वे तुम्हे बदलने लगें। ईसू ने कब कहा है कि तुम पर

धर्म वालों की सेवा न करो। मैं ईसाई हूं, ईसू को मानता हूं, उसके सामने सिर झुकाता हूं, पर दूसरों से घृणा नहीं करता। डॉक्टरी बड़ा खराब पेशा है, रूबी। लोग हमारे सामने भिखारी बनकर आते हैं, वे हमें देवता समझते हैं। जहां हम पहुंच जाते हैं, उस घर के आदमी सोचने लगते हैं कि मरीज अच्छा हो गया। इस काम में धरम नहीं, मानवता चाहिए।"

डागधर की बातें सुनकर मुझे बड़ी राहत मिली। कितना बड़ा आदमी है यह, कितने ऊंचे विचार हैं। कितना निरभय! ईसू उसे बढ़ती दे। ग्रेसरी के भाग पर 'गरब' करने लगी। जितनी अच्छी और सीधी ग्रेसरी है, उतना ही उदार और सरल वह डागधर है। दोनों की जोड़ी…भगवान करे दोनों बंध जाएं। मैंने ग्रेसरी की ओर देखा, उसका मुंह खिला था, आंखें चमक रही थीं, सफेद पहाड़ी पत्थर की तरह।

डागधर ने मेरे भोजन की बड़ी तारीफ की और खूब खाया। कहने लगा, "बचपन में एक बार ऐसा खाना मिला था, तब से खोजता रहा, पर नहीं पा सका…आज मिल पाया है।" जोसेफ की तरफ मुंह कर उसने कहा, "तुम बड़े भागवान हो जोसेफ, ऐसी स्त्री बड़े भाग से मिलती है।" रूबी ने अपना मुंह बना लिया था। जोसेफ आदतन हां-हां करता रहा। गरज का चपरासी है, चापलूसी उसकी जिन्दगी है। जिस दिन वह चली जायगी, मारा-मारा फिरेगा। इसी से चापलूसी का आंचल थामे रहता है जबरदस्त, कहीं हाथ से न छूट जाय। बोला, "हां, डागधर साहब, भाग हमारे, गरीब का खाना पसन्द आया।"

डागधर बड़ा सीधा था। बोला, "धनी कौन है, जोसेफ। मैं भी गरीबी से बड़ा हूं। मेरे बाप-दादों के पास तो खाने को नहीं था। बचपन ही में एक ईसाई घर में मैं सौंप दिया गया था। वहीं पाल-पोसकर बड़ा किया गया। बाप-दादों का आज तक पता नहीं। आया था तब दूध पीता था। दस-बारह बरस एक आया के साये में पड़ा रहा। ईसाई घर वाले अपने खर्चे पर मुझे आगे पढ़ाने शहर भेजना चाहते थे। मैंने उनका और एहसान न लेना चाहा। इतना ही काफी था। बचपन से पाल-पोसकर इतना बड़ा कर दिया, अब तक न जाने कब का मिट्टी में मिल गया होता।…पर एक बात कहूं जोसेफ, इतने साल वहां रहा, पर मेरा मन वे न जीत पाये, जाने

गयी।" आगे बढ़कर उसने स्वागत किया, "आओ, रूबी, तुम्हारे लिए ही हम लोग ठहरे थे।"

'रू· ·बी' नाम सुना तो विक्षिप्त हो गयी। सब खुशी जैसे आयी थी, चली गयी। रूबी· यह वही लड़की है जो फाटक के पास खड़ी घुल-घुलकर बातें कर रही थी। रूबी ··रूबी · मेरी आँखों से खून टपकने लगा। मेरा सुख लूटने वाली डाइन· ·

डागधर, प्रेमरी जोसेफ और रूबी—चारों साथ बैठे। जोसेफ ने डागधर से रूबी का परिचय कराया। बताया कि हसपताल में वह नर्स है। चार-पाँच साल से वह काम कर रही है। बड़ी होशियार है, रोगियों की खूब सेवा करती है। डागधर ने रूबी से कुछ बातें कीं। उसने पादरी के बारे में पूछा। वहाँ पादरी ही हसपताल का डागधर था। रूबी ने बताया कि पादरी बड़ा अच्छा डागधर है। वह कई चमत्कार जानता है। एक बार एक बच्चा बीमार पड़ा, सब दवाइयाँ दी गयीं, सूई लगायी पर वह ठीक न हुआ। बच्चे की माँ पादरी के पैरों पर गिर पड़ी। इससे पहले उसके चार लड़के मर चुके थे। पादरी ने कहा, 'यदि लड़के को ईसू को भेंट कर दो तो उपाय करूँ।" माँ की ममता थी। उसने खूब चिरौरी की। बोली, "लड़के को भेंट कर दूँगी और खुद ईसाई बन जाऊँगी। मेरा अब कौन बैठा है।"

पादरी ने ईसू के सामने 'पराथना' की। लड़के के सिर पर हाथ फेरा। एक ज़रा-सी पुड़िया मुँह में डाली। उसने आँखें खोल दीं। माँ की खुशी का अन्त नहीं। उसने अपने को ईसू के चरणों में भेंट कर दिया।···नर्स इस तरह के कई किस्से सुनाती रही। डागधर ने कहा, "यह अच्छी बात नहीं। आड़े वक्त किसी पर जबरदस्ती करना खराब है।"

जोसेफ एक अजीब लहजे में बोला, "क्या खराब है, डागधर साहब? आप भी तो ईसाई हैं न?"

"तो क्या हुआ! मरजी से धरम बदले तो ठीक···"

"यह आप क्या कह रहे हैं, डागधर साहब?" नर्स ने आश्चर्य से पूछा। डागधर ने अपनी बात पर जोर दिया, "हाँ, मैं कह रहा हूँ। औरों का भी तो धरम है। यदि वे तुम्हें बदलने लगें। ईसू ने कब कहा है कि तुम पर

धर्म वालों की सेवा न करो। मैं ईसाई हूं, ईशू को मानता हूं, उसके सामने सिर झुकाता हूं, पर दूसरों से घृणा नहीं करता। डॉक्टरी बड़ा खराब पेशा है, रूबी। लोग हमारे सामने भिखारी बनकर आते है, वे हमे देवता समझते हैं। जहां हम पहुंच जाते है, उस घर के आदमी सोचने लगते हैं कि मरीज अच्छा हो गया। इस काम मे धरम नही, मानवता चाहिए।"

डागधर की बातें सुनकर मुझे बडी राहत मिली। कितना बडा आदमी है यह, कितने ऊंचे विचार हैं। कितना निरभय ! ईशू उसे बढती दे। ग्रेसरी के भाग पर 'गरव' करने लगी। जितनी अच्छी और सीधी ग्रेसरी है, उतना ही उदार और सरल वह डागधर है। दोनो की जोड़ी···भगवान करे दोनों बंध जाए। मैंने ग्रेसरी की ओर देखा, उसका मुंह खिला था, आंखें चमक रही थी, सफेद पहाड़ी पत्थर की तरह।

डागधर ने मेरे भोजन की बडी तारीफ की और खूब खाया। कहने लगा, "बचपन मे एक बार ऐसा खाना मिला था, तब से खोजता रहा, पर नहीं पा सका···आज मिल पाया है।" जोसेफ की तरफ मुह कर उसने कहा, "तुम बड़े भागवान हो जोसेफ, ऐसी स्त्री बड़े भाग से मिलती है।" रूबी ने अपना मुह बना लिया था। जोसेफ आदतन हां-हां करता रहा। चरच का चपरासी है, चापलूसी उसकी जिन्दगी है। जिस दिन वह चली जायगी, मारा-मारा फिरेगा। इसी मे चापलूसी का आंचल थामे रहता है जकड़कर, कही हाथ से न छूट जाय। बोला, "हां, डागधर साहब, भाग हमारे, गरीब का खाना पसन्द आया।"

डागधर बडा सीधा था। बोला, "धनी कौन है, जोसेफ। मैं भी गरीबी से बढा हूं। मेरे बाप-दादों के पास तो खाने को नही था। बचपन ही में एक ईसाई घर में मैं सौंप दिया गया था। वहीं पाल-पोसकर बडा किया गया। बाप-दादों का आज तक पता नहीं। आया था तब दूध पीता था। दस-बारह बरस एक आया के साये में पड़ा रहा। ईसाई घर वाले अपने खर्चे पर मुझे आगे पढ़ाने शहर भेजना चाहते थे। मैंने उनका और एहसान न लेना चाहा। इतना ही काफी था। बचपन से पाल-पोसकर इतना बड़ा कर दिया, अब तक न जाने कब का मिट्टी में मिल गया होता।···पर एक बात कह दू जोसेफ, इतने साल वहां रहा, पर मेरा मन वे न जीत पाये, जाने

क्यों ? किसी से कहूंगा तो मुझे एहसान-फरामोश कहेगा। हूं नहीं, एहसान का बोझ ही तो ढो रहा हूं। अभी तक ईसाई हूं। ईसाइयत से चिढ़ है, पर छोड़ता नहीं। बचपन से जो कुछ देखता आ रहा हूं, शायद वही इस विद्रोह का कारण हो। जो भी हो, कितनी मुसीबत से बम्बई में मैंने अपनी जिन्दगी काटी है और कैसे डॉक्टर बना हूं, ग्रेसरी से सब बता चुका हूं।"

ग्रेसरी ने सिर हिलाकर हामी भरी, पर मुंह से कुछ न बोली। चेहरा लाज से झुका था। आज वह बेहद शरमा रही थी, ठीक पहली रात की दुलहिन जैसी। मैंने उसे छेड़ने के इरादे से कहा, "ग्रेसरी से अच्छी निभेगी डागघर साहब, यह भी कहती है कि मुझे ईसाइयों के कई काम पसन्द नहीं।"

"चुप रह, बदतमीज !" जोसेफ ने मुझे डांट दिया, "जिसका खाती है, उसी से नमकहरामी !" डागघर को शायद यह अच्छा न लगा। वह बोला तो कुछ नहीं, पर अभी उसने पेज मंगायी थी, वह बिना लिये उठ गया। ग्रेसरी ने बहुत मनाया, वह न माना। इतना ही बोला, "ज्यादा हो गया, इच्छा नहीं है।" उसके चेहरे का बदला रंग साफ नजर आ रहा था। जितने चाव और लगन से वह अभी खा रहा था और बातें कर रहा था, वह सब गायब। मैंने अपने को धिक्कारा। कहा से कहां मुंह खुल गया।

डागघर के साथ ग्रेसरी भी उठ गयी। जोसेफ कैसे बैठा रहता, रूबी को भी उठना पड़ा। वह भी नाराज दिखी। उसकी आंखें चढ़ गयी थी। मैं गड़ी जा रही थी और मन ही मन अपने को धिक्कार रही थी। मेरे जरा से बोलने पर चारों का मजा किरकिरा हो गया। यह भी तकदीर है। माथे पर हाथ ठोककर रह गयी।

मैं भीतर ही थी, न जाने कब ग्रेसरी और डागघर चले गये। बाहर बरामदे पर जोसेफ और रूबी बैठे थे, खिलखिलाकर हंसते। रूबी डागघर की चर्चा कर रही थी। कहती—यहां के अस्पताल में होता तो बताती।

जोसेफ बोला, "ओछा आदमी है। थोथा चना जो ठहरा, घना बाजता ही है।"

रूबी बोली, "मैं इतनी दगादार नहीं हो सकती। बाप-दादे पलते आ रहे हैं इस धरम में। मा ने रोगियों की जिंदगी भर सेवा की है। असपताल

के पादरी की मौत तक उसने उसका बड़ा साथ दिया। वह पादरी बराबर उसकी तारीफ ही करता गया। जब मरने लगा तो अपने साथी से कह गया, इसकी लडकी की फिकर रखना। इसने मेरी बड़ी सेवा की है। खूब साथ दिया है। थोड़े दिन मे मां भी चल बसा, उसकी विरासत मुझे मिली है। अपना काम बराबर न करूं तो धोखा होगा। दुनिया में ज़िन्दगी देनेवाला ही तो परमेसर है। जिसने ज़िन्दगी दी, सांस रहने उसका एहसान नहीं भूल सकती।"

जोसेफ ने उसके गले मे हाथ रख दिया, "तुम ठीक कहती हो रूबी, तुम्हें देखकर मुझे बड़ी शांति मिलती है। कल का सारा दिन तुम्हारे साथ बड़े मज़े से बीता। सच कहता हूं, तुम मेरी आंखों के सामने रहती हो, तो जैसे धरती पर स्वर्ग उतर आता है। नदी के ढांव, जंगल की घनी छांव में···इन घने और छोटे, भूरे बालों में उलझा मन, सच रूबी, तुम कितनी अच्छी हो, कितनी हसीन···!"

कान पथरा गये। और सुनने की ताकत उनमें नही रही। आंखों के सामने अंधेरा छा गया, धरती घूमने लगी। सारी दुनिया जैसे चक्के की तरह घूम रही है और मैं उसकी धुरी पर खड़ी हूं—कितनी बेसहारा, कितनी बेबस। एक विवाहित औरत के लिए इससे भयंकर दुनिया में और क्या हो सकता है। जोसेफ मुझसे रोज क्यों खिंचता जा रहा है, आज समझ गयी। आंखों से देख लिया, कितना बुरा हुआ। पीठ का फोड़ा, क्या पता कितना बड़ा है। आंखों के आगे तो जरा-सी फुड़िया काल बन जाती है।

८

रात।

भयानक काली रात।

आसमान मे अनगिनत तारे, जैसे जुगनू चमक रहे हो।

घंटों बीत गये पर आंख न लगी। उठकर बाहर टहलती रही। दूर से पाड़े की आवाज़ रह-रहकर आ रही थी। उसकी आवाज़ में करुणा थी,

वह जैसे रो रहा था, हाहाकार कर रहा था। सुनकर भय लगता। भीतर चली गयी। लालटेन की बाती जरा तेज की। मन न लगा तो फिर बाहर आ गयी। फिर वही आवाज…

जोसेफ ने करवट बदली तो ढाढ़स बंधा। इतनी देर से राह देख रही थी, उसकी नींद के तार जरा कमजोर पड़ें कि उसे जगाऊं। पर, यह क्या? उसने दुलाई सिर से ओढ़ ली, फिर खर्राटे भरने लगा। अबकी बार बाहर आयी तो मैदान में कई चमगादड़ उड़ रही थीं। एक-दूसरे से टकराती तो धीरे से चू-चू चर्र्चू… जैसे कोई गीत गा रही हों…मन का डर बढ़ता गया और साथ ही कमर और पेट की पीड़ा भारी होती गयी।

न सहा गया, तो उसकी दुलाई हटानी पड़ी। वह हड़बड़ाकर उठ बैठा। आंख मीचते बोला, "क्यों परेशान करती है? कैसी नींद लगी थी।"

मैंने कहा, "सहन नहीं होता इसलिए तंग कर रही हूं।"

उसने एक गिलास पानी मंगाया। मैंने पानी लाकर दिया। पीकर वह फिर पड़ रहा।

मैंने कहा, "सुनते हो, जरा-सा काम तो कर दो।"

"इतनी रात को?" पड़े ही पड़े वह बोला।

"हां, मेरा पेट दर्द कर रहा है। घंटों बीत गये, चैन नहीं।"

"चूरन की पुड़िया खा ले, अलमारी में रखी है। टट्टी साफ न हुई होगी…" वह बोला। सुनकर हंसी भी आयी और गुस्सा भी। मैंने दोनों हाथ से दुलाई खींच दी, तो वह उठकर फिर बैठ गया। बोला, "क्यों तंग करती है?"

मैंने जोर से कहा, "क्या करूं, वश के बाहर है…जरा ग्रेगरी और उसकी मां को तो बुला दो।"

"इतनी रात! पागल तो नहीं…खुद परेशान होना और दूसरे को परेशान करना।"

इस बार मैं जोर से बोली, "हां, तुम बुला भर दो। बेमतलब की बात करने में क्या धरा है। कहना, मेरे पेट में दर्द हो रहा है। सुनकर वे खुद समझ जायेंगी और चली आयेंगी। तब तुम्हें तंग न करूंगी।"

कुनमुनाते वह उठा। हाथ में लालटेन और डंडा लेकर वह चला गया।

मैं जमीन पर बठी, पेट पर हाथ रखे राह हेरती रही···बाहर कुत्तों के भूंकने की आवाज़ सुनाई दी। वह धीरे-धीरे बढ़ी, इतनी जैसे गांवभर के कुत्तों की पंचायत यहीं इकट्ठी हो गयी है। आवाज़ पास आती लग रही थी। बात क्या है, धीरे-धीरे बाहर आयी, तो अंधेरे मे कुछ समझ न पड़ा। कुत्तों के भूंकने के साथ-साथ किसी बछड़े के रम्भाने की आवाज़ थी। वह लगातार मांऽऽऽ मांऽऽऽ मांऽऽऽ कर रहा था। आवाज़ मे कराह थी। मैंने लालटेन ऊपर उठायी तो ऐसा लगा जैसे चरच के दरवाज़े पर ही यह सब हो रहा है :

'दौड़ो—दौड़ो—बचाओ!'

आवाज़ बढ़ती गयी। पैरों की धमधमाहट···डडों का खटखटाना··· दौड़ने की आवाज़···भागने की आवाज़—अरे मोती, चीता है रे! वह भागा, दौड़ो—बायी ओर, पीर की बगल मे···मरी री, मेरा बछड़ा ले गया ···चार दिन पहले ही तो गाय ने जना था···देख रे बरेदी, चरच की ओर गया है—चरच—जीता न छोड़ेगा।

चीता है···चरच की ओर गया है···जीता न छोड़ेगा—सुनकर मैं धम्म से गिर पड़ी। ब—चा—ओ! फिर क्या हुआ, पता नही।

देखती हू, खाट पर पड़ी हू। ग्रेसरी पखा झल रही है। मरियम नाड़ी पकड़े है। जोसेफ घबराया खड़ा है। मैंने पूछा, "यहां कैसे आयी?" ग्रेसरी ने मेरे सिर पर हाथ फेरा, 'शी शी शी, चुप—बात न करो।"

जोसेफ कह रहा था, "बुढ़िया का बछड़ा चीता ले गया। बिसपतवार को गइया बियायी थी, बच्चा खासा था—साला दरवाजे पर छोड़ गया, कुत्तों की आ बनी।"

मरियम ने पूछा, "कैसा लग रहा है, बेटी?" मुझे ढाढ़स मिला। बोली, "मां, सारी कमर मे पीरा हो रही है—सही नहीं जाती। पेट तेजी से जैसे उमठ रहा है। भीतर अनदुलम-सा हो रहा है। बचा लो, मा, मर जाऊंगी।"

"घबराओ नही, बेटी, सब ठीक हो जायगा।" उसने जोसेफ को एक चिट्ठी दी, बोली, "डोली बुलवा लो, असपताल ले चलेंगे।"

"असपताल! मैं वहां नही जाऊंगी, मा!" मैं चिल्लायी। मरियम ने सफेद-सी गोली मेरे मुह मे रख दी। बात की बात में डोली आ गयी।

असपताल के एक कमरे मे मुझे पड़ा दिया गया। जोसेफ चला गया।

मरियम ने कहा, "तुम्हारी जरूरत नही, तुम जा सकते हो।" ग्रेसरी मेरे पास थी। वह हम रही थी। मेरे सिरहाने पर बैठी दोनों हथेलियों से ताली बजाती गा रही थी :

मुन्ना राजा आएगा,
सोना चादी लाएगा,
बेंजो दीदी नाचेंगी,
जोसेफ भइया गायेंगे

मेरा दर्द बढ रहा था। अब सारा पेट उबलने लगा। कमर का दर्द जैसे पेट मे जा समाया। पानी से बाहर निकली मछली की तरह मैं तड़फ रही थी। न इस करवट आराम, न उस करवट। सीधे-औंधे कैसे पड़ो, चैन कहां!

मरिमय ने कमर के पास सूजी लगायी तो चीखकर रह गयी। एकबारगी जैसे किसी ने गोली दाग दी। मरियम हसी, बोली, "डरो मत, बेंजो, यह तो सुख का दर्द है। कुछ ही घटों मे मा बनोगी।"

"मां बनूंगी!" मेरे मुह से एकाएक निकला, "हाय राम!" मेरी छाती पर किसी ने पत्थर पटक दिया। मा बनूंगी—वह आयेगा—जिन्दगी का भार सौ गुना बढ जाएगा—जोसेफ वैसे ही ऐंठा है—यह तो विलियम ···एकाएक सिर घूमने लगा और फिर याद नही।

आख खुली तो ग्रेसरी सिर पर पट्टी रख रही थी। मरियम इधर-उधर दौड रही थी। डागधर मेरा सीना तराश रहा था। उसने मेरा हाथ देखा, कपाल पर हाथ फेरा, मुझे थोडी राहत मिली। उसने कहा, "घबराओ नही।" बोला, "कैसा लग रहा है?"

"जान जा रही है।" मैंने कराहते हुए कहा।

मरियम बोली, "लड़की डर रही है।"

मैंने कहा, "डर नही रही डागधर साहब, कोई डरवा रहा है!"

"कौन?" मरियम ने पूछा।

"करौंदी की छाया···वह···वह!"

डागधर ने एक गोली मेरे मुह मे रख दी। बोला, "डरने की बात नहीं, सुबह तक सब ठीक हो जायेगा।" वह चला गया।

किहें—किहे ऽऽ किहे ऽऽ की आवाज़ !

सब हंसती-मुसकराती—ग्रेसरी, मरियम, वि···वाजू मे मांस का लुयड़ा जैसे पड़ा था। दरद अपने आप कम हो रहा था। लगता जैसे पेट से मन भर का पत्थर निकल गया है। भार उतरा तो राहत मिली। ग्रेसरी पास खड़ी थी, बोली, 'भाभी, मिठाई खिलाओगी न ?"

मैंने मुसकुराकर कहा, "हां, क्यों नही।"

वह बोली, "मुन्नी आयी है।"

"मु···न्नी···" मैंने लडखडाते शब्दो मे पूछा। अपने आप उदासी आ गयी, "लड़की हुई है—ल···ड ··की।" अपनी जिन्दगी के सबसे कडवे क्षण सामने झूमने लगे। आंखों के सामने हाहाकार-सा होने लगा। एक नये प्राणी को जिंदगी भर तडपने के लिए मैंने जन्म दिया—इसका पाप मेरे सिर पड़ेगा।

जोसेफ वहा नही था। उसके बारे मे पूछा। मरियम ने बताया कि वह आज दौरे पर जाने वाला है, पादरी के साथ। तैयारी मे लगा है, तुम चिंता मत करो। "चिंता नही कर रही, मा!" एक आह जैसे मुह से निकली। अपने आप सोचने लगी—क्या जोसेफ लड़की पाकर सुखी नही है ? आज ही दौरे मे···नहीं-नहीं, वह नौकर है। जैसा साहब कहेगा···पर, साहब भी समझता है···जोसेफ चाहता तो आज रह सकता था···पर रहे क्यों ? लड़की क्या उसकी है ?—विलियम। याद आते ही जैसे खून उतर आया। सचमुच लड़की का बाप तो विलियम है। वही विलियम···अपने दांत पीसने लगी, जोसेफ का भागना ठीक है। उसका क्या संबंध लगा, लड़की का गला घोंट दूं! अपना हाथ उसके पास तक ले गयी। उसे छुआ, वह चिल्लायी —किहे किहें ऽऽ किहें ऽऽ।

हाथ रुक गया। उस पर प्यार जगा। कुछ हो, है तो वह मेरे खून का टुकड़ा। यह मेरी बेटी है, मैं इसकी मा हूं। यह बड़ी होगी, मुझे मां कहेगी, मेरे गले से लिपटेगी। मैंने करवट बदली, उसे देखा, लाल रंग का *मांस का छोटा-सा पिंड, जान जैसे उसमें तडप रही थी।* मैंने उसे समेट लिया, बड़ा संतोष मिला, बड़ा सुख मिला।

मरियम ने मुझे पानी पिलाया, फिर दूध दिया। दो मेमें सामने खड़ी

थी, सफेद लिबास मे। उनके हाथ मे किताब थी। एक मेरे पास आयी। किताब पर उसने हाथ रखने को कहा। मैंने हाथ रख दिया। धीरे-धीरे वह जाने क्या बोली। मैंने सिर्फ ईशू…ईशू…नाम दो-चार बार सुना।

उसने दोनों हथेलियां बच्चे को दिखायीं और राग के साथ जैसे कुछ मंत्र पढ़े। मैं सब ध्यान से देखती रही। दूसरी ने हंसकर मेरे सिर पर हाथ फेरा, बोली, "सुखी रहो, ईशू तुम्हारी बच्ची को लंबी उमर दे। बड़े भाग हैं।"

"बड़े भाग है।" मैंने मन में कहा, "यह तो दिख रहा है। बाप दौरे पर… नहीं, नहीं—उसका बाप कहां, उसे क्या वास्ता—बाप तो…टिमकी…" बाजार की याद हो आयी। गुम्मा की शक्ल—कान में उसकी फुसफुसी—"टिमकी अधी हो गयी है—विलियम उसके पीछे पड़ा है। 'टिमकी को बचा लो दीदी, बचाओ टिमकी को। विलियम कसाई है—वह उसे कच्चा खा जायगा।' मैं चिल्ला उठी—"बचाओ!"

ग्रेसरी दौड़ी, बोली, "क्या है, भाभी?" मैं लजा गयी। पर मन में क्रोध भरा था। शरीर कांप रहा था, जैसे सारे शरीर में शीत की लहर समा गयी है।

मरियम आयी, मेरे पलंग को उसने खींचकर एक दूसरे कमरे में रख दिया। वहां कई पलंग पड़े थे। वह बोली, "अब खराब नहीं लगेगा। दिन भर बातें कर सकती हो। यहां तुम्हें दस दिन रहना होगा।"

असपताल में पड़े-पड़े एक हफ्ता गुजर गया था। मेरे कमरे में चार-पांच औरतें और थी। उन सबके बच्चे हुए थे। उनमें एक के तो तीन बच्चे एक साथ हुए। बहुत-से लोग उसे देखने आते थे। वह जैसे तमाशा बन गयी थी। एक नर्स ने उससे कहा, "एक साथ पैदा हुए तीन लड़के बहुत कम जीते हैं। एक-एक कर सब मर जाते हैं। यदि तू इन्हें ईशू को भेंट कर दे, तो हो सकता है ईशू उनकी रक्षा करे।"

यह औरत पास के किसी देहात की थी और न ईसाई थी और न आदिवासी। बोली, "यह मैंने भी सुना है सिस्टर, पर सास रहते छोड़े नहीं जाते।" नर्स ने उसे समझाया, "उसे यहीं पाला जायेगा। उसकी दवा-दारू

और खूब सेवा होगी। पादरी ईशू से उसकी जिंदगी के लिए खूब इबादत करेगा। जरूरत होगी तो वह नयी मशीनों का उपयोग करेगा।" उस औरत ने आंखों में आंसू लाकर हामी भर दी। आखिर करती क्या, यह जानती है कि तीन लड़के किसके बने हैं। फिर थी भी तो वह विधवा, चार माह पहले उसका घरवाला चल बसा था।

मेरी एक बाजू मे रधिया थी, इसी गांव की रहने वाली बैगिन। तीन लड़को को जन्म दे चुकी थी, यह चौथी लड़की है। जिन्दगी में उसने कभी असपताल का मुंह नहीं देखा था। कहती थी, पहिलौठा तो महुआ बीनते समय झाड़ के नीचे ही हो गया था। दूसरा घर मे हुआ था, और तीसरे की बात ही अलग है। बैलगाड़ी मे वह मायके जा रही थी, जंगल मे पेट फटने लगा और एक नदिया के तीर प्रसव भी हो गया। उसका देवर साथ था। वह डरा नहीं। नदिया के किनारे से कांदा की जड़ उखाड़कर उसने अपनी भाभी को खिला दी थी। ऊपर से महुआ की लांदा दे दी, बस क्या था, उसे गरमी मिल गयी। घंटे भर के बाद फिर बैलगाड़ी की यात्रा शुरू। उसने बताया कि इस लड़के का नाम जंगली है। उसने गर्दन उठाकर दरवाजे की ओर देखा, बोली, "आ गया, वह देखो।"

छोटा-सा काला लड़का दौड़कर मां के गले लग गया। उसने उसके गाल चूमे। वह बेहद खुश थी, बोली, "इस बार जबरन यहां ला दिया।"

मैंने कहा, "तेरी मरजी जरूर रही होगी। बिना मरजी के कौन लाता।"

"क्या बताऊं, बहिन!" उसने एक लंबी सांस छोड़ी, "वह कर गया, मेरे लाख मना करने पर भी न माना। कहता था सिर पर बोझ लदा है, उतारना पड़ेगा।"

"कैसा बोझ, मैं नहीं समझी"—मैंने पूछा।

वह बोली, "आठ-दस बरस पहले मेरे ससुर ने चरच से करजा लिया था। वह मर गया, करजा न पट सका। पटता भी कैसे ? बीस के चालीस जो हो गये। रोज-रोज का गोदना, सहन के बाहर हो गया। एक दिन एक नरस ने कहा, 'एक लड़का क्यों नहीं दे देती, सब करजा पट जायेगा।' लड़का दे दूं—मैं सोच रही थी कि उसने हामी भर दी। बोला :

"अब की बेर का टूरा तुम्हारा। जब मैंने कहा कि तुमने यह क्या कह दिया, तो बोला, "और क्या करता रानी, खाने के लाले पड़े हैं, करजा कहां से चुकाऊ। और फिर यह तो घर की खेती है, एक न सही…" कहते-कहते उसने मुह नीचे झुका लिया। उसके गालों पर हल्की-सी ललामी दौड़ गयी।

मैं अचरज में थी, बोली, "पत्थर है तुम्हारा आदमी।"

उसने उत्तर दिया, "ऐसा न कहो बाई, मुझे खूब प्यार करता है।"

"यह कैसा प्यार है ?" मैंने पूछा, तो कहने लगी, "एक लडका देकर अपना खून तो बना रहेगा। पादरी कहता था, अबकी बेर करज न उतारा, तो ईसाई बनना पड़ेगा। जाने कितने दिनो से वह हमारे पीछे पड़ा है, जाने कितने लोगों को भेजता है, सब कहते है ईसाई हो जाओगे तो जिंदगी भर चैन रहेगा।…जो भी हो, धर्म बडी चीज़ है बाई, धर्म बदलने से इत्ता टिक्कस चुकाना मइूंगा नही है।" वह शांत हो गयी। उसने करवट बदल ली, जैसे उसके बाद वह कोई चरचा ही नही करना चाहती थी।

दूसरी बाजू मे गांव के पुरोहित की बहू थी। एक दाई ने आकर उससे कहा, "आज दस दिन हो गये, तुम जा सकती हो।" फिर एक कागज का टुकड़ा उसके हवाले किया, "खर्च का बिल है।" उसने कहा, "जरा पढकर सुना दो।" दाई ने पढ़ना शुरू किया :

डिलरी खर्चा	… ३० रुपया
इंजकसन	… २२ रुपया
खाना	… २० रुपया
नरस, दाई का मिहनताना	… ५ रुपया
कुल	… ७७ रुपया

बिल उसके हाथ मे देकर दाई अपना मुंह उसके कान के पास ले गयी, धीरे से कुछ बोली, तो पुरोहताइन तुनक गयी। चिल्लाकर बोली, "तूने क्या समझ रखा है ? आने दे उन्हें, अभी खाल खिचवा दूगी। इसकी शिकायत पटेल से करूंगी, सरकार के कानों तक तेरी हरकतें भिजवाऊंगी।" दाई वह

कागद रखकर बिना कुछ कहे वहां से चली गयी। मैंने पूछा, "क्या बात थी ?"

उसने कहा, "हसपताल है या बाजार···हरामजादी सौदा करती है। कहती है, 'सतहत्तर रुपया बेकार खर्च करती हो, यह लड़का दे जावो···' चुड़ैल !"

मैं दांतों तले अंगुली दबाकर रह गयी। ग्रेसरी उचकती मेरे पास आयी, "भाभी, भइया लौट आये हैं।" मैंने निराशा भरे शब्दों में कहा, "क्या करूं ? भइया को मेरी क्या फिकर, जैसे सैंया घर रहे, तैसे रहे विदेस।"

वह बोली, "ऐसा न कहो भाभी, वे तेरे लिए एक साड़ी लाये है, जरी लगी, बड़ी सुन्दर है वह।" ग्रेसरी ने उस साड़ी की तारीफ मे कई बातें कहीं। सुनकर मुझे कुछ राहत मिली, क्या यही कम है कि वह मुझे याद रखे हैं।

जोसेफ भी आ गया। उसे देखकर बड़ा आराम मिला। ग्रेसरी ने कहा, "क्यों भइया, भाभी के लिए साड़ी लाये हो न ? वह जरी लगी।"

उसने आंखें दिखायी, बोला, "कौन कहता है ?" ग्रेसरी बोली, "मैं कहती हूं। तुमने बिडल से निकाली थी न। अच्छा भइया, भाभी को छकाना चाहते हो, मैं समझ गयी।" उसने मुह बना लिया, बोला, "इसकी शक्ल है ऐसी साड़ी पहनने की···।" मेरे अरमानों पर घड़ों पानी फिर गया। मैं समझ गयी साड़ी किसके लिए आयी है। साड़ी कोई बड़ी चीज़ नहीं, न मुझे उसकी चाहत है। जिंदगी में जब सब तरफ अंधेरा है तो साड़ी से क्या। पर इससे आदमी का दिल पता लग गया। मेरी आंखों में फरका के सामने खड़ी रूबी की शक्ल झूलने लगी। जोसेफ उससे घुल-घुल बातें कर रहा है।···मैंने करवट बदली। ग्रेसरी ने जैसे सब भांप लिया। मेरे सिर पर उसने हाथ फेरा।

दो मेमें आयीं। वे रोज़ आती थीं। आकर लड़की पर हाथ फेरतीं और उसे आसीस देती थीं। पोथी पर मुझसे हाथ रखातीं थीं और चली जाती थीं। जाने से पहले कभी एकाध उपदेश दे जातीं। आज भी उन्होने यही किया। जाने लगी तो एक ने पोथी खोली, बोली, "मिसेज़ बेंजो···"

मैंने सिर उठाकार उसकी ओर देखा। उसने कहा, "यह अध्याय २३ है। लिखा है अपने बेटों में से पहिलौठे को मुझे देना। सात दिन लों तो बच्चा अपनी माता के संग रहे, आठवें दिन तू मुझको देना…"

मतर दो-तीन बार उसने पढ़ा, फिर आमीन कहकर वह चली गयी।

मेरी आखों से आसू निकल पड़े। मैंने अपनी लाडली की ओर देखा, वह कुनमुना रही थी। ग्रेसरी ने मेरे आंसू पोंछे, बोली, "रोती हो भाभी, अभी तो काफी कमजोर हो, आराम करो।"

मैं एक लंबी सास लेकर रह गयी। सोचने लगी, सात दिन लों तो बच्चा अपनी मा के संग…आठवें दिन तू मुझे…

"तो क्या यह छीन लिया जायेगा, ग्रेसरी ?" मैंने दया भरी आंखों से उसकी ओर देखा। ग्रेसरी की आंखें भी नम थी। वह कुछ न बोली। मैंने फिर पूछा, "बोलती क्यों नही ग्रेसरी, क्या मेरी लड़की का गला…"

"नही-नही, भाभी !" उसने कहा, "ऐसा न कहो, गला नहीं घोटा जायगा। यहां एक नरसिंग होम है, उसमें बड़े लाड़-दुलार से पाली जायगी।"

"वहां क्यों ?" मेरे प्रश्न पर ग्रेसरी ने कहा, "ईशु के नाम पर…बड़ी होकर यह लड़की मेम बनेगी।"

"मुझे मेम नही बनाना ग्रेसरी, मैं अपनी लड़की नहीं छोड़ सकती !" मैं चिल्लायी।

एक नर्स ने कहा, "यह असपताल है बैंजो, धीरे बोलो, दूसरे पेसन्टों को तकलीफ होती है।"

मैं चुप रही। असपताल का कमरा मुझे घूरता नजर आया। ग्रेसरी मेरे बाल सहलाने लगी। मैंने फूल जैसी कोमल बच्ची की ओर देखा, वह मुह बाये देख रही थी। उसकी काली चमकदार आंखें, कोमल बाल—कितनी सुन्दर थी वह ! मैंने उसे छाती से चिपका लिया। उसे दूध पिलाने लगी। मैं सब भूल गयी जब उसने अपने नन्हे मुह को मेरी छाती से लगा दिया। उसका वह स्पर्श, कितना सुखद स्पन्दन था उसमें। कितनी शीतलता, कितनी शांति ! मन की वर्षों की प्यास जैसे पूरी हो रही थी।…मां का सुख अब मेरे पास था। सोचने लगी—यह बड़ी होगी, मां कहकर पुकारेगी, मैं अपनी गोद में लेकर उसे जंगल-पहाड़ घुमाऊंगी। जब जोसेफ दौरे पर

जायगा, तो यह मेरे साथ रहेगी, तब ग्रेसरी की मुझे जरूरत नहीं पड़ेगी। इसकी हंसी और किलकारियों से घर का कोना-कोना भर जायगा। मैं अपने गांव जाऊंगी, आवा से कहूंगी…मेरे घर का धुधला-सा चित्र मेरे सामने आ गया। आवा चूल्हा फूक रही है, तापे खटिया में बैठा चिलम फूंक रहा है, बडा वीर दरवाजे पर डटा है…मेरी छोटी बहन ने पानी लुढ़का दिया, तो बड़े वीर ने चांटा दे मारा। आवा दौडी आयी, 'शरम नहीं आनी, छोटी लडकी भला क्या समझे।' उसने उसे छाती से चिपका लिया। यहां-वहा घूमकर लोरी गाने लगी ·

परजा दुलारी हानी हानी, कजरा री कोयला,
बदरा छिपिस चांद अमरित वीर ला टोलरा।…[1]

कितना अच्छा रस भरा है यह गीत ! एक-एक शब्द से महुआ से जैसे लांदा टपक रही है। वह गोद मे सो गयी, फिर आवा ने खटिया की एक बाजू उसे डाल दिया—

कल्पना मे थी कि मरियम ने मुझे पुकारा। उसने मुझे एक गोली दी, बोली, "बस, दो-तीन दिन बचे है, फिर घर चली जाओगी।" सुनकर मन विकल हो गया। न जाने कौन अंदर से चीख उठा, दो दिन बाद मेरी लाडली मुझसे छिन जायगी। आंखों से आंसू गिरने लगे। मरियम ने आंसू देखे, तो बोली, "यह क्या, रोती क्यों हो ?"

मेरा अंतर फट रहा था। मैंने कहा, "मेरी बच्ची को बचा लो मां, तुम्हारे सिवाय मेरा यहां कौन है।"

"क्या हुआ, वेंजो ?" उसने उतावली से पूछा। मैंने कहा, "क्या तुम्हें नहीं मालूम ? ग्रेसरी तो सब जानती है।" ग्रेसरी मरियम को एक ओर ले गयी और उसने कान मे कुछ कहा। मरियम हंसती हुई मेरे पास आयी, बोली, 'बस, चिंता न करो, उसे कोई नही छीनेगा।"

"कोई न छीनेगा…मेरी बच्ची…" और मैंने उसे फिर छाती से लगा लिया। वह किहे-किहें-किहे कर रोने लगी। उसके इस रोने [illegible] छिपी थी। मुझे लगा जैसे वह कह रही है, "कहीं नहीं ज।

1. हे दुलारी बेटी, धीरे-धीरे सो जा, मैं कोयल से काजल छीनकर .
चांद बादल में छिपा है। लेकिन फिर भी बड़े वीर उससे अमृत .

जाऊंगी, कही नही जाऊंगी।

तु ई अजान लोकि
साले साले सोबेदा सुआ सुआ सोबेदा।...[1]

मैं गा रही थी और मुन्नी को गोद मे लिये बरामदे में टहल रही थी। आज मन कास जैसा फूला था, तन केले के पेड़ मे लगे पत्ते की तरह झूल रहा था। रुई जैसी कोमल, फूल जैसी खिली मेरी प्यारी बिटिया, किहे-किहे-किहे···कितना सुख है मां बनने में ! वह मुझे ही तो पुकार रही है, हमेशा पुकारा करती है। और किसी को वह नही जानती। जानती भी हो, तो परवाह नही करती बस, तोते जैसी उसकी एक ही रट है—मा, तू कहा ? मां, तू कहा ? अपनी छोटी-सी आंखो से वह इस लम्बी-चौड़ी दुनिया को देखती रहती है, देखती रहती है। सारे ससार को वह इन बिन्दु जैसी आंखों में समेट लेती है। उसे क्या दिखता है, क्या नहीं, वह जाने, पर मैं यह जानती हूं कि मैं उससे बाहर नही हूं, कभी नही होती, हो भी नही सकती। वह रोती है, स्वर बाधती है, पहले धीरे, फिर कूकी भरकर; कूकियों की माला पिरोती है, तब स्वर में एकरसता आ जाती है। मोम-से दोनों नन्हे पैरों को दोनो हाथों के बीच जैसे कस लेना चाहती है। उसकी सारी देह कांपती है, उसका अंग-अंग जैसे फूट रहा है, सिर्फ मुझे बुलाने को। मुन्नी का रोना सुनकर मेरा अंग-अंग पुलक उठता है, ठीक उसी तरह जैसे पके गेहूं की बालिया पुरवैया के झोके पाकर झूम उठती है। मुन्नी को देखकर मेरा बचपन लौट आता है। मेरे भूले सपने सामने नाचने लगते है। मैं सब कुछ भूल जाती हूं। उसे उठाकर गोद मे ले लेती हूं। उसकी मुलायम देह,

१. ए बहन, तू बहुत अनजान है, स्यूना झाड की तरह तू हलकी है, सुकुमार है। साले पेड़ के समान तू सबसे हिल-मिल जाती है, सुए के समान तू सबसे बातें करने लगती है।

लगता है अपने में भर लूं। छाती से उसे चिपकाती हूं, तो फिर हटाने का जी नहीं होता।

यौवन खिला फूल है, 'आलाकन वा लेकन डिडा सोमय' पर वचपन उसके भी आगे है। यौवन में विपदा ही विपदा है। विपदा के पहाड़ हमेशा सिर पर मंडराते हैं, देह कसकती है, अपने आप काटती है, नागिन जैसी चाहे जब मचलती है, कोई कहां तक उस पर काबू करे। जरा-सी लगाम छूटी कि मन का घोड़ा हवा हुआ, सवार को कहां पटकता है, वह खुद नहीं जानता। पर यह वचपन···आह, कहीं फिर वापस मिल जाता!

मेरी खुशी की सीमा नहीं, "तुई अजान लोकबिरे स्यूनी···"

"ओ हो!" ग्रेसरी आ धमकी—"आज क्या हो गया, भाभी! तुम्हारा तो चेहरा वदल गया है।" मैंने जैसे सुना ही नहीं, अपनी धुन में मस्त गाती रही, झूमती रही :

तुई अजान लोकविरे स्यूनी झाटी मुचकलिया
साले माले मोवेदा गुआ सुआ सोवेदा।
छीतून्वो जीवना रे स्यूनी झाटी मुचकलिया
साले साले मोवेदा मुलक सुआ मोवेदा।

"आज ये तीर कैसे?" ग्रेसरी ने कहा, "मुझे स्यूना झाड़ बना दिया, तुम भी कमाल की हो, भाभी!"

"न बनाऊं तो क्या करूं, ग्रेसरी!" मैंने बात ऐसी जमायी, जैसे सचमुच उसके लिए गा रही थी, बोली, "आखिर तेरे भोलेपन की भी सीमा है।" उसके पास जाकर मैंने उसकी नाक दबायी और कहा, "क्या हाल है डाकगर का? कोई पाती आयी?" वह शरमा गयी। उसकी भोली आंखों ने बात कह दी। गर्दन हिलाकर उसने हामी भर दी, बोली, "आयी है।" मैंने पूछा, "क्या लिखा है?" उसने अपनी फिराक के सीने से कागज का टुकड़ा निकाला और कुम्हड़ा की बौन की तरह लचकते हुए, बड़े अभिमान से उसे पढ़ने लगी :

मेरी रानी,

आकर बदल गया हूं—समझ नहीं आता, क्या हो ग
लगता, आंखों के सामने तुम्हारी सूरत होता चमक/ना।

में, बाजार मे, घर मे, सडक मे, नदी में, पहाड में, सब जगह तुम हो—तुम कहां नही हो ? मेरी आखें आजकल और कुछ देख ही नहीं पातीं। कल की ही बात है, एक पेशेन्ट बड़े भरोसे से—खैर, इसे जाने दो। ग्रेसरी, मुझे नौकरी छोड़ देनी पडेगी। तुम्हारा बिलगाव—मैं मर जाऊगा···"

पढते-पढते उसने पाती को सीने से लगा लिया। वह चारों तरफ चक्कर काटने लगी, बोली, "और लिखा है, अब बड़ा डाक्टर बन रहा हूं, तनखा पूरे छह सौ मिलेगी—भाभी, तू मां से कह दे न, मेरा ब्याह जल्दी कर दे। कही और···" इतना कहकर ग्रेसरी ने अपने दोनों हाथों से अपना मुंह ढंक लिया। वह अनजाने ही यह सब कह गयी थी। मैंने पूछा, "तनखा कितनी कही ?"

वह बोली, "छः सौ, छः सौ, पूरे छः सौ भाभी, जानती हो कितने होते हैं ?"

"नहीं," मैंने कहा। वह बोली, "पूरे तीस कोरी।"

"तीस कोरी !" मेरे अचरज का ठिकाना नही। मैं सोच ही नहीं सकती कि तीस कोरी कितने होते हैं। कभी देखने मिले हो तो जानू। मैंने कहा, "कल कहूंगी, जरूर कहूगी ग्रेसरी, तेरी शादी अभी होना चाहिए।"

वह मुझसे आकर लिपट गयी, "माफ कर दो भाभी, जीभ भी कितनी बेलगाम है, कहां छूट गयी।"

"ठीक जगह छूटी है"—मैंने उसका हाथ पकड लिया, बोली, "चलो, चाय पियेंगे।"

ग्रेसरी ने मुन्नी को मेरी गोद से ले लिया। वह उसे खिलाने लगी। उसके साथ न जाने क्या-क्या बातें करने लगी। बार-बार चूमकर इंगलिसतानी में वह जाने क्या बक रही थी। तब तक मैं चाय बना लायी। हम चाय पी रहे थे, कि मरियम आ गयी। हमने अपने हिस्से से थोड़ी-थोड़ी चाय निकालकर एक नया हिस्सा तैयार किया और वह मरियम को दिया। मरियम ने ग्रेसरी के हाथ मे मुन्नी ले ली। वह उसे खिलाने लगी। बोली, "बैंजो !"

मैंने कहा, "हां, मां।"

"इसका नाम क्या धरा है ?"

"नाम से क्या धरा है मां, फिर यह तो सियानों का काम है, तुम्हीं धर दो न।"

मरियम बड़ी खुश हुई, बोली, "अच्छा, सोचती हूं।" मुह में अंगुली रखकर वह कुछ सोचने लगी। मैं बैठी-बैठी ग्रेसरी को ताक रही थी। वह आंखें मटकाकर कभी मुझे और कभी पाती को देखती थी। मैं उसका मतलब समझ गयी।

मैंने कहा, "मां, एक बात कहूं?"

उसने कहा, "एक क्यों, दो कहो, बेटी।"

मैं बोली, "बात तो एक ही है मां, ग्रेसरी अब काफी स्यानी हो गयी है।"

"हां, बेंजो, उसकी शादी करनी है। मुझे भी फिकर है पर जब कोई मिले, तब न।"

"वह डागधर···" मैं कह रही थी कि मरियम ने मुझे बीच में रोक दिया, बोली, "सपने देखती हो? कहां हम और कहां वह, राजा और रक का भेद है।"

मैंने कहा, "नही, मा, कोई भेद नही है। डागधर बाबू ग्रेसरी को खूब चाहते हैं। उससे ब्याह करने को तैयार हैं। उसने ग्रेसरी के नाम पाती···"

ग्रेसरी ने पाती मरियम की ओर फेंक दी और वहां से उठकर चली गयी। पर ग्रेसरी भाग न सकी। मैंने देखा दीवाल के पीछे वह खड़ी थी इस ओर कान लगाये। मरियम ने पूरी पाती पढी। बड़ी देर तक आंख फाड़े उसे देखती रही, फिर खूब जोर से हसी। इतने जोर से कि मैं घबड़ा गयी। मैंने दौड़कर उसे पकड लिया, पूछा, "क्या हो गया, मा?"

वह उसी तरह हसती रही। काफी देर के बाद हसी रुकी तो बोली, "सिर से पहाड उतर गया, कहा है ग्रेसरी?"

ग्रेसरी दौड़कर आ गयी। मरियम ने कहा, "लिख दे, महीने के अन्त में।"

ग्रेसरी ने दौड़कर अपनी मां का गला चूम लिया। मरियम ने भी उसे अपने मे समेट लिया, बोली, "अच्छा हुआ, बिटिया, मैं तो दिन-रात सोच में मरी जा रही थी।"

"बड़े भाग है ग्रेसरी के, मां !" मैंने कहा, "डागधरन बनेगी, गिटपिट बोलेगी। क्यों ग्रेसरी, फिर हमारी याद भी रहेगी ?" ग्रेसरी मेरा हाथ पकड़कर झूल गयी, बोली, "मेरी अच्छी भाभी, तुझे भूलूंगी ?" फिर बोली, "अरे, मुनिया का नाम तो तुमने बताया ही नहीं।"

मरियम ने अपने सिर पर हाथ फेरा, बोली, "जॉन मेरी कैसा रहेगा ?"

ग्रेसरी ने कहा, "पूरा फिट बैठा है।" मरियम मुझसे बोली, "क्यों बेटी, नाम पसंद है न ?" मैंने कहा, "मेरी पसंदगी से क्या, फिर नाम में धरा क्या है, जो तुम ठीक समझो।"

'तो यही ठीक है, जॉन मेरी...जॉन मेरी... पर तुम यह नाम कह सकोगी ?"

मैंने दो-तीन बार दुहराया—"जॉन मेरी..."

ग्रेसरी बोली, "बस, ठीक है, जॉन मेरी।"

मरियम उठकर आने लगी तो जोसेफ आ गया। उसे और ग्रेसरी को देखकर बोला, "वाह, खूब ! आज तो खासी पंचायत जुड़ी है, किसका गला घोंटा जा रहा है ?"

"गला नहीं घोंटा जा रहा, भैया !" ग्रेसरी बोली, "यहां तो मुन्नी का नाम धरा जा रहा है। जानते हो क्या नाम धरा है हमने उसका—जॉन मेरी, पसन्द है न ?"

वह कुछ न बोला। उसे जैसे इससे कुछ सरोकार नहीं था। मरियम से कहने लगा, "विधान सभा का एक मेम्बर कल आने वाला है, कहीं असपताल देखे। जरा पादरी को खबर कर देना। वह जाने क्या करता है। कहीं कुछ ऊटपटांग रिपोर्ट सरकार को न दे दे। उसकी सरकार है न। मनमाना करता फिरता है, हमारी मिशनरियों के तो पीछे पड़ा है। लोगों से हमारे विरुद्ध जाने क्या-क्या बकता है। हमारी सेवा देखता ही नहीं।"

"बकने दे !" मरियम बोली, "अपना कुछ नहीं बिगड़ता। इनके 'भाखड़' अपना बाल भी बांका नहीं कर सकते।"

ग्रेसरी ने पूछा, "सो भला क्यों ?"

वह बोली, "सुनते-सुनते मेरी जिंदगानी बीत गयी। कितने आये और

चले गये, यहां क्या बिगडा। ये बड़ी-बड़ी बात करना भर जानते हैं।"

"ठीकक हती हो, मरियम!" जोसेफ बोला, "एक गांव में वह गया था, तो लोगों से कहता था— 'तुम्हारा देश आजाद हो गया है। अंगरेज चले गये हैं। अब तुम अपने देश के राजा हो।' इसे सुनकर एक किसान ने करारा तमाचा दिया, कि बस कुछ न पूछो। बोला —भूखों मर रहे है, कहता है राजा हैं। सारे अफसर अपना खीसा भरते हैं, डांस जैसा रियाया को चूसते हैं, कहते है आजाद हुए है।'

"जब उसने कहा कि—भाइयो, ईसाइयों से बचकर रहो, ये तुम्हारा धरम खराब करते हैं, तुम्हारी जात बदलते है, तो एक गोंड ने भरी सभा में खडे होकर कहा था—काना दूसरों की आंख देखता है, अपनी फुली नही निहारता। धरम को क्या हम चाटेंगे? पहले हमारा पेट भरो, दो जून हमे खाने को दो, हाथ भर पहनने को कपडा दो, तब धरम की बातें करो। जब पेट मे उमेठ पड़ती है, तो धरम चिड़िया जैसा फुर्र हो जाता है। उसने तब कहा था—मैं तुम लोगों का नेता हूं, तुम्हारा दु ख हमारा दु.ख है। तुम लोग अपनी मांग मेरे सामने रखो, मैं उसे मनीसतर के कानों तक पहुंचाऊंगा, तुम्हारी माग पूरी कराऊगा, न करेंगे तो भूख हड़ताल करूंगा। मेरे रहते तुम लोगो पर अत्याचार नही हो सकता। सब भाई हमारा साथ दें।—सबने मिलकर चिल्लाया—साथ देंगे—तो उसने कहा—बोलो भाइयो जय हिन्द्। सबने दुहराया—जय हिन्नन्न।

"महात्मा गाधी की जय!"

'गांधी महातमा की जय!

'जय जवाहिर लाल की!

'जै जवाहिर की!'

"बस, मिटिंग खतम हो गयी। नेताजी ने जो पीठ फेरी, तो आज लौं उस गांव में मुंह दिखाने का नाम नहीं लिया। पादरी बताता था कि—ये लोग यहां बडी-बड़ी बातें करते है, पर मनीसतरों के सामने मुंह नहीं खुलता। विधान सभा में पीछे सीट पर बैठे ऊघते रहते हैं और जब लीडर कुछ कहता है तो हाथ उठा देते हैं, बस। ये हमारा क्या बिगाड़ेंगे?"

लम्बा बिरतान्त सुनाकर जोसेफ ने लम्बी सांस ली, जैसे उसे आराम

मिला। मरियम ने कहा, "मैंने एक बात और सुनी है, जोसेफ !"

"क्या ?" जोसेफ ने पूछा। वह बोली, "आयर समाज के कुछ लोग आने वाले है, वे ईसाइयो की भी जात-बदल करते है। उन्हे फिर हिन्दू बनाते है।"

"तुम भी पागल हुई हो, मरियम !" जोसेफ ने कहा, "पैसा बिना दुनिया मे क्या धरा है। वह तो पानी है, पानी। एक बूद न मिले, तो बेड़ा पार। कहा से जुटायेंगे ये आयर समाजी इत्ता पैसा और ईसाई कब तक हिन्दूपन धरेगे। जब भूखों मरेंगे तो पादरी के ही पैर पकड़ेंगे। तुम्ही बताओ, ऐसा न होता तो हम क्यो इस धरम मे आते ?"

मरियम को इससे जैसे सन्तोख मिला बोली, "ठीक कहते हो, अपने को पैसे की क्या कमी। पादरी कहता था—इस साल से दुगुने रुपये आने लगेंगे। तब अपनी तनखा भी बढ जायेगी।"

"रुपये कहां से आते है, मा ?" मैंने मरियम से पूछा। वह बोली, "समुद्र पार कोई देश है, वहा से आता है।"

"वे क्यो भेजते है ?" मैंने पूछा तो जोसेफ को बुरा लगा, बोला, "तू क्या समझे, भेजते है इसलिए कि हमारा पेट भरे। 'बाइल' मे लिखा है कि दुनिया ईशू की है।" मैंने मन ही मन ईशू को सिर झुकाया। सचमुच वह बडा है। इतने बड़े-बड़े महल और अटारी उसने ही बनवाये है। धन्य है ईशू।

मरियम ने मुन्नी को जोसेफ के हवाले किया और चल दी। जोसेफ ने नाक-भौह सिकोड़ते मुन्नी को ले लिया। ग्रेसरी को खासा मजाक सूझा, वह ताली बजाकर उचकने लगी, "भइया ने मुन्नी को ले लिया, भइया ने मुन्नी को ले लिया !" जोसेफ चिढ गया, उसने मुन्नी मेरे हवाले की। ग्रेसरी भला चुप होने की ! बोली, "शरमा गये भइया, ले लो मुन्नी को। लो, मैं चली जाती हूं।" और वह दौड़ते भाग गयी।

मुन्नी को देखकर मेरा प्रेम उमडा, तो मैं उसको चूमने लगी। जोसेफ से मैंने कहा, "एकाध नया कपड़ा ला दो इसके लिए।" उसने जैसे बात टालते हुए कहा, "ला दूंगा।"

मैं बोली, "कितनी अच्छी है यह, जरा देखो तो सही।"

'तू ही देख···कोयले की दलाली मुझे पसन्द नहीं···किसी की थाती, किसी के सिर !" मुह बनाकर वह बैठ गया। सुनकर मैं रह गयी। सोचती थी, मुन्नी आ गयी है तो मन बहल जाया करेगा, जोसेफ की नजर सीधी होगी, हमारा घर सुखी होगा, हम दोनों के बीच अनजाने जो एक खाई बन गयी है, भर जायेगी; पर सब सपना-सा लगा यह सोचना·· मैं आह भरकर रह गयी। सोचने लगी, आखिर जोसेफ को उससे प्रेम क्यों हो ? वह सच कहता है, किसी की थाती किसी के सिर। कौन अपने सिर बला लेना चाहेगा। इसका बाप तो विलियम है···खूखार जानवर, जानवर, राक्षस ! जाने ऐसी कितनी उसके नाम पर रो रही होंगी···ओफ, मैंने कितना बड़ा पाप किया है ! इस पाप के बाद मैं जोसेफ से प्रेम पाने की इच्छा करूं, कितनी विचित्र विडम्बना है यह, कांटे बोकर फल पाने की आशा करना! मैंने मुन्नी की ओर देखा, उसका चेहरा विलियम से बिलकुल मिलता था, जैसे विलियम ही रूप बदलकर आ गया है। जिससे डरती थी उसी को गोद में लिये खिला रही हूं। उसे ही चूमती हूं, उसे प्यार करती हूं।···जब तक यह रहेगी, जोसेफ मेरा नहीं हो सकता। मैंने अपना दाया हाथ उठाया, उसके गले तक ले गयी। गले मे हाथ लगाया तो वह चीख उठी—मांऽऽऽ ! लोहे की गरम सलाख जैसे किसी ने मेरे हाथ मे चुभा दी। मांऽऽऽ, यह मेरी बेटी है, मैं इसकी मां हूं। यह मेरे खून का एक टुकड़ा है। दुनिया भर की उपेक्षा और लाछन सहकर भी मैंने इसकी जान बचायी, अब उसी का खून कर दू ? नहीं, यह नहीं हो सकता। दुनिया देखे न देखे, भगवान सब देखता है। इत्ता बड़ा पाप करने की हिम्मत मुझमे नहीं है। मैंने मुन्नी को ताकत भर अपने मे समेट लिया। उसे चूमने लगी, "मेरी अच्छी बेटी, तू मेरी ही बेटी है न ! हां, मैं तेरी मां हूं। कह तो भला।" मुन्नी अपने आप चिल्ला उठी—मांऽऽऽ। उसे लेकर मैं चारों ओर चक्कर काटने लगी और खिलाने लगी।

अंदर आग जल रही थी। मुन्नी को वहीं सुलाकर रसोईघर में चली गयी। लौटकर आयी तो देखती हूं, जोसेफ उसे गोद मे लिये है। मेरी ··· का ठिकाना नहीं। जोसेफ ने उसे अपना लिया···पर यह विचार देर न रहा। वह पल भर में ही गायब हो गया और मन शंका से

जोसेफ पर मुझे भरोसा नही। उसने मुन्नी को जरूर बुरी नियत से लिया है। वह मेरी लडकी का गला घोंट देगा, उसे मार डालेगा। पर उसे छीनती कैसे ? मैंने एड़ी ऊपर उठाकर देखा तो जोसेफ उसे सचमुच खिला रहा था। दोनों हाथों मे लेकर उसने मुन्नी को ऊपर उठाया और चूम लिया, 'बुइच, बुइच'।

मैं बोली, "कितनी अच्छी लडकी है यह, फूल जैसी। तुम्हे पसद है न?"

जोसेफ चौंका। शायद वह सोच रहा था कि मैं काम में लग गयी हूं। उसने मुन्नी को नीचे डाल दिया, बोला, "बडी अच्छी है। वह भी तो अच्छा था, ठीक उसी की जैसी नाक·· वाह मेरे मित्र विलियम !"

विलियम का भूत फिर पीछे पड़ गया। साल पूरा हो गया, मैं जोसेफ को अभी तक नही समझ पायी। आखिर वह चाहता क्या है ? कभी उसे प्यार करता है, कभी उस पर आग बरसाता है। ग्रेसरी कहती थी कि किताबों मे लिखा है कि औरत एक पहेली है, जिसे मर्द कभी नही समझ पाता। मैं कहती हूं कि जिस किताब मे यह लिखा है, वह गलत है। औरत बिलकुल सीधी होती है। उसकी हर बात सीधी है। उसमे कही कोई उलझन नही। उलझन मर्द मे है। कब वह सूरज की धूप और कब चाद की चादनी बन जाय, पता नही। पता लगाना भी आसान नही। कितना उलझा है मर्द का मन, मकड़ी का जाला उससे सरल है। घने जंगलों के रास्ते उससे ज्यादा खुले हैं। जोसेफ को समझने की मैं जितनी कोशिश करती हूं, वह उत्ता ही समझ के बाहर होता जाता है। आखिर क्यों ? कंगला कहता था, जब हम ब्याह कर लेंगे तो दूध और पानी की तरह मिल जायेंगे। मरद, उसकी मिहरिया, दो शरीर पर एक आत्मा होते हैं। उनमे कोई भेद नही, कोई दुराव नहीं···जोसेफ से ब्याह कर चुकी हूं, फिर भी हम दोनों तेल मे पानी की तरह रहते हैं। जो मैं चाहती हूं, जोसेफ नही चाहता। जो वह चाहता है, उससे मुझे नफरत है। दुनिया कितनी चक्करदार है, उससे मनचाही चीज पाना पत्थर से पानी मांगना है।

तो मैं अब क्या करूं ? जिस आशा के भरोसे अब तक जी रही थी, वह टूट रही है। लड़की हमारी जिंदगी के फूटे बाध को और फोडकर बड़ा कर

रही है। सोचा था, वह बांव को सहारा देगी और पानी थमेगा। उसका गला घोटना चाहती हूं, पर हाथ कमजोर पड़ जाते हैं। मा बनना भी कितनी बड़ी कमजोरी है। तब औरत अपनी मरजी बाजार मे बेच देती है। मैंने कितनी बार चाहा, इससे पिंड छूट जाय, जोसेफ के कलेजे से लगकर मैं मन भर रो लूं, उसे भी खूब रुलाऊ—इत्ता कि दोनो अपना मैल धो डालें, फिर वह रूबी को बिसर जाय, विलियम के बारे मे सोचना छोड़ दे और मैं भी खुले मन से उससे मिल सकू। मैल बह जायेगा और हमारे मन तेल-पानी का नाता छोड़ देंगे, तब हम जो संतान पैदा करेंगे, वह हमारी होगी। जोसेफ उसका बाप, तब उसे चूमेगा, खिलायेगा और खुश होगा।···जोसेफ के सामने आकर मन मोम बन जाता है। वह भी अजीब है, मैं नही रहती तो उसे उठाकर खिलाता है; जैसे ही मैं देखती हूं कि वह उससे दूर भाग जाता है, आग उगलने लगता है। और यह क्या, जोसेफ मुन्नी से जितनी नफरत करता है, जितना कतराता है, मेरा प्यार उतना ही बढ़ता है। कितना अच्छा हो यदि जोसेफ थोडे दिन जी भरकर मुन्नी से प्यार कर ले। तब तक मैं अपने मन को पत्थर बना लूं। पर उससे कहे कौन ? और कहूं भी तो क्या वह मानेगा ? जोसेफ का मन बांका है, वह किसी के बंधन में क्यों रहेगा ? आखिर मर्द जो है। मर्द खुला है, बिलकुल खुला। बंधन तो औरत के साथ लगा है—बचपन में मां-बाप का बधन, जवानी में मर्द का बंधन, बुढ़ापे में लडके का बंधन; इन सबके परे हरदम समाज के झूठे बंधन। बंधन कब नहीं है। कहां नहीं है।

आकाश में बादल छाये थे। सारे दिन वे सूरज के साथ आंख-मिचौनी खेलते रहे। संझा हो गयी, सूरज चला गया, पर बादलों ने पीछा न छोड़ा। वे चांद को ही परेशान करने मे लग गये, जैसे उनका काम यही है कि किसी को चैन न लेने दें। पूर्णिमा का दिन, नीले आकाश में पूरा खिला चांद सफेद... कमल-सा छिटका सहचरी पवन को साथ लिये मोंगरा जैसी सुगन्ध ... था; पर आज न वह चांद था, न वह चांदनी। दल के दल बादल थे, वे उसकी गर्दन पकड़े थे जैसे बिल्ली चूहे पर टूट पडी है। ... लगता, धरती पर उसके कंपन की लहर फैल जाती। दूसरे ही

छटपटाकर छूटता, तो धरती का कोना-कोना गिल उठता।

सामने के मैदान मे भारी मजमा जमा था। सैकडो आदमी जमा थे। गांव के गोड नरायनदेव की पूजा कर रहे थे। यह उनके उत्सव का दिन है। बरसभर मे एक बार आता है। तब वे नरायनदेव को मनाते है। गाव मे कोई आफत न आये, इसकी मनौती मानते है। मैं कई बार यह उत्सव देख चुकी हू। देखा भर नही, उसमे भाग भी लिया है। इस बार गांव मे एक बड़े अफसर आये हैं। कहते हैं, जिले के वे सबमे बड़े साहब है। जिले का सारा काम उनके कहे अनुसार होता है। उनकी मरजी के बिना पत्ता भी नही हिलता। कई लोगों के मुह स मैंने सुना है कि वे अन्नदाता है। उनके उत्सव के दिन उनका अन्नदाता हाजिर रहे, इसगे बडी क्या बात होगी। इसी से गांव के गोडों की खुशी की हद नही।

ग्रेसरी के साथ मैं भी यह देखने चली गयी। जोसेफ से चलने को कहा, पर वह नही गया। पता लगा, रूबी मिलने आने वाली है। ठीक भी है, उसे नाराज कर वह कैसे रह सकता है। रूठ गयी तो···

मैं ग्रेसरी के साथ एक कोने में खडी हो गयी। एक किसान ने आगे आकर मैदान के बीच का भाग झाडू से साफ किया। दूसरी लडकी ने वहां लीपना शुरू कर दिया। जब सारा गोबर जमीन ने सोख लिया तो उसने मक्का के आटे से चौक पूरा और उस पर कच्चे चावल बगरा दिये। पास खड़े ओझा ने चकमक आगे बढाई। एक अधेड़ आदमी ने उसे लेकर दीपक की जोत जला दी। जोत जलते ही सब गुनिया की ओर देखने लगे। वह नरायनदेव की पूजा में लगा था। उसने दो-चार मंतर पढे और कंडा की आग में घी डाला तो धुआं निकलने लगा। सबकी आखें पास बंधे सुअर पर अटक गयीं। वह जमीन में मुह लगाये डरा-सा खड़ा था। सारे चावल जमीन पर पड़े थे। ओझा के चेहरे पर चिन्ता की दो-चार रेखाएं उभरी। मैं समझ गयी गुनियां क्यो चिन्तित है। सुअर पर अभी मन्तर का असर नहीं हुआ था। उसने एक नारियल फोडा, थोडी लांदा चढाई और फिर जोर-जोर से मंतर पढ़े। सुअर झूमने लगा। ओझा ने उचाट भरी। पीछे से एक जवान ने आकर मूसर से सुअर की पूंछ काट ली। पूछ कटते ही नरायनदेव की आत्मा सुअर पर उतर आयी। उसने फिर खूब चावल खाये। ओझा ने सुअर को सिन्दूर

लगाया। दो-तीन आदमी पास से दौड़े। सुअर की पिछली टाँगें पकड़कर उसका मुँह उन्होंने जैसे ही गड्ढे में डाला कि वह दर्द-भरी आवाज से चीख उठा। चीखे क्यों नहीं। गड्ढे में उबलता पानी जो भरा था। सुअर की चीख ने औरतों के चेहरे चमका दिये। मैं भी खुश हुई। नरायनदेव खुश हो गया था। वह प्रसन्न हो गया है तो सारे गांव में सालभर कोई बाधा नहीं आयगी। सुअर के खून की धारा को देखकर मेरे ओठ अपने आप खुलने लगे। तभी सामने औरतों का दल गा उठा :

> तेर ना नी न ओ, तेर नाना के नांव रे,
> तेर ना ना, ना ना तेर नाना के नांव रे,
> नेर ना ना ओ…

औरत का साथ ढोलकियों ने दिया। नगाड़ेवालों ने सारी ताकत लगा दी। ढोलक पर थाप की धम्म गूंज उठी और कमर मे हाथ डाले कई जोड़े मैदान मे उतर पड़े। ढोल और नगाड़े बजते रहे, जवान जोड़े अपने रंगीन पैंतरे दिखाते रहे और अधेड औरतें अपने गुजरे जमाने की याद मे मस्त उनके गीत का साथ देती रही। ओझा और मुखिया बेहद खुश अफसर की तरफ नजर लगाये रहे। अफसर टकटकी बांधे देख रहा था। बीच-बीच में पास बैठे किसी दूसरे अफसर से वह कुछ पूछता तो, वह बड़े अदब से कान के पास कुछ फुसफुसा देता। पादरी भी साहब की बाजू मे जमा था। मैं चुपचाप गोद में मुन्नी को लिये सब देख रही थी। ग्रेसरी मेरे कंधे पर हाथ रखे थी। मेरी आखो के सामने कई जाने-पहचाने चेहरे नाच उठे—कगला, लरकू, गुम्मा, सरपा, झरपन और…सारा मैदान घूमने लगा। यह क्या ? मैं भी नाच रही हूं, कंगला की कमर में हाथ डाले हू। कंगला मेरी कमर को कसकर पकड़े है। मैं थक गयी—कमर छोड़, शरम नही आती। ऐसी पकड़ी जाती है। मैंने हाथ मारा तो ग्रेसरी चौंक उठी। बोली, "क्या है, भाभी ?"

मैंने आंखें पोंछी—एक बार, दो बार, तीन बार…कहा उड़ गयी थी। बेलगाम मन कितना धोखा देता है। "कुछ नही, ग्रेसरी, जरा पांव दरद कर रहे थे।' उससे क्या कहती, बात बनानी पड़ी। अपनी बिसरी जिन्दगी को कहां तक देखूं, कहां तक कोसूं। मैंने कहा, "अब चलो, ग्रेसरी !"

"नही, भाभी, मजा आ रहा है।"

मेरा दरद बढ रहा था। नाच और गाने की हर आवाज़ एक कांटा थी। उसे मजा आ रहा था।

चंदा की धुंधली छाया स्याह पड गयी। दो-चार बूंदें आयी। हल्की-सी हलचल मच गयी, पर नाच-गाने में अतर नही आया। मैंने एक चीख सुनी। देखा, सब लोग दौड रहे हैं। "क्या हो गया? क्या हो गया?" सब दूर हल्ला मच गया।

ग्रेसरी ने मेरा हाथ पकडा, बोली, "भाभी, चल देखें, क्या बात है?"

मैं उसके पीछे-पीछे बढी। लारू-काज[1] के बीच यह क्या? पास जाकर पता लगा, अफसर कुर्सी से गिर पडा है और बेहोश हो गया है। पादरी यहां-वहां देख रहा था···और बार-बार जोसेफ को बुला रहा था। जोसेफ वहां नही था, कोई उत्तर न पाकर वह बड़बडाया, "नालायक बदमाश होता जा रहा है।"

मरियम सामने आ गयी तो उससे कुछ कहा। वह दौड़ गयी और तुरन्त कुछ ले आयी। वह डागघर की मशीन थी। उसने वह मशीन झट कान मे लगायी और अफसर की जांच की—एक इंजकशन, तीन इंजकशन ···गोली एक, दो, तीन···सिर पर पानी···असर किसी का कुछ नही। पादरी घबराया था, कभी नारी देखता, कभी कान मे लगी मशीन टटोलता। मुंह से कुछ कहता। अफसर के साथ जो दूसरा साहब आया था, वह और भी डरा था। वह क्या करे? कहां जाय? एकाएक यह क्या हो गया?—सभी सोच में पड़े थे।

घंटा बीत गया। अफसर ने आंख न खोली। ओझा वही खड़ा देख रहा था। आगे आया और पादरी से बोला, "हुजूर, अब दो मिन्ट मुझे दें।"

"नॉन्सेंस!" पादरी बोला, "तू क्या करेगा?"

अफसर के साथ वाले साहब ने ओझा की पीठ पर हाथ रखा, बोला, "क्या चाहते हो?" उसने कहा, "हुजूर, अन्नदाता का मरज मैं जानता हूं। आपके देखते पाच मिन्ट मे खड़ा न कर दिया तो···" साहब ने एक अजीब

१. गोंड और बैगाओं का एक वार्षिक उत्सव। ऊपर जो उत्सव की घटना बतायी गयी है, वह उत्सव का ठेठ रूप है।

मुसकराहट से उसकी ओर देखा और सिर हिलाकर काम करने की अनुमति दे दी।

झाड़ू का एक गुच्छा लेकर ओझा जमीन पर बैठ गया। सामने सूपे में उसने थोड़े चावल डाले। हाथ में पानी लेकर उसने मंतर पढ़ा। एक मतर खतम होता और एक चुल्लू पानी वह अफसर के मुंह पर दे मारता, दूसरा चुल्लू पानी वह फिर लेता और फिर मंतर पढता। बडी देर तक यही चलता रहा। ओझा ने धूप लगायी और अफसर के चारों ओर दो चक्कर काटे कि वह अफसर सांप की तरह ऐंठने लगा। ओझा ने आगे बढ़कर एक हाथ से उसकी कलाई पकड़ी, दूसरे मे झाड़ू को उसके चारों ओर घुमाया। फिर मंतर पढे।

काली है, कंकाली है, टीलेवाली है,
गली की गाव की है,
मेरे हाथ वीर भवानी
खड़ी पास जल देवता रानी
छूत छायी छा छा—छा छा
कौन लगा वता ?
मुखिया, अंगिया, बहरी
चैंतू, जेठू, सिगरू—छा छा—छू. छा छा—

मंतर दुहराये, जमीन पर लादा डाली और दाहिने हाथ मे पानी लेकर जैसे ही उसने अफसर के मुंह में चुल्लू मारी कि उसने आखें खोल दीं। ओझा का चेहरा खुशी से फूल उठा। उसने खड़े होकर फिर मंतर पढा। अब अफसर एकटक ओझा की ओर देख रहा था। ओझा ने उसकी नजर बांध ली थी। हाथ आगे-पीछे खींचते हुए उसने पूछा, "कौन है ?"

अफसर ने उत्तर दिया, "छे—री···नहीं रे, च—ल।"

ओझा फिर वोला, "ठीक वता, कौन है ?"

अफसर ने जवाब दिया, "रे—च—ल।"

"इन्हे छोड, मालिक हैं, अन्नदाता हैं।"

"नहीं, नहीं छोडूंगी।"

"आखिर क्यो ?"

"हमारी जात मारता है।"

"जात मारता है ?"

"हां, ईसाई हम मरजी से बने।"

"बनी रह, कौन रोकता है; पर अफसर को छोड़।"

"नही, रपट देगा, सरकार से झूठ बोलेगा।"

ओझा गुस्से मे आ गया। खड़े होकर उसने अफसर की चोटी पकडी। बोला, "नही छोड़ती ?"

"नही—खून पी जाऊगी।"

ओझा ने चोटी और जोर से खीची। एक तमाचा अफसर के गाल मे जैसे ही मारा कि वह घबरा गयी, बोली, "छोडती हूं—छोड़ती हूं।"

अफसर धम्म से नीचे गिर पड़ा। ओझा हाथ झाडता हुआ उठ बैठा। उसने अफसर के साथ वाले साहब के पैर पकड़ लिये, बोला, "हुजूर, माफ कर दो, मैंने सरकार को नही मारा, चुड़ैल को मारा था।" इसी समय अफसर ने आखें खोल दी। पादरी ने सहारा दिया, वह टिककर बैठ गया। ओझा हाथ जोड़कर खड़ा हो गया, बोला, 'हुजूर, चुड़ैल ने आपको दबा लिया था।" पादरी ने आंखें निकाली, "कहा की चुड़ैल ? कैसी चुड़ैल ?" "वही हुजूर, जो सकूल के पास रहती है, सकूल झाड़ती है—रेचल—जो पहले छेरी थी, इसी साल उसने जात-बदल की है। छटी चुड़ैल है, सरकार।"

"चुप रह!" पादरी ने डाटा। अफसर से बोला, "आदमी बदमाश है, इसी ने कुछ कर दिया होगा, अब सफाई देता है। जगली जाने क्या-क्या विद्या जानते हैं।" ओझा ने कहा, "गुस्ताखी माफ हो, हुजूर। वह ईसाई अभी बरस भर पहले बनी है, मैं उसे जन्म से जानता हूं। जाने कितने लोगो को खा गयी। खुद अपने आदमी को उसने नही छोड़ा—एक बार पटेल के लडके को भी खा गयी थी।" पादरी गुस्से मे था। बोला, "लड़का खा गयी!" और जोर से हसा।

ओझा ने हाथ जोडकर कहा, "हां, हजूर! जब पटेल के घर लड़का हुआ, तो उसकी छाती पर एक उल्लू बैठा था। पटेल की बड़ी लडकी साल्हो ने उसे ढेला मारा तो वह ढेला उठाकर ले भागा। उसी के बाद लड़का दिन-

दिन घुलने लगा।"

पादरी ने खिसियाकर अपने दांत निकाल दिये, बोला, "चाल चलता है ! अभी कुछ दिन सीख रे।" ग्रेसरी मेरे पास खड़ी थी। वह भी हंसी। बोली, "भाभी, कितना चालाक है !" मैंने कोई जवाब नहीं दिया, मैं देख रही थी, उस गरीब का क्या होता है। कहीं बेचारा उपकार के बदले पीसा तो नहीं जाता। मैं जानती हूं, वह ठीक कह रहा था, चुड़ैल इसी तरह जान लेती है। उल्लू के भेष में वह चुड़ैल रही है। उस उल्लू ने ढेला पानी में भिगोकर किसी टोरिया में रख दिया होगा। जैसे-जैसे ढेले का पानी सूखता गया, पटेल का लड़का सूखा होगा, और अन्त में बेचारा चल बसा होगा।

पादरी यह मानने को तैयार नहीं हुआ। बोला, "सरकार, यह सब ओझा की बदमाशी है। मैं रेचल को जानता हूं, बड़ी शरीफ औरत है।" अफसर चुप था, मैं पटेल की ओर देख रही थी। वह भी चुप बैठा तमाशा देख रहा था। मैं नहीं समझ सकी कि वह क्यों नहीं बोलता। पादरी ने कहा, "सरकार, इस पर मुकदमा चलायें।" साथवाले साहब ने एक सिपाही को इशारा किया। उसने दौड़कर ओझा के हाथ पकड लिये। मुझे काटो तो खून नहीं। आंखों में आंसू आ गये। जमाना कितना खराब है ! नेकी का बदला बदी में मिलता है। पादरी हंसा, अंग्रेजी में उसने कुछ कहा। तभी पटेल अपनी जगह से उठा। उसने अपने साथ वाले साहब को एक बाजू बुलाकर कुछ कान में कहा। साहब और पटेल दोनों खूब हंसे। ओझा को छोड़ दिया गया। इत्ता ही नहीं, पटेल ने उसे पांच रुपया इनाम दिया और सिपाही को रेचल को गिरफ्त करने का हुक्म दिया। सिपाही डरा तो बड़ अफसर ने कहा, "हंटर ले जा।"

पादरी उस सिपाही की ओर तब तक देखता रहा, जब तक वह आंखों से ओझल नहीं हुआ। बात की बात में सारी भीड़ हट गयी। मैं जाने लगी तो पादरी ने पूछा, "जोसेफ कहां है ?" मेरे बोलने के पहले ग्रेसरी ने जवाब दे दिया, "हम क्या जानें ?" पादरी ने कहा, "देखो, घर हो तो तुरन्त भेज देना। आजकल तो वह कामचोर होता जा रहा है। जाने कहां रहता है।" जोसेफ को पादरी ने कामचोर कहा, तो मुझे बहुत बुरा लगा। लम्बी सांस लेकर रह गयी।

लौटकर देखा कि वह चरच मे रूबी के साथ घूम रहा है। ग्रेसरी ने दौड़कर उससे पादरी की बात कही। वह रूबी को छोड़कर सिर पर पैर रखकर भागा।

बाहर हवा तेज होती गयी। पानी की बूंदो की जगह धार पडने लगी।

दूसरे दिन मुझे पता लगा कि रेचल को रस्से से बांध दिया गया है। आज उसे जिहलखाना ले जायेंगे। पादरी पटेल पर नाराज है, पर पटेल बराबर हंस रहा है। पादरी उसका क्या बिगाडेगा। कहते हैं वह रात अफसर ने पटेल के घर ही बितायी थी। रातभर दोनों में चर्चा होती रही। पादरी का चेहरा उतरा था। जोसेफ को उसने बुलाकर डाटा ही नही, मारा भी है। कहता था, यदि उसने डीटी (ड्यूटी) मे फिर गफलत की, तो निकाल दिया जायगा। उसका कहना था कि यदि जोसेफ वहा रहता, तो बात इतनी न बढ पाती। वह रेचल के पास जोसेफ को भेजना चाहता था, जिससे वह अपना मंतर वापस ले ले और साहब के रहते तक गांव छोडकर कही चली जाय। जोसेफ रेचल के यहां बहुत दिन तक रहा है। वह जोसेफ को मानती भी है। उसका कहना रेचल मान लेती, यह पादरी का विश्वास था।

डांट पीकर जोसेफ जब घर आया, तो मुझ पर बेकार बरसने लगा। बोला, "मुझे बुलाया था तो तूने मुझे खबर क्यो नही की ?" मैं चुप रही। मन में आया, मुंहतोड़ जवाब दे दूं। सहने की भी हद होती है। उल्टा चोर सिपाही को डांटे। अपनी करनी नहीं देखता, मुझे आख दिखाता है। रूबी के मारे जब फुरसत मिले! एक दिन वह चाट जायगी। पादरी धकियाकर उसे चरच की नौकरी से निकाल देगा, तब रूबी भी साथ छोड देगी। पर उसकी आंखें हो तब न। उसकी आखों मे तो रूबी समायी है, कब तक रहेगी, भगवान जाने। पर उल्टा-सीधा सब कुछ भोगना तो मुझे ही पड़ेगा। मैं घंटो अपने भाग को कोसती रही।

१०

मैं फिर इसकूल जाने लगी थी। अब यहां के वातावरण से परिचित भी हो गयी थी। इसकूल में कई सखियों से मेरी दोस्ती हो गयी थी, [illegible] मेरे किलास की और कुछ दूसरी किलास की।

मेरे साथ किलास में बैठती थी लाजो। उसका बाप गांव का [illegible] था। सारा गांव उसको मानता था। पिछले दिन जो अफसर इस गांव [illegible] करने आया था, उसी के यहां ठहरा था। उसी के बाप ने [illegible] कराया था, वरना कौन पादरी की आंखों से काजल [illegible] करता है। लाजो उमर में पन्द्रह-सोलह की रही है। [illegible] सुडौल। उसके चेहरे पर लाज का अनोखा परदा-सा [illegible] तो बड़ी भली लगती थी, लगता था धतूरे का फूल जंगल [illegible] करना लाजो को आता नहीं था। जब कोई उससे [illegible] लाजवन्ती की तरह सिकुड़ जाती थी। ऐसे [illegible] देखती। उसकी चिहुंटी ले देती तो वह [illegible] धीरे से चिहुंक उठती। तब उसके गाल भी [illegible] उठते थे। लाजो सैकड़ों में एक थी और सारे [illegible] तरह सोचती जैसे असपताल की पट्टियां।

मैंने पूछा, "लाजो, तुम तो बड़े [illegible] नहीं पढ़ा?" उसने बताया कि पटेल [illegible] पसन्द नहीं करता। पटेल को भी [illegible] है, पर वह उद्योगी था, अपने [illegible] लिख लिया कि कोई उसे [illegible] कहना था कि पढ़ने-लिखने से [illegible] पढ़ाई-लिखाई के पक्ष में [illegible] घर भी कैसे, वह आदमी [illegible] बड़ी भारी जमींदारी [illegible]

से निकल जाता हजारों सिर उसके सामने झुक जाते। कहते है, अंगरेजी राज मे भी उसका बडा आदर था। वह बार-बार दिल्ली बुलाया जाता था और अंगरेज सरकार ने उसे बडी-बडी पदवियां दे रखी थीं। छह माह हुए वह सौ बरस की उमर में मर गया। उसके मरते ही पटेल का जमाना आ गया और उसके रहते वह जो न कर सका था, करने लगा। सबसे पहले उसने लाजो का नाम इसकूल मे लिखाया, लाजो उसकी अकेली लडकी है, इसलिए वह चाहता है कि वह खूब पढ-लिख ले। पटेल ईसाइयों के खिलाफ रहता है, फिर भी उसने अपनी बेटी को इस इसकूल मे क्यों भेजा, यह बड़े अचरज की बात थी। गांव भर मे उसकी चरचा थी पर असलियत यह है कि इसके सिवाय गाव मे और कोई इसकूल है ही नही। सुना है पटेल कई दिनों से जी-जान से भिडा है कि इस गांव मे एक और इसकूल खुल जाय। पिछले बरस वह किसी मनिस्तर को लिवा ले आया था। जाच-पडताल के बाद उसने गाव मे इसकूल खोलने को कह दिया था। बरस बीत गया, कुछ नही हुआ। पटेल भी वेचारा क्या करे, लडकी को पढाना है, इसकूल मे भेजना ही पडा। लाजो कहती थी, "बेंजो, मेरा बाप मेरे ब्याह की फिकर में है। दिन-रात शादी की चरचा करता है। चार-छह लड़के मुझे देख भी गये हैं, पर किसी ने पसन्द नही किया। उनका कहना था कि मैं अपढ और गंवार हूं और देहात मे रहती हू। मेरी सारी आदतें देहातियों जैसी होंगी।" उसने बहुत दुखी होकर कहा, "तुम अच्छी हो बेंजो, तुम्हारा ब्याह हो गया। जाने मेरा ब्याह कब होता है। ब्याह चाहे जब हो उसके पहले की यह धूम नही देखी जाती। किसम-किसम के लड़के आते हैं और किसम-किसम की बातें पूछते हैं। बताने मे शरम आती है। तुम्हारी जात अच्छी है, उसमे यह बखेडा नही है। जिसे तुमने पसन्द किया वही तुम्हारा हो गया।" मैंने दर्द भरी एक सांस ली और बोली, "दूर के ढोल सुहाने होते हैं, लाजो। दूर से पहाड़ कितना सुन्दर और हरा-भरा दिखता है पर उसके भीतर जाओ तो पता लगे, कितने कांटो से भरा है वह।"

लाजो अपनी बेबसी के किस्से रोज सुनाया करती थी। भगवान ने उसे खाने-पीने को घर मे खूब दिया है पर चैन नहीं। कोई न कोई चिन्ता हर आदमी के सिर पर लाद दी है। कभी कोई आदमी बिना चिन्ता के

नहीं होता, चाहे वह राजा हो या रंक। जब कुछ सोचने को न हो तब भी यह चिन्ता रहती है कि भरे पेट सोये घर के लोग सुबह फिर भूखे हो जायेंगे, घर के कोने-कोने में फिर धूल जम जायेगी और कपड़े सबेरे फिर गन्दे हो जायेंगे। लाजो की चिंता लगभग इसी तरह की चिंता थी।

लाजो ने बताया कि इस इसकूल की सारी मेडम क्वांरी हैं, उनमें एक का भी ब्याह नहीं हुआ। ब्याह की बात वे कभी सोचती ही नहीं। पर संझा को हर मेडम एक न एक आदमी के साथ घूमने जाती है—बडी दूर—झुटपुटे मे लौटती है। मेरे लिए यह बडी बात न थी पर लाजो ने एक दूसरी बात मेरे दिमाग मे डाल दी थी। वह कहती थी कि इनके घूमने में बड़ा राज है। वह आदमी उनसे प्यार करता है। "प्यार करना क्या बुरी चीज है ?" जब मैंने उससे पूछा, तो वह खूब हंसी। बोली, "शादी के बिना प्यार कहा होता है। शादी के पहले प्यार नहीं करना चाहिए।"

मैंने कहा, "यदि प्यार शादी में बदल जाय तो क्या खराब ?"

वह बोली, "बहुत खराब है।"

क्यों खराब है, इसका उत्तर उसके पास नहीं था। कहती थी कि दादा ने यही बताया है। उसकी बातों से मुझे पता लग गया कि लाजो ने कभी किसी से प्यार नही किया है। वह प्यार क्या है, शायद यह भी नहीं जानती। उस संसार से वह एकदम दूर है। उसे क्या मालूम कि प्यार एक वरदान है। वह एक देवता के मन्दिर का ऐसा अनोखा प्रसाद है, जो साधक को ही मिलता है। वह प्रसाद पाना सबकी बिसात नहीं। लाजो क्या जाने कि प्यार जिन्दगी है, उसके बिना आदमी का जीना अपनी लाश ढोने के सिवाय और कुछ नहीं है। फिर औरत की जिन्दगी, वह तो प्यार के सतरंगे इन्द्र-धनुप पर ही जीती है। जिस दिन उसे प्यार नही मिलेगा, वह या तो खत्म हो जायेगी या बाज के मुंह में दबे पक्षी की तरह छटपटायेगी। इस दूसरी हालत में भी उसका अन्त पास ही समझना चाहिए।

इसकूल की मेडम क्वांरी हैं, जिन्दगी भर क्वांरी रहेंगी, यह अजीब बात है। जिन्दगी भर कौन क्वांरा रहा है…भगवान भी नहीं। फिर ? मैंने खूब सोचा पर कुछ पल्ले न पडा।

मेरे किलास की मेडम का नाम मिस्पा था। हम लोग उन्हें मेडम ही

कहते थे। यह नाम तो मुझे उस दिन पता लगा, जिस दिन पादरी ने उसे पुकारा था। सुनकर वह दौडकर भागी थी। मिस्पा सुभाव मे बड़ी अच्छी थी। वह किलास भर में मुझे सबसे ज्यादा प्यार करती थी। कहती थी, "तुम्हारी गोंड जाति वडी भली है, बेंजो। वडी सीधी है। मैं उस जाति से वहुत प्यार करती हूं।" मिस्पा किसी गांव मे कभी ईशू का प्रचार करती थी। कहती थी, "एक उरांव ने ईशू के नाम पर एक गीत लिखा था। मुझे वह वेहद पसन्द है।" मैंने पूछा, "कैसा गीत है, मेडम?" उसने राग के साथ वह गीत गा दिया·

यीशू सहीं खो खा खा एन भला
किरेनि, एन भला किरेनि।
ससार न कूस निभ चेईआ भला
किरेनि, एन भला किरेनि।

उसका गला वडा मीठा था, वडा सुरीला। गीत गाते-गाते वह अपने को भूल गयी। मेरा हाथ पकडकर नाचने लगी। बोली, "खूब नाचो बेंजो, मुझे तुम्हारा नाच पसन्द है।" नाचते-नाचते उसने कहा, "बाल डान्स में यह मजा नहीं आता। जव तुम्हारा नाच देखती हूं, तो लगता है मैं भी तुम्हारी ही जाति की होती। तुम्हारी जाति का आदमी औरत को वहुत प्यार करता है। मैं ऐसा ही प्यार मांगती हू।" यहा लाजो की बात मुझे याद आ गयी। मैंने कहा, "मेडम, आपके यहां तो प्यार करने की मनाही है।" उसने डांट दिया। वोली, "कौन कहता है? हमारे यहा तो कहा है कि बैरियों से भी प्यार करो।"

"वह···कहा होगा, मेडम!" मैंने झिझकते हुए कहा, "पर मैंने सुना है कि कोई मेडम किसी आदमी से प्यार नही कर सकती।" मैंने कह तो दिया, पर मन ही मन डरने लगी थी। कही मिस्पा नाराज न हो जाय, पर वह मुझसे लिपट गयी और रोने लगी। मैं रोने का कारण नही समझी। चुपचाप उसका रोना देखती रही। थोडी देर रोने के वाद वह बोली, "तुमने ठीक सुना है, बेंजो। हम लोग आदमी से प्यार नहीं कर सकता, जानवर से प्यार कर सकता है। इसलिए मैंने एक कुत्ता पाल रखा है। उसका नाम है बेजल। उससे मैं खूब प्रेम करती हूं। वह भी मुझे चाहता है।"

एक दिन मिस्पा मुझे अपने घर ले गयी। उसका घर कागज के रंगीन फूलों से खूब सजा था। टेबल पर एक तस्वीर उसने रखी थी। बिना पूछे ही उसने बताया कि इस आदमी का नाम बेजल है। तीन बरस पहले मिस्पा शहर की एक चरच में रहती थी। वह वहां के अंगरेजी इसकूल में पढाती थी। बेजल भी उसी इसकूल में मासतर था। वहीं दोनों में प्यार हो गया। जब पादरी को उनके प्यार की खबर लगी, तो उसने रपट कर मिस्पा को इस खेड़े मे भिजवा दिया। बेजल को बिना मिस्पा के अच्छा न लगा और वह लन्दन वापस चला गया। अब भी मिस्पा के पास उसके खत आते है। तब वह उन्हे घंटों पढती रहती है। बेजल का नाम न भूले, इसी से उसने अपने प्यारे कुत्ते का नाम बेजल रख लिया है।

मिस्पा बड़ी बातूनी थी। बोलती, तो घंटों बोलती रहती। जबान उसकी कभी नही थकती थी। लहर मे वह जाने क्या-क्या बक जाती। कभी कहती, "पादरी बड़ा खराब है, बड़ा इसटिक है, बेफजूल डाटता रहता है।" कभी कहती, "पादरी खूब सुन्दर है। उमर मे अधेड भले ही हो, पर खूबसूरती मे अभी छैला है। बातें बडी प्यारी-प्यारी करता है। वह जब कभी मुझे पगली कह देता है तो मेरा दिल बांसों उछलने लगता है···पर है वह बड़ा 'ईडियट', कभी उसने मेरा 'किस' नही लिया।"

मैं ध्यान लगाकर मेडम की बातें सुन रही थी। वह कह रही थी, "बाइबिल मैं रोज पढती हूं। बड़ी अच्छी किताब है वह। उसमे लिखा है—अपना सारा धन छोड़ दे और मेरे पीछे चला आ। तू ही बता बेंजो, मैंने अपने पास धन ही क्या धरा है।" इत्ता कहकर वह मेरा मुंह ताकने लगी। मैंने कहा, "मेडम, आपने कुछ नही रखा?" मेडम ने जोर से हंस दिया, बोली, "तुम बडी समझदार हो।" वह मुझे दूसरे कमरे मे ले गयी। वहां दो काली पेटियां रखी थी। उसने एक पेटी खोली। उसमे बडी कीमती साड़ियां रखी थीं। कुछ साड़ियों मे तो सोने की जरी भी लगी थी, बडी चमकदार, बड़ी लचकदार! मैंने कभी इत्ती कीमती साड़ियां नही देखी। कपड़ा भी इत्ता कीमती हो सकता है, इसकी कलपना मैं नही कर सकती। मेडम ने बताया कि एक-एक साडी डेड सौ रुपये की है। इनमे से दो-चार साड़ियां उसे बेजल ने भेंट की थीं। कुछ साड़ियां एक और आदमी ने उसे दी थी।"

उस आदमी का नाम मेडम ने नही बताया। यही कहा कि ये साड़ियां उस दरियादिल प्रेमी की यादगार हैं। वह प्रेमी कौन था, यह पूछने की मेरी हिम्मत नही हुई। मुझे इससे मतलब भी नही था।

दूसरी पेटी मे सोने-चांदी के जेवर रखे थे। उनमे दो-तीन तो सोने के बड़े-बड़े हार थे। उन्हें देखकर मैंने कहा, "मेडम, इन्हे क्यों नही पहनती?"

वह बोली, "बड़ा जी करता है बेंजो, इन्हे पहनू, सज-धजकर निकलू और नयी दुलहिन की तरह सिंगारकर कभी अपने आप हसू, कभी अपने आप मुसकाऊं और कभी शरमा-शरमाकर अपना आंचल ठीक करूं, पर बुरी तरह फंस गयी हूं। पादरी चाहता है, यही बेकार सफेद कपड़े पहने रहूं। इन्हे पहने देख लेगा तो मेरे सिर पर बज्जर टूट पड़ेगा, वह या तो ये कपडे मुझसे छीन लेगा या मुझे नौकरी से ही निकाल देगा। गर्दन फंसी है, क्या करूं?"

उसके चेहरे पर दु ख की छाया थी। वह कहती गयी, "फिर मेरे ऊपर बड़ी जिम्मेदारी भी तो है। मुझे तुम जैसी लडकियों को सिखाना है, बेंजो। बाइबिल मे कहा है · "

"कि अपना सारा धन छोड दे और मेरे पीछे चला आ!" मैंने बीच में रोककर कहा।

वह बडी खुशी हुई, बोली, "तूने तो सारी बाइबिल पढ डाली।"

"तुम्हीं ने तो अभी कहा था, मेडम!" मैंने कहा। उसने अपने सिर पर हाथ रख लिया, बोली, "आजकल के इस्टूटन्ट ऐसे ही होते है। अपनी मेडम को ही घास चराते है।" गले पर जोर देकर उसने कहा, "झूठ बोलती है, मैंने कब कहा?" मैं घबरा गयी। मेडम को क्या हो गया? अभी-अभी कही बात बिसर गयी। उसमे मुंह कौन लगाता, सो मैं चुप ही रह गयी।

कमरे से उठकर मिस्पा बाहर आ गयी। मैं भी उसके पीछे हो ली। पलका मे बैठते हुए उसने कहा, "बेंजो, तुम मुझे क्या समझती हो?"

"अपनी गुरु, मेडम!" मैंने कहा।

उसने नाक सिकोड़ी, बोली, "बुद्धू हो, अपना दोस्त समझो।"

"यह कैसे हो सकता है, मेडम?" मैं कह रही थी कि उसने बीच मे रोक दिया। कहने लगी, "अभी दोस्त समझ, फिर मालिक समझना पड़ेगा।

एक दिन मैं भी पादरी बनूंगी, बेंजो। कोई बड़ी चरच मेरे अधिकार में होगी। फिर जानती हो मैं क्या करूगी ?"

उठकर वह कमरे मे आगे-पीछे घूमने लगी। बोली, "तुरत एक आस्टन कार खरीदूगी। तुझे मैं अपना डावर बना लूंगी, तुझे बनना पड़ेगा, समझे ? और हां···" उसने गले को दबाते हुए कहा,"मैं इसकूल के उसूल बदल दूंगी। तब इसकूल मे कोई क्वांरी लडकी काम न कर सकेगी···अंधेर है; पचास बरस की बुढ़िया अपने को कुमारी कहती है। कोई भला क्वांरा रह सकता है ? हर्गिज नही, कितना बड़ा अंधेर है हमारे यहां। मैं कानून बना दूंगी कि इसकूल मे सिर्फ ब्याही औरत और मरद ही काम कर सकते हैं। मैं यह दरेस भी बदलवा दूगी, बेंजो। आडर दूंगी कि कीमती फिराक और साड़ियां पहनी जायं।···लंदन मे चाहे जो हो, यह हिन्दुस्तान है। हम यहां के वासिन्दे है, तो यहां की तरह रहेंगे।"

मैं आंख फाड़कर मिस्पा की तरफ देख रही थी। अनार के दाने की तरह उसके गुलाबी ओठ कैंची जैसे ऊपर-नीचे चल रहे थे। उसे न जाने क्या हो गया था। कह रही थी, "पढ़ने वाले हर लड़के और लडकी को पचास रुपया महीना तनखा दिलाऊंगी। आखिर पढने मे भी तो दिमाग खरच करना पड़ता है। कोई बेकार अपना दिमाग भला क्यों लगाये।"

मिस्पा की बातो मे मुझे मजा आ रहा था। वह आकाश मे उड रही थी। उसकी हवाई कल्पना ऊंची उडान भर रही थी। मैंने उसकी बातों मे बाधा डालना ठीक न समझा। यदि इन बातो से उसे संतोख मिलता है, तो मैं क्यों पैर अड़ाऊं ! इत्ते दिनों से मैं यह देख रही थी, उसकी आदत ऐसी ही है। न जाने वह कहां-कहां की बातें करती है। कब क्या-क्या कहती है, उसे खुद अपना कहा याद नही रहता। अभी-अभी वह कह रही थी, "हर पढ़ने वाले लड़के-लड़की को पचास रुपये महीना तनखा दिलाऊंगी।" अब कहने लगी, "पचास रुपये फीस लगाऊंगी, पढ़ाई मुफ्त में होती है। हर ऐरा-गैरा इसकूल पढने चला आता है।" मिस्पा ने बताया कि जब वह पादरी बनेगी, तो बेजल को लंदन से तुरत बुलवा लेगी और अपना डावर बना लेगी।

मिस्पा ने अपने रहने के लिए एक आलीशान बगला बनवाने की बात भी कही। कहती थी कि १५ कमरे, २५ दरवाजे और ४५ खिड़कियों वाला घर

बनवाऊंगी। उस घर का मालिक मेरा कुत्ता बेजल होगा। उस महल का नाम 'बेजल हाउस' रखूंगी। सामने घंटी होगी। हर आने वाला पहले घंटी बजायेगा, तब मैं अपने चपरासी को भेजकर उसे अन्दर बुलाऊंगी। उससे बात मतलब की करूंगी। यदि वह बेकार बात करने आयेगा, तो कान पकडकर निकलवा दूंगी। आखिर पादरी कोई छोटा अफसर होता है! उससे बात करने वाले हर आदमी को डिसिप्लिन रखना चाहिए।" मिस्पा ने बात करते-करते अपना लिबास उतार दिया। एक नयी फिराक निकालकर वह पहनने लगी, बोली, "तुम चुप क्यों बैठी हो?" मैंने कहा, "बातें अच्छी लग रही है, सो कान लगाये सुन रही हूं।"

उसने मुझे डाट दिया, बोली, "नॉनसेन! चुप, बात जानवर सुनता है। जब मैं अपने बेजल से बात करती हू, तब वह चुपचाप मेरे पैरो पर अपना सिर रखकर सारी बातें सुनता रहता है। आदमी को बात करना चाहिए। तुझे पूछना चाहिए, मैं कब पादरी बनूंगी? कब बेजल आयेगा? कब तुझे डावर रखूंगी?·· चुपचाप मुह ताकती रहती है, उल्लू कही की! चल, भाग यहा से।"

अभी-अभी वह मीठी-मीठी बातें कर रही थी, अब भगाने लगी। अजीब औरत है! निश्चय ही उसके दिमाग के किसी न किसी कोने मे खराबी है। मुझे आज तक ऐसी औरत देखने नही मिली। हवाई किले बनाना और रंगीन दुनिया के सपने देखना, क्या सचमुच इत्ता आसान है? क्या मिस्पा सचमुच कभी पादरी होगी? बंगला बनवाएगी? सोचते-सोचते उठकर बाहर आ गयी। गेट से निकली थी कि उसकी नौकरानी मिल गयी। पूछा, "मेडम क्या कर रही है?" मैंने कहा, 'आसमान मे उड रही है।"

वह शायद मेरा मतलब समझ गयी थी। उसने अपने सिर पर हाथ मारा, "किससे पाला पडा है। औरत आधी पागल है। दो महीने से उसने मेरी तनखा नही दी। मागती हूं, तो कहती है पादरी बनूंगी तो कई गुनी तनखा देकर तुझे डावर बना लूगी।"

मेरी हंसी का ठिकाना नही। हंसी के मारे पेट फटने लगा। पेट मे हाथ लगाये किसी तरह घर आयी।

इसकूल मेरे लिए अब नया नहीं था। मैं सब कुछ पहचानने लगी थी, सब बातें सीख गयी थी। एक किताब भी मैं पूरी पढ़ चुकी थी। मिस्सा मुझ पर बड़ा ध्यान रखती, इसलिए मैं दूसरे किलास में बैठने लगी। अ, आ, इ, ई से लिखना शुरू किया था और अ-अनार का, आ-आम का, ई-ईशू का से पढ़ना शुरू किया था, अब तो फर्राटे के साथ पूरी किताब पढ़ लेती थी। चिट्ठी लिखना भी मुझे आ गया था। प्रेमरी ने इन बातों में मेरी बड़ी मदद की। अकेले इसकूल की पढ़ाई में यह सीखना कठिन था। मिस्पा इसकूल के बाहर पढ़ाने की अपेक्षा मुझसे बातें ज्यादा करती थी। वह आदत से लाचार थी, उससे जब मेरा सम्बन्ध बढ़ा तो वह प्रेम की कहानियां कहने लगी। मिस्पा का ज्ञान गहरा था। दुनिया भर के किस्से उसे याद थे। रोमियो-जूलियट और पंचम जार्ज के प्रेम-किस्से से लेकर हीर-राझा और लैला-मजनूं की कहानी वह जानती थी। कहती, दुनिया भर में इससे अच्छे जोड़े नहीं। कभी वह कह जाती कि उस जमाने मे वही जूलियट थी, वही लैला थी, वही हीर थी। बेजल को वह अपना राझा मानती, उसे अपना मजनूं कहती और उसे ही रोमियो कहकर लम्बी सास लेती थी। उसका नाम लेते-लेते वह कभी रो भी देती थी। कहती, समुद्र पार बैठा है, दगा दे गया, छलिया है। छल-कपट की दास्तान कहने लगती, तो उनका भी अन्त नहीं। कहती, तुम्हारा किसन भी छलिया था। हजारों गोपियों से उसने आख लगायी थी, पर सबको रोता-कलपता छोड़कर भाग गया था। मेरा बेजल छलिया है, पर किसन नहीं। उसने सिर्फ मुझसे प्यार किया था। महादेव के बारे मे मिस्पा कहती थी कि वह भी धोखेबाज है। उसने पारवती को फजूल तरसाया। पारवती के वह बड़े गुन गाती, दो-दो जनम उसने शंकर का हाथ गहा। राम के बारे मे मिस्पा के खयाल निराले थे। वह कहती थी कि राम सच्चे प्रेमी नहीं थे। भीलनी से उन्होंने प्यार किया था, शबरी के जूठे बेर आखिर उन्होंने क्यों खाये? भला कोई पराई औरत की जूठन चाटता है? लक्षमन ने सूरनपखा की नाक इसलिए काटी कि वह लक्षमन से प्यार करने को तैयार नहीं थी। राम ने ताड़का को इसलिए मारा कि वह राम से नफरत करती थी। सीता को वह सती मानने को तैयार नहीं थी। पर इस सम्बन्ध में उसके विचार डगमग होते थे। कभी कहती, सीता ईसाई

जाति की थी, बड़ी अच्छी औरत रही है वह। सबके सामने खुलेआम उसने आदमी चुना। जब राम ने दगाबाजी की और रावन उसे अपने घर ले गया, तब वहा भी उसने प्रेम दिखाया। एक ईसाई लडकी दुनिया की हर चीज को प्यार करती है। राम का राज हो या रावन की लका, आखिर सब जगह अमल राज ईशू का है। फिर नफरत कैसी ?

मिस्पा की कोई बात ठीक हो, तो कहूं। कब किसे भला कह दे, किसे बुरा—पता नही। मेरी पुरानी जिन्दगी के बारे मे जब उसने सुना तो मुझे सलाह दी कि मैं विलियम से ब्याह कर लू। विलियम के नाम पर जब मैंने खून उगला तो फिर कंगला का हाथ पकडने की बात उसने कही। जब मैंने यह न माना तो बोली, किसी तीसरे का हाथ मैं पकड लू। पर जोसेफ का हाथ मुझे छोड़ देना चाहिए। वह शराबी है, उसकी नियत साफ नही, आखिर चपरासी है। चपरासी की औरत कहाना अच्छा नही लगता। मैं सब सुनकर चुप रह जाती। अकेले मे उसकी बातें याद कर खूब हंसा करती थी। ग्रेसरी से जब मैंने मिस्पा की बातें बतायी तो वह भी हंसी। वह मिस्पा को खूब जानती थी। कहती, "उसके दिमाग का इसक्रू ढीला है। बेचारी बहुत छली गयी है। कई आदमियों से उसने प्रेम किया है, पर सब छोड़कर चले गये। तभी से उसका दिमाग अटपटा गया है।" ग्रेसरी ने बताया कि जिस वेजल के किस्से कहते वह थकती न थी, वही उसे खूब मारा करता था। एक बार वेजल ने कोड़े से मिस्पा की मरम्मत की थी, इसलिए कि मिस्पा किसी दूसरे आदमी के साथ शराब पीकर अकेले कमरे मे बॉल डान्स कर रही थी। कहते है, वेजल बडा नेक आदमी था। मिस्पा के पीछे वह पागल था, पर उसकी हरकतें देखकर वह हिन्दुस्तान छोड़कर लन्दन चला गया।

ग्रेसरी के यह सब बताने के बावजूद मिस्पा से मेरा लगाव कम नही हुआ। वह मेरा गम गलत करती थी। कभी जोसेफ मे मेरा झगडा हो जाता, तो मैं मिस्पा के घर चली जाती थी। उसकी अनोखी बातें सुनकर मैं अपना सब दुःख भूल जाती थी। दूसरों के लिए वह चाहे जैसी हो, मेरे लिए तो वह वरदान थी। उसके पास जाते ही मेरा भार हलका हो जाता। कभी-कभी ग्रेसरी मेरे साथ उसके यहां जाती, तो खूब मजाक करती थी। मैं ग्रेसरी को मना करती थी। कुछ भी हो, मिस्पा उमर मे बड़ी है और गुरु

भी है। पर ग्रेसरी की आदत ही चुलबुली थी। कभी-कभी तो मिस्सा इत्ती चिढ़ जाती कि ग्रेसरी को मारने भी दौड़ पड़ती थी। ग्रेसरी ने भी कभी बुरा नहीं माना। सब कुछ वह हंसकर टाल जाती थी।

एक दिन जोसेफ ने मुझसे पढ़ाई-लिखाई के बारे में पूछा। मैंने खुश होकर सब बिरतान्त कह डाले। दो-तीन दिन पहले मैंने एक पाती लिखी थी, अपने आवा और तापे के नाम। जिन्दगी में पहली बार पहली पाती लिखी थी यह। मैंने उसे पढ़कर जोसेफ को सुना दी :

चेतमा से पहुँचे बंजारी का राम राम पियारे आवा व तापे व वीर व पूरा पड़ोस के कक्, मम्, भई, भुजाई सबको जो जो हो जान पहचान का। आगे हाल ये कि मैं इहां खूब अच्छी। मेरा जोसेफ अच्छा आदमी है। उसने ये गुन मेरे कूं सिख दीया हे। बाबिल बरीया किताब हे। उसमें बड़े व अच्छे अच्छे बिरतान्त लीखे हे। गसरी अच्छी गोई हे। खूब मीठी मीठी बात करता हे।

जोसेफ ने सुना तो खुश हुआ। बोला, "मेरा भी परनाम लिख दे।" मैंने उसका परनाम पाती में जोड़ दिया। पाती लिखकर मैं कितनी खुश हुई, कह नहीं सकती। लगा जैसे मैंने कोयल की आंखों से काजल छीन लिया है। आवा पाती सुनेगी, तो हवा में उड़ने लगेगी। तापे सुनेगा तो खुशी से पागल हो जायगा। वह पाती बंचाने पटेल के पास जायगा। जब पटेल देखेगा तो मेरे आवा और तापे के भाग सिराहेगा।

बाइबिल मैं रोज पढ़ती थी। पढने बैठती तो घड़ल्ले से पढ़ जाती। अब मैं ईशू को अच्छी तरह पहचानने लगी थी। उसने दो मछली और एक रोटी के टुकड़े से हजारों आदमियों को भोजन कराया था। कोढ़ियों का रोग उसके छूते ही दूर हो जाता था। ईशू भगवान का बेटा था, उसकी बराबरी साधारण आदमी कैसे कर सकता है? उसके करतब निराले थे। बारा बरस की उमर में ही उसने दुनिया के सब धरम पढ़ लिये थे। अपने समय के सब पंडितों को उसने मात दी थी।

ईशू इतना महान था, पर उस पर यहूदियों ने बड़े अत्याचार किये। उनके अत्याचार की कहानी पढ़कर मेरी आंखों में आंसू आ जाते थे। ईशू के प्रति मेरी श्रद्धा और बढ़ जाती थी। यहूदियों ने ईशू को जबरन पकड़

लिया था। उसके कन्धे पर एक मोटा-सा 'क्रॉस' देकर उसे बेरहमी के साथ पीटते हुए गलगोथा के पहाड पर ले गये थे। पहाड़ पर यहूदियों ने क्रॉस खड़ा किया था। ईशू को कांटों का मुकट पहनाकर 'संसार के उबारने हारे को' दो चोरों के साथ क्रूस पर खीलों से ठोक दिया था। ईशू की आतमा उड़ गयी। वह सीधे सरगलोक पहुंची। भगवान इन पीटने वालों को सजा देना चाहता था, पर परमात्मा के बेटे ने दया और प्रेमभरे शब्दों में कहा, "हे पिता, इन्हे माफ कर दे। ये नही जानते कि ये क्या कर रहे है।" तीन दिन के बाद ईशू अपनी कबर से उठे। अपने चेलो से उन्होने कहा, "तुम जाओ और सारे संसार के भूले और भटके लोगों को सही रास्ता दिखाओ।" इतना कहकर ईशू अंतरधान हो गये।

बाद मे इन्ही यहूदियों ने ईशू को पहचाना और इनके भक्त बन गये। उनके जीते-जी जो बात वे मानने को तैयार नही थे, मरने के बाद मानने लगे। इन्ही मारने वालों ने ईशू का असल परचार किया और दुनियाभर में नाम फैलाया। ग्रेसरी ने बताया कि पहले ईसाई जात बडे सकट में थी। नीरो के राज्य मे ईसाई गुफाओ मे छिपकर रहा करते थे। यदि कोई ईसाई दिख जाता तो उसे जिन्दा जलवा दिया जाता था। कई ईसाइयो को शेरों को खिला दिया गया था, पर यह धरम नही रुका। धीरे-धीरे बढ़ता ही गया। आज दुनिया मे यही धरम सबसे बड़ा है।

बाइबिल मे मैंने ईशू के जनम की कहानी भी पढी थी। सिर्फ तैंतीस बरस वह जिन्दा रहा, पर इत्ती-सी उमर मे ही वह कित्ता बड़ा काम कर गया। ईशू की जिन्दगी ने मुझे सिखाया कि यदि आदमी में काम करने की लगन है तो उमर की बाधा सामने नही आ सकती। एक आदमी सौ साल जीकर भी दुनिया से अनजाना चला जाता है। दूसरा दो-चार साल मे ही अपनी छाप छोड़ देता है। वह कमल का फूल होता है, जो घड़ी-दो घड़ी खिलता है पर देखने वालों के दिल-दिमाग पर अपना घर कर लेता है। मुझे ईशू के प्रति रुचि हुई। मैं उसे आदर से देखने लगी। चरच मे लगे क्रास का अरथ अब मेरी समझ में आ गया था।

बाइबिल पढते-पढ़ते कभी मुझे पुराने देवता याद आ जाते थे। बड़ा महादेव, ककाली देवी, हॉलेराय, नरायनदेव, राम, किसन—सबने अपनी

जिन्दगी में दुःख सहे हैं। सबने बड़े-बड़े करतब दिखाये हैं। तभी दुनिया उन्हें पूजती है। इनके साथ जब ईशू को देखती तो एक बात मेरी समझ में नहीं आती थी। ईशू ने कहा है कि जो लोग उसे नहीं मानते, वे भूले-भटके हैं, वे गलत रास्ते पर चल रहे हैं। तो क्या सचमुच इसके पहले मैं गलत रास्ते पर चलती थी। मेरे आवा, तापे और गांवभर के लोग क्या मूरख हैं? सारे ईसाई मिलकर दूसरी जात वालों का धरम बदलते हैं, पर सब लोग उनके धरम में क्यों नहीं आते? अब तो गांव के गांव ईसाई हो जाने चाहिए थे। पटेल क्यों उन पर खार खाये रहता है? बड़े-बड़े अफसर उनकी बात क्यों नहीं मानते? मैं सोचती तो घंटों सोचती रहती। कभी-कभी पादरी की बातें याद आ जाती थीं। वह अकसर कहा करता था कि हिन्दुस्तान को जब से सुराज मिला है, उसके काम में बड़ी बाधा आ गयी है। ये नये-नये अफसर न ईशू को समझते और न हमारी बात सुनते। वह कहता था कि अब ये लोग गांववालों का दुःख सुनने लगे हैं। उन्हें मदद करते हैं। यह सब इसलिए करते हैं कि ये हमारे धरम में न आयें। सुराज के पहले हमें इत्ती मुसीबत नहीं हुई।—पादरी की इन बातों को सोचती तो मुझे अचरज होता। सचमुच यह धरम इत्ता अच्छा है, तब ये लोग क्यों नहीं मानते? क्या सब पागल हैं? जब इस पहेली को न सुलझा पाती, तो प्रेसरी से पूछती। प्रेसरी अजीब लड़की है। धरम उसका ईसाई है पर छिपे-छिपे वह उससे नफरत करती है। मैंने उससे पूछा, "प्रेसरी, सब लोग यह धरम क्यों नहीं मानते?"

उसने मुंह बना लिया, बोली, "पागल हुई हो, भाभी! यहां सबको ईसाई पैसों के बल पर बनाया जाता है। आदमी के पास पैसे रहे, तो कोई ईसाई न बने। यदि ये पैसा देना बन्द कर दें तो लोग ईसाइयत से बदल जाय। जब आदमी का पेट तड़पता है और जेब खाली रहती है, तब वह धरम नहीं देखता।"

प्रेसरी ने बताया कि आजकल कुछ लोगों ने ईसाइयों के विरुद्ध काम शुरू कर दिया है। वह कहती थी कि ये लोग अपने को 'आयर समाज' कहते हैं। ये ईसाइयों को फिर हिन्दू बनाते हैं। मैंने पूछा, "ऐसा क्यों करते हैं?"

ग्रेसरी अजीब ढग से हंसी, बोली, "क्यो न बनायें ! अपनी जात वालों मे वापस बुलाना क्या बुरा है। जो भूले और भटके है, उन्हें सही रास्ता दिखाने की बात तो खुद ईशू ने कही है।" बातें करते-करते ग्रेसरी कह जाती, "सच भाभी, मैं भी चाहती हू कि यह धरम बदल लूं।"

मैंने उसकी चोटी खींची, बोली, "क्या उस रसिया डागधर को छोडने का इरादा है ?" वह शरमा गयी। सिर हिलाकर उसने नाही की, बोली, "वह तो सपने में आता है, भाभी। रोज आता है। मीठी-मीठी बातें करता है। जब वापस जाता है, तो कलेजा फटने लगता है।" उसने मेरी नाक पकड़कर कहा, "नहीं जानती, उसके विचार भी मेरी तरह हैं। जो वह चाहता है, सो मैं चाहती हू। क्या समझती हो, भाभी ? ग्रेसरी कच्ची गोलियां थोड़े खेलती है। सोच-समझकर मैंने अपने पारटनर का चुनाव किया है।"

"तुम दोनो की जोडी तब तो बडी अच्छी रहेगी, ग्रेसरी!" मैंने कहा। वह उठकर भाग गयी। भागते-भागते कह गयी, "खूब अच्छी, बड़ी अच्छी।" ग्रेसरी सचमुच डागधर को बहुत चाहती थी। मेरी इच्छा थी कि ईशू इन दोनों को जल्दी मिला दे और इनकी राह मे रोड़े न अटकने पायें।

जोसेफ बाहर परछी में बैठा था। मैं भी उसके पास बैठ गयी। मुन्नी मेरी गोद में थी। वह बडी देर से रो रही थी, तो मैं उसे दूध पिलाने लगी। जोसेफ सामने एकटक देख रहा था। जाने क्या सोच रहा था। मैंने कहा, "चुप क्यों बैठे हो ?"

"तो क्या करू?" उसने मेरी ओर देखा।

मैंने कहा, "कुछ बातें ही करो।"

"मेरे पास खजाना नहीं।" कहकर वह फिर चुप हो गया। मैं बोली, "एक बात पूछू ?" उसने धीरे से कहा, "हूं।" मैंने कहा, "मैंने सारी बाइबिल पढ डाली है, पर एक बात समझ में नही आ रही। ग्रेसरी से पूछती हूं तो वह ऊटपटांग बकती है। तुम बताओ, ईसाइयत इत्ता अच्छा धरम है तो फिर अपने यहां के लोग उसे क्यों नही मानते ? देखो न बाइबिल के..."

"बस, बस !" उसने रोक दिया, "बड़ी पढन्ती आयी है। अपना गुन बता

रही है। लिखा होगा, हमें क्या ? खाने को मिलता है, बस न ? पहले पेट है, फिर धरम। जो धरम पेट भरे, वही अच्छा। बाइबिल में लिखा होगा, मैंने उसे कभी नहीं पढा। जो पूछना होता है पादरी से जाकर पूछ लेता हूं। वह जो कहता है, मान लेता हूं। मानना भी चाहिए। उससे अच्छा बाइबिल का अरथ कौन समझ सकता है।"

"क्या कह रहे हो ?" मेरा मुह अपने आप खुल गया, "तुमने बाइबिल नहीं पढी ?"

"नहीं।" उसने जोर से कहा। कहकर वह चुप हो गया। मेरे लिए बड़ी बात थी यह। जिस धरम मे आदमी है, उसी की बात नहीं जानता। मैं सोचने लगी कि क्या सभी ईसाई ऐसे हैं ? वे अपने धरम को भी नहीं जानते। उन्होने अपनी पोथी ही नही बांची। नहीं, यह नही हो सकता। जोसेफ शायद बात टालने के लिए बात बना रहा है। मुझे संतोख नहीं हुआ। मन में बडी लगन थी, बडी इच्छा थी, कि जो नही जानती उसे किसी से पूछू। मैंने सोचा कि आज मिस्या से पूछूंगी; पर मन ने अपने आप कहा, वह क्या बतायेगी ? जो बतायेगी वह ठीक होगा ? उसकी हर बात अजीब होती है।

रहा न गया तो जोसेफ से बोली, "मेरी तरफ से यह तुम पादरी से पूछ देखना, क्या कहता है ?" उसने बात टालते हुए कहा, "क्या जरूरत है पूछने की। कह तो दिया कि अपने को देख, दुनिया से तुझे क्या मतलब ? यह धरम खाना देता है, बस न ? यही बड़ा है।" इत्ता कहकर उसने ताना मारा, "पढने भेज दिया तो अब पहाड़ पर चढ़ने लगी। पहले अंगूठा लगाती थी, तो क्या अब इत्ते बडे दसखत करेगी कि कागज में ही न समायें। यह हमारे सोचने की बात नहीं, बेंजो।"

मैं चुप रही। जोसेफ से बार-बार कुछ कहना अपने ऊपर मुसीबत बुलाना है। फिर मैं यह भी समझ गयी थी कि जोसेफ को खुद कुछ नहीं आता। दुनिया उसके सामने एक ही चीज है—पैसा। वह पैसे को ही सब मानता। इत्ते दिन पास रहकर मैंने यही बात जांची है। यदि कोई उसे पैसा दे दे, तो वह मेरी गर्दन उड़ा सकता है, अपनी भी जान दे सकता है। पैसे के पीछे वह सब कुछ करने को तैयार है, वह भी जिसकी कल्पना कोई नहीं

कर सकता। पैसा आदमी को जिन्दगी देता है, यह उसका कहना था। वैसे कुछ वह ठीक कहता है; पैसा यदि सब कुछ न होता, तो मेरी यह हालत क्यों होती? रूबी क्यों उसके पीछे दीवानी बनी फिरती? वह जानती है कि जोसेफ की शादी हो गयी है, फिर…कहीं कोई क्वारी लड़की ब्याहे आदमी से—मैं लम्बी सांस लेकर रह गयी।

मुन्नी को मैंने गोद में उठाया, तो वह रोने लगी। अमा ऽऽ अमां ऽऽ आज पहली बार अटपटे-से ये शब्द उसके मुह से निकले थे। बड़े मीठे लगे, मैंने उसे उठाकर चूम लिया। जोसेफ मेरी ओर देख रहा था। उसने अजीब-सी आंख बनायी। बोला, "ला, दे यहा और चाय बना ला।" मैंने मुन्नी उसे दे दी और उठकर अन्दर चली गयी। चाय बनाकर लायी तो देखती हूं कि वह अपनी अंगुलियों से उसके हाथ-पैर नाप रहा था। मुन्नी हंस रही थी। यह देखकर मुझे भी हसी आ गयी। चाय नीचे रखकर मैंने कहा, "क्या नाप रहे हो? कितनी बड़ी है, यही न?" जोसेफ झल्ला गया। उसने मुन्नी को गोद से उतारकर नीचे डाल दिया, बोला, "देख रहा हूं कि इसके हाथ-पैर विलियम से कितने छोटे हैं।"

सुनकर मेरा खून सूख गया। विलियम का नाम अर्से से मैंने नही सुना था। उसे भूलती जा रही थी। आज फिर घाव ताजे हो गये। जोसेफ भी कैसा है? कहा क्या बात करनी चाहिए, उसे नही आता। मजाक करना भी उसने नही सीखा। मैंने मुन्नी को जमीन से उठा लिया। उसके मुह की ओर देखती रही। मुझे लगा जैसे मैं विलियम को गोद मे लिये बैठी हूं। अपने ही दुश्मन को खिला रही हूं। एक हल्का-सा चक्कर आया। ऐसा लगा जैसे मैं जमीन मे समा जाऊंगी। सारी जमीन मुझे कांपती नजर आ रही थी। मैंने पलका का खुरा ज़ोर से पकड़ लिया और नीचे सिर झुकाकर आंखें बन्द कर ली। जोसेफ ने जल्दी-जल्दी चाय पी और यहां से उठकर चला गया। मेरी आंखें आंसुओं से भर गयीं। जी नही हुआ कि उनको आंचल से पोछ लूं।

बिमारी के बाद खटिया मे लेटी थी। जोसेफ तब पादरी के यहां सलामी बजाने गया था। पड़ी-पड़ी मैं मुन्नी को देखती रही। उस पर हाथ

फरती रही। आज अपने आप मन में बड़ा प्यार उमड़ आया था। मैं उसके कोमल बालों को सहलाती रही। जब मैं छोटी थी, तो मेरी मां मेरे सिर पर बड़े लाड़-दुलार से हाथ फेरा करती थी। वह कहती थी :

सुमरी मुघकी गोंडिन
सलहो मुघकी पनकिन
मुरामुलही बैंगिन।...[1]

वह मेरे बालों को चूमती थी। कहती थी—घुघराले बालों वाली गोंडिन बड़ी भागवान होती है। मेरी बिटिया के बाल भी वैसे ही है। अपने साथ भाग लेकर आयी है। मुझे देख-देखकर वह बड़ी खुश होती थी। जब लाड बढ जाता, तो मेरे ओठ चूम लेती। मैं बड़ी हो गयी थी, पर मेरी मां का प्यार नहीं घटा। वह रोज मेरे साथ सोती थी। रात को बड़ी-बड़ी कहानियां सुनाती थी। मैं ध्यान से उसकी कहानियां सुनती और हूंका देती जाती थी। कभी नींद आने लगती और हूंका देना बन्द कर देती, तो वह मेरे सिर के बाल खींचकर उठा देती। कहती, 'तो ऐसे एक था राजा, एक थी रानी... ठीक मेरी बंजारी जैसी...' वह रोज नये-नये गाने गाती थी। जंगल-पहाड की बातें करते वह न थकती। कहती, 'जंगल हमारा धन है, बिटिया। वहां का हर झाड प्रेमी होता है। जो झाड़ अधिक फल देता है, वह स्त्री है। जो फल नहीं देता, वह पुरुष है। ये झाड़ भी हमारी तरह जिन्दगी बिताते हैं। आपस में बातचीत करते हैं, गाना गाते है। इतना ही नहीं, जब कभी वे मगन हो जाते हैं तो खूब नाचते हैं—करमा, लहकी, झूमर, ढौला और रीना। इन्हें सारे नाच आते हैं। इन झाड़ों ने ही हमें नाचना सिखाया है, इन झाडों ने ही हमे हंसना सिखाया है। आवा की बातें में बडा मजा आता था।

भूले-बिसरे जीवन की ऐसी अनेकों घटनाएं आंखों के सामने उतरने लगी थी। मुझे लगता था जैसे मुन्नी के स्थान मे मैं पड़ी हूं। मुझे अपनी मां का भरपूर प्यार मिला है। अपनी बेटी को भी मुझे प्यार देना चाहिए।

---

१ घुघराले बालों वाली गोंडिन, सुन्दर देह वाली पनकिन, और (बाहर निकले) लम्बे दांतों वाली बैंगिन—खूबसूरत मानी जाती है।

बच्चे सब समझते है, उनसे घृणा करूंगी, तो मुझे पाप लगेगा। मुन्नी चाहे जैसी हो, चाहे जिसकी हो, है मेरे खून का अंग। आखिर मैं उसकी मां हूं। उसके लिए मैं दुनिया भर के दुःख-दर्द सहूंगी। पहाड़ भी टूटेगा तो हंसती रहूंगी। मैंने उसके नन्हे गुलाबी ओठ चूम लिये और छाती से लगा लिया। बड़ी देर तक मैं गुनगुनाती रही। उसने धीरे-धीरे आखें बन्द की और फिर परियों के देश मे चली गयी।

दूर कोई डफली और चग बजा रहा था। उसके साथ गाने के स्वर भी निकल रहे थे। वे हवा की लहरो मे तैरते मेरे पास तक आ पहुचे। मैं बाहर आकर खड़ी हो गयी। दूध-सी धुली चादनी मे धरती का अंग-अग डूबा था। धीरे-धीरे ठंडी हवा बह रही थी। हवा के झोके जब तेज हो जाते, तो गीत के स्वर साफ सुनाई देते। गीत मे बडी लगन थी। जो भी गा रहा हो गीत के साथ मिल गया था। लगता था जैसे वह अपनी ही कहानी कह रहा है:

हाथ धरे टंगिया, काधे मां बसुला
चले जा डोंगरी पहरिया,
बिरजबन रसिया, हो………[1]

रसिया की तान बार-बार सुनती, जी न अघाता। पैर थिरक रहे थे। लगता था नाचते-कूदते उस गायक के पास चली जाऊं। मेरी हालत ठीक उस नागिन जैसी थी, जिसे किसी संपेरे ने बीन बजाकर मोह लिया हो। मैं भी गुनगुनाने लगी.

चले जा डोंगरी पहरिया,
बिरजबन रसिया, हो……

इत्ते दिन यहा रहकर थक गयी थी। आज गीत सुना तो सब कुछ जैसे ताजा हो उठा। लगता था, सब कुछ छोड़कर चली जाऊं, जंगल और पहाड़ों की घनी छाया में, जहां जीवन पहाड़ी नाले की तरह उछलता-कूदता अठखेलियां करता है। दुःख जहां से दूर भागता है। अपने-पराये का वहा

१. हे मेरे श्रमिक प्रियतम, चलो जंगल और पहाड़ों की ओर चलकर जीवन का आनन्द लें।

भेद नहीं। मन होता था, जोसेफ को छोड़ दूं, मुन्नी को छोड़ दूं, फ्रेंदरी को छोड़ दूं। जिन्दगी की हर चीज छोड़ दूं। जैसी खड़ी हूं चली जाऊं। पैर न माने और अपने आप आगे बढ़ गये। परछी से उतरकर अनजाने ही चर्च के दरवाजे तक आ गयी, तो जोसेफ आते दिखा। पैरों में किसी ने बेड़ी डाल दी, ठिठककर रह गयी। जोसेफ ने तेज गले से पूछा, "इतनी रात कहां जा रही है?"

मैं अकबका गयी। थूक अन्दर निगलने लगी। मुझे खुद पता नहीं था, कहां जा रही हूं। दो-एक मिनट के बाद मैंने अपने को सम्हाला। बोली, "तुम घर नहीं थे, मुन्नी भी सो गयी थी, अकेले डर लगता था, तो यहां घूमने लगी थी।"

जोसेफ चुप रहा, अन्दर आकर उसने दरवाजा लगा दिया। मेरा हाथ पकड़कर घर की ओर बढ़ा। बहुत दिनों के बाद उसने मेरा हाथ पकड़ा था। उसकी पकड़ मे बड़ा सुख मिला। कुछ आगे बढ़कर मैंने कहा, "जरा ठहरो न।"

वह ठहर गया। बोला, "क्या बात है?"

मैंने कहा, "वह तान तो सुनो :

हाथ धरे टंगिया…
चले जा डोंगरी पहरिया,
बिरजबन रसिया…

"कितनी मीठी है तान, कौन गा रहा है?"

"होगा कोई!" उसने उपेक्षा से कहा।

मैं बोली, "बताओ न! बड़ी देर से सुन रही हूं, जी नहीं भरता। लगता है उसके सामने बैठकर…"

जोसेफ ने हाथ छुड़ा लिया। बोला, "पागल है वह। क्या अब पागल भी पसन्द आने लगे हैं?"

"हां," एकाएक मेरे मुंह से निकल गया, "वह पागल नहीं हो सकता। जो दूसरों को पागल बना दे, भला वह खुद पागल होगा!"

जोसेफ को यह अच्छा नहीं लगा था, लम्बी सांस लेकर बोला,

सुख में सुखी रहती है।"

"क्या तुम्हे यह अच्छा नही लगता ?" मैंने पूछा। वह बोला, "नही।"

"क्यों भला ?" मैंने पूछा।

अब तक हम परछी मे आ गये थे। वह देहरी पर जा बैठा और सिर पर हाथ धरकर बोला, "पादरी बहुत तंग करता है।" मैं भी उसकी बाजू मे सटकर बैठ गयी और मीठे शब्दो में बोली, "क्या कहता है ?"

"कहेगा क्या ? बस दिन-रात डाटता रहता है। नौकरी से निकालने की धमकी देता है।"

"आखिर कुछ तो होगा ?" मैंने पूछा। चिड़चिड़ाकर उसने कहा, "होगा क्या ? चाहता है दिन-रात उसकी सलामी देता रहूं। दुश्मन भी मेरे पीछे लगे है, किसी ने उससे चिपक दिया है कि रूबी···"

'रूबी' का नाम लेते ही वह अड गया, जैसे किसी ने लगाम खीच दी हो। वह अनजाने ही यह नाम ले गया था। रूबी के नाम से मैं भी चौंकी। जानना चाहती थी कि इसके बाद पादरी ने क्या कहा, पर उसने नहीं बताया। यही बोला कि आज उसने रूबी को नौकरी से निकाल दिया है, कल मुझे भी निकाल सकता है।

सुनकर मेरे मन को बडी शान्ति मिली। रूबी नौकरी से निकाल दी गयी, कितना अच्छा हुआ। अब जोसेफ मेरा हो जायगा, यह भरोसा हो गया था। मैंने उसकी पीठ पर हाथ फेरा। बोली, "घबराते क्यो हो ? बराबर 'डीटी' करने के बाद पादरी निकालता है, तो देखने वाला भगवान जोबैठा है। नौकरी भर मे गफलत न हो, कोई कुछ नही बिगाड सकता। और निकाल भी दिया तो हमे खाने भर को ईशू देगा ही। इत्ता घना जंगल पड़ा है। मैं महुआ बीनूगी, तेन्दू जमा करूगी, चार तोड़ूगी। तुम लकडी काट लेना, दो कल्दार चुटकी बजाते मिलते है। उस खुली जिन्दगी में मजा भी है। अच्छा हो यह गुलामी टूटे।"

मेरा इत्ता कहना था कि जोसेफ की आखें बदल गयीं। उसने मुझे एक धक्का दिया। मैं उठकर दूर खड़ी हो गयी। वह बोला, "हरामजादी, चाहती है मेरी नौकरी छूट जाय। तुझे क्या है, और किसी से आंखें चार करेगी।"

मैंने दोनों कानों मे हाथ लगा लिये और चिरायता का घूट पीकर रह

गयी।

जोसेफ ने खाना नहीं खाया। उठकर खटिया में चित पड़ गया। मैं भी मुन्नी के साथ जा लगी। मैंने उसे छाती से चिपकाया, तो सन्न रह गयी। यह क्या, वह तो जल रही थी। उसकी सारी देह तवे जैसी गरम थी। अभी-अभी वह खेल रही थी, एकाएक क्या हो गया। मैंने उसके हाथ, पैर, पीठ, पेट सब देखे; सब गरम, काफी गरम थे। रहा न गया तो जोसेफ को मैंने उठाया। जोसेफ ने देखा तो बोला, "साधारण ताप है, ठीक हो जायगा, क्यों तंग करती है ?" वह फिर सो रहा। मैं मुन्नी के पास बैठी रही। उसके सिर पर हाथ फेरती रही। मुझे लगा कि उसका ताप बढ़ता जा रहा है। उसने आंखें खोलीं, तो वे लाल थीं। एकटक वह ऊपर देख रही थी। मैंने उसको दो-तीन बार चूमा, हाथ में लेकर घुमाया, पर वह उसी तरह देखती रही—न हंसती थी, न रोती। मुझसे न रहा गया, तो मैंने मरियम के दरवाजे खटखटाये। ग्रेसरी ने दरवाजा खोला। मुझे देखकर शायद वह अचरज में पड़ गयी थी। बोली, "बारा बजे रात को, भाभी ? सब ठीक है न ?"

मैं बिना कुछ कहे अन्दर बढ़ गयी। ग्रेसरी चिन्तित थी। उसने पूछा, "क्या भैया ने···"

"नहीं," मैं जैसे चीख उठी, "मुन्नी···!"

"मुन्नी को क्या हुआ ?" वह घबराकर बोली।

"बड़ा ताप है, ग्रेसरी।"

"ताप ? अभी-अभी तो वह खेल रही थी···"

"हां, ग्रेसरी···जरा मां को तो उठाओ।" हमारी बात सुनकर मरियम की नींद अपने आप टूट गयी थी। उसने पूछा, "क्या बात है, बेटी ?" मैंने मुन्नी की हालत बखान दी, तो वह उसी हालत मेरे घर चली आयी। उसने मुन्नी को अच्छी तरह देखा। बोली, "जोसेफ को उठा।" मैं मरियम का मुंह ताक रही थी। उसके चेहरे पर बनती-बिगड़ती रेखाएं पड़ रही थीं। मुझे लगा कि मुन्नी की हालत जरूर खराब है। जोसेफ बड़ी देर में उठा। पहले वह यहां-वहां करवट लेता रहा, फिर बोला, "क्यों तिल का ताड़ बनाती हो। साधारण ताप है, ठीक हो जायेगा।" पर अब मरियम ने तेजी से उसे

आवाज दी, तो वह हड़बड़ाकर उठ बैठा। मरियम के साथ मुन्नी को लेकर वह अस्पताल चला गया।

मरियम के जाने के बाद मेरे पास ग्रेसरी आ गयी। मैं घबरा रही थी, मुन्नी को क्या हो गया है? ग्रेसरी ने बताया कि मुन्नी को १०५ डिगरी बुखार है। १०५ डिगरी क्या होता है, मैं मुंह फाड़े उसकी ओर देखती रही। ग्रेसरी ने कहा कि बुखार काफी है पर ठीक हो जायेगा, मां उसके सिर पर ठंडा पानी छोड रही है।

ठंडा पानी!" मैंने मुंह फाड दिया, "मेरी मुन्नी की जान मत लो ग्रेसरी।"

मैं घर छोड़कर भागने लगी। उसने मुझे पकड लिया। बोली, "जान कोई नहीं लेता, भाभी! मां है, डर की बात नहीं।"

"क्या कहती हो, डर की बात नहीं। उसे ताप है और मां सिर धो रही है।" ग्रेसरी को हंसी आ गयी थी, पर उसने अपने दांतों से ओठ दबाकर हंसी पी ली थी, बोली "जब बुखार ज्यादा होता है, तो यही करना पड़ता है। इससे बुखार उतर जाता है।"

घड़ी ने दो बजाये पर मरियम और जोसेफ लौटकर नहीं आए। मन न माना तो ग्रेसरी को लेकर मैं भी अस्पताल चली गयी। पादरी भी वहां था। वह मुन्नी के पुट्ठे में सूजी घुसेड़ रहा था। देखकर मैं सोईईई कर रह गयी। मेरी फूल-सी बच्ची और कांटे का यह दर्द। पर मुन्नी ने चीं तक नहीं की। मैं सांस रोककर देखती रही। पादरी दवा देता था, सूजी लगाता था, फिर कान में मशीन लगाकर देखता था। मरियम यहां-वहां दौड़-धूप कर रही थी। कभी कोई दवा डागधर को लाकर देती, तो कभी कोई। जोसेफ पलंग के पास खड़ा जम्हाई ले रहा था। बीच-बीच में कभी पादरी उससे कुछ कहता तो उसे जैसे बिजली का तार छू जाता था। किसी निर्जीव प्रानी में प्रान आ जाते थे। वह दौड़कर काम कर देता। काफी देर के बाद डागधर ने चैन ली। बोला, "बस, अब सो जायगी, तुम लोग चले जाओ।" मरियम से कुछ कहकर वह चला गया।

मैं मरियम से लिपटकर रोने लगी। उसने मेरे आंसू पोंछे और आगाह किया कि यहां रोना मना है। उसने बताया कि अब लड़की ठीक है। अब

खतरा नहीं है। ग्रसरी ने पूछा, "रोग क्या है?" पर मरियम ने नहीं बताया। बोली, "मैं रातभर यहीं हूं, तुम लोग चले जाओ।"

जोसेफ, ग्रेसरी और मैं वहां से घर आ गये। जोसेफ ने तो आते ही खटिया पकड़ ली। ग्रेसरी और मैं बैठे रहे। बड़ी कोशिश की कि नींद आ जाय, पर न आयी। मुर्गे ने बांग दी तो बिस्तर छोड़कर मैं घर के काम में लग गयी।

दिन उगे जोसेफ उठा। उसे चाय देकर मैं ग्रेसरी के साथ असपताल गयी, मुन्नी सो रही थी। मरियम अब भी वहीं थी। मैंने पूछा, "मां, अब कैसी है?" उसने मुसकराते हुए कहा, "अब बिलकुल ठीक है। तेरे जाने के बाद एक बार फिर हालत खराब हो गयी थी, पर अब कोई डर नहीं है, दो-तीन दिन में उसे घर ले जा सकोगी।"

"दो-तीन दिन में ! इत्ते दिन यहां?"

"हां।" मरियम ने कहा, "जब तक बिलकुल ठीक हो जाय, घर नहीं ले जा सकोगी, पर तू चिन्ता न कर।"

मैंने मुन्नी के कपाल पर हाथ फेरा। उसने आख खोल दी और एक किलकारी भरी। उसकी किलकारी सुनकर मेरा मन सूरज किरण पाकर खिलने वाले कमल की तरह खिल उठा। मैंने उसे उठाना चाहा, पर मरियम ने रोक दिया। बोली, "फेफड़ों पर दबाव था, वे बंधे हैं।"

मैंने मरियम के पैर पकड़ लिये। बोली, "मेरे लिए तुमने इत्ता किया, जनम भर एहसान न भूलूंगी।"

मरियम ने मुझे उठाकर छाती से लगा लिया। बोली, "सब ईशू की मरजी है। हमारा तो यह काम है, बेटी।"

मुन्नी के पास जाकर उसने उसे दो-तीन जगह छुआ और तीन बार आ···मी···न कहा। मुन्नी को आसीस देकर वह खड़ी हो गयी। मैं भी ईशू का ध्यान कर तीन बार आ···मी···न बोली। खुशी-खुशी घर चली आयी। मेरी बेटी अच्छी हो गयी। मैं पादरी, मरियम और ग्रेसरी—तीनों को खूब सिराहती रही।

दूसरे दिन घर में मेहमान आ गये थे, इसलिए असपताल नहीं जा

सकी। ये मेहमान जोसेफ के रिश्ते मे कुछ लगते है। क्या लगते है, यह न तो जोसेफ ने मुझे बताया और न मैंने पूछा। जब वे आये थे तब उसने यही कहा था कि मेरे गाव के है और पुराने साथी है। उनके खाने-पीने के इन्तजाम मे मेरा सारा दिन चला गया। रात को बारा बजे सांस लेने की फुरसत मिली। लेकिन तब मेरी देह की एक-एक नस खिची जा रही थी। लगता था, किसी ने देह फाडकर उसमे भारी पत्थर भर दिये है। बिस्तर पर पड़ी तो *कब आखें मुद गयी और कब भुनसारा हो गया, पता ही नहीं।* नीद तब खुली, जब जोसेफ ने उठाया।

सूरज की किरणें चरच की नोंक को छू रही थी। मैदान गीला था, शायद रात मे ओस गिरी थी। घास पर मोतियों जैसी छोटी-छोटी बूदें चमक रही थीं। उन पर सूरज की चमकदार किरणें, जैसे धरती पर सोना बरस गया है। किसी नयी दुलहिन की तरह छोटे-छोटे झाड सिमटे अपने सिंगार के लिए सोना बटोर रहे थे। सब कुछ बडा सुहावना-सा लग रहा था। रात को बेसुध नीद आयी, तो मेरी देह भी काफी हल्की हो गयी थी।

मुन्नी की याद आ गयी। कल दिन भर उसे देखने नही जा सकी, मैंने जल्दी से एक कप चाय जोसेफ को बनाकर दी और खुद बिना पिये असपताल चली गयी। वहा जाकर देखा, तो खून सूख गया, जैसे किसी ने मेरे सामने सोना बरसाकर मेरी बेटी मुझसे छीन ली। उस कमरे में मुन्नी नही थी। यहां-वहां मैंने झाका, पर कुछ पता न लगा। असपताल मे काम करने वाली दो-चार नर्स वहा से निकली, तो मैंने उनसे मुन्नी के बारे मे पूछा। उन्होंने कोई जवाब नहीं दिया, मुसकराकर चली गयी। मुसकराना उनका रोज का धन्धा है। मरीज मर जाता है तो भी वे मुसकराती रहती हैं। उन्हे जैसे किसी के मरने-जीने की परवाह नहीं है। उनकी जिंदगी एक मशीन है और मशीन मे जान नही होती, दर्द नही होता। पीछे से एक और बूढी औरत निकली, तो मैंने उसका रास्ता रोक लिया और मुन्नी के बारे मे पूछा। वह भी उसी तरह हंसकर चली गयी। मरियम के बारे मे पूछताछ की तो पता लगा कि वह घर में है। *दौड़ी-दौड़ी मैं उसके घर गयी। वह चूल्हे के पास मुह लटकाये* बैठी थी। ग्रेसरी कोई किताब पढ़ रही थी। मुझे देखकर ग्रेसरी ने पढ़ना तो बंद कर दिया, पर रोज की तरह वह दौड़कर मेरे पास नही आयी। मरियम

ने भारी आवाज से कहा, "आओ।"

मैं मुन्नी के लिए अधीर थी। मैंने पूछा, "मां, मुन्नी कहां है?"

वह कुछ न बोली। उसकी भारी आंखों से आंसू अपने आप गिरने लगे। आंसुओं को देखकर मेरी छाती फट गयी। मैं दहाड मारकर गिर पडी और चिल्ला उठी, "मां, मेरी मुन्नी···मुन्नी···मेरी मुन्नी···!" मरियम भी रोने लगी थी। ग्रेसरी ने मेरे आंसू पोंछे, बोली, "रोने से क्या फायदा!"

मैं जोर से रोते हुए बोली, "मेरी मुन्नी कहां गयी, बताया क्यों नही? मैं नही जानती थी, तुम लोग भी मेरी दुश्मन हो। मेरी कपास जैसी कोमल लड़की का गला घोंट दोगी।" मेरी बात का जवाब न मरियम ने दिया और न ग्रेसरी ने। मैं बडी देर तक वहां रोती रही। मैंने अपना सिर दीवाल से पीट लिया तो खून छलछला आया। मरियम ने मेरा सिर पकडा, पर मैंने उसे झिड़क दिया। मुझे उससे नफरत हो उठी। उस पर मैं कितना भरोसा करती थी। उसी के भरोसे मैंने मुन्नी को असपताल में अकेले छोडा था। मैं उसे अपनी मां मानती हूं,पर उसने धोखा दे दिया। सचमुच दुनिया कितना बडा धोखा है। यहां किस पर भरोसा किया जाय। जिस डाल को पकड़ो, वही हाथ मे छूट जाती है। यह भाग का दोष नहीं तो क्या है। आंसुओं ने मेरी नजर पर पर्दा डाल दिया और मेरा सिर चक्कर खाने लगा। फिर मुझे कुछ याद ही नही। जब होश आया, तो मैंने अपने को अपने घर चारपाई पर पड़े पाया। ग्रेसरी मेरे सिरहाने बैठी थी। जोसेफ पास ही कुर्सी पर था। चेतना आते ही मुझे फिर मुन्नी की याद आ गयी। जितनी देर अचेत थी, कुछ पता न था। चेतना भी कभी-कभी आदमी के लिए बैरिन बन जाती है। सदा अचेत रहती, तो कितना अच्छा होता।

मैंने ग्रेसरी से पूछा, "तुम तो मेरी हो ग्रेसरी, बताओ मुन्नी कहां गयी?" वह चुप रही। उसकी आंखें भर आयीं। उसने मेरे सिर पर हाथ फेरा, थोड़ी देर हाथ फेरती रही, फिर बोली, "धीरज धरो, भाभी!"

"काहे का धीरज, ग्रेसरी?" मैं जोर से चिल्लायी, "आखिर तुम सबने मिलकर क्या जाल रचा है? मेरी मुन्नी कहां चली गयी?···"

"भाभी···" उसने हिचकते हुए कहा, "कल वह इस संसार में···"

मेरा गला फट गया। मैं जोर-जोर से बिलखने लगी, "मेरी मुन्नी···

मेरी मुन्नी···!" जोसेफ अब भी चुप बैठा था, उसकी आखो मे आंसू न थे। वह तो पत्थर था, उस पर क्या असर होता? मुझे रोता देखकर वह उठा। मेरे ही आंचल से उसने मेरे आंसू पोंछे, बोला, "अब रोने से क्या होता है? भगवान पर भरोसा रख। वह चाहेगा तो फिर···"

मेरी हालत किसी पागल से कम न थी। बोली, "मेरी मुन्नी चल बसी और तुम लोगों ने खबर तक न दी। जरूर दाल मे कुछ काला है। तुम सब लोगो ने मिलकर जरूर मेरी मुन्नी का गला घोट दिया है। मैं पादरी से इसकी रपट करूगी।"

जोसेफ ने डांट दिया, बोला, "बड़ी मुन्नी वाली हुई है! जाने कहा की थाती धरे थी,चुप रहती है या नही?"मैं और जोर से रोयी। मेरे मन में यह भरोसा हो गया कि मेरी मुन्नी का खून किया गया है,वह खुद अपनी मौत नही मरी। मुझे खबर क्यों नही दी गयी? जोसेफ उसे थाती समझता रहा है? पर मरियम···मरियम भी हत्यारी है। मां होकर भी उसने ममता नहीं पहचानी। यह सब सोचकर मेरे आंसू अपने आप सूख गये। वे जहां से निकले थे, वही समा गये। भीतर की आग तब एकदम भडक उठी। अन्दर जो एक गोला-सा अड़ा था, जैसे फूट पड़ा। उसके फूटते ही मेरा रूप बदल गया। जोसेफ अब तक कही खिसक गया था। मरियम आ गयी थी, तो मैंने दौड़-कर उसका ही गला पकड लिया और उसे नोंचने लगी। ग्रेसरी ने मेरे हाथ पकड़कर खीचे। मरियम तब भी नही घबरायी। आगे बढकर उसने मुझे पकड़ लिया और छाती से लगा लिया। बोली, "चुप रह, बेटी, इस रोने से लाभ नही होगा।"

"मेरी बेटी कहां है? वह कहां गयी?" मैं चिल्लायी। मरियम ने मेरे सिर पर हाथ फेरा और मुझे ढाढ़स बंधाया, उसने बताया कि मुन्नी मरी नहीं, वह जिंदा है। उसे ले लिया गया है। उसने याद दिलाया कि जब मुन्नी पैदा हुई थी, तभी उसे ईसू की गोद लेने वाले थे, पर मरियम ने रोक दिया था। इस बार वह रोक न सकी। उसने बताया कि मुन्नी को रोकने के उसने कितने उपाय किये। डाक्टर उससे नाराज भी हो गया है। कहता था, आगे ऐसा वह करेगी तो नौकरी से निकाल दी जायेगी। मरियम ने यह भी बताया कि मुन्नी की तबीयत बिलकुल ठीक हो गयी है। वह

आराम से है, आराम से रहेगी। उसे सुख से पाला जायगा। बड़ी होकर वह मेम बनेगी। मैं जब चाहूंगी उसे जाकर देख सकूंगी। मरियम ने समझाने मे कसर नही रखी, पर मेरा मन नही माना। बहुत कुछ कहकर वह चली गयी। ग्रेसरी ने बताया कि मेरे ज्यादा रोने-पीटने से और मुसीबत आयगी। जोसेफ भी बिगड़ेगा, मुन्नी को ले जाने की इजाजत वह दे चुका है। मेरी भलाई इसी में है कि मैं खून का घूट पीकर रह जाऊ।

मुन्नी इस संसार मे है, यह सुनकर थोड़ा ढाढस बंधा। किसी ने खेत के बांध मे जैसे मिट्टी लगा दी थी। मुन्नी को जब चाहूगी तब देख सकूगी, यह सन्तोष की बात थी।

उस दिन मैंने खाना नहीं पकाया। जोसेफ दोपहर को आकर खूब चिल्लाया और चला गया। संझा तक मेरा मन कुछ ठिकाने पर आया। मुन्नी का गम तो नहीं भूल सकी, पर विवशता भी तो कुछ होती है। उसके सामने आदमी को हाथ टेकना ही पड़ता है। मैंने अपने सोचने का तरीका ही बदल दिया। सोचने लगी, मुन्नी बिछुड़ गयी, तो अच्छा ही हुआ। उसकी शक्ल मे विलियम नाचा करता था। अपने दुश्मन को मैं अपनी गोद में खिलाऊं...और जोसेफ भी तो बिगड़ा-बिगड़ा रहता था। अब शायद इससे हमारी जिंदगी की दरार भर जाय। मुन्नी न रहेगी, तो न सही, पर अब जोसेफ तो मेरा हो सकेगा। ईसू चाहेगा तो...अपने आप मैं शरमा गयी।

मुन्नी का बिछोह भूलने की कोशिश करती थी, पर स्मृतियां ताजा होकर आंखों के सामने नाचने लगती थी। आंचल बार-बार भर आता था। उनका भारीपन सारे तन को भारी बना देता था। धीरे-धीरे वे कड़े होकर पत्थर जैसे होने लगे। मरियम ने दवा दी और रबर की नली से मेरे आंचल का दूध निकाला।

दिन बीतते गये। मुन्नी की याद भुलाने मे ग्रेसरी और मरियम ने बड़ी सहायता की। ग्रेसरी तो दिनभर मेरे पास रहने लगी थी। वह पलभर को भी अकेला न छोड़ती। मरियम मुझे खूब समझाती रहती थी। मैंने भी अपने मन पर पत्थर रख लिया था और उसका भार धीरे-धीरे सहन करने लगी थी।

जोसेफ अब मुझसे नरम होकर बोलता था। रूबी से उसने मिलना बन्द तो नहीं किया, पर मुझ पर उसकी नजर तीखी नहीं थी। यह मेरे लिए

पर अपनी नरम-नरम हथेलियां फेरता था और कहता था, "तुम मेरी रानी हो, तुम्हें दु:खी देखता हूं, तो मेरे मन पर जैसे लोहे की गरम सलाख चुभती है। मैं चाहता हूं, तुम दिन भर टेसू जैसी हंसती रहो, चमकती रहो। तुम्हारी छोटी-सी हंसी मेरे लिए वरदान है।" जोसेफ का यह व्यवहार देखकर मुझे खुशी हुई। सोचती थी, मुन्नी को खोकर भी यदि जोसेफ को अपना सकी, तो सौदा महगा नही होगा। आखिर एक औरत चाहती क्या है? किसी पुरुष का मधुर प्यार, वह उसके प्यार में अपने को मिटा देना चाहती है। उसकी प्यार भरी छोटी-सी नजर औरत के लिए किसी तीर्थ से कम नही है। गगा नहाने मे जो पुण्य मिलता है, उससे भी बड़ा पुण्य पुरुष के प्यार में है। उसका प्यार भरा हाथ जब स्त्री की देह को छूता है, तो मानो आकाश से अमृत बरसने लगता है। पुरुष की आंखों में सूरज की चमक होती है, चन्दा की चांदनी जैसी मादकता उसमे भरी है, तारों की झलक उसमें हरदम बनी रहती है और आकाश जैसी स्वच्छता और पवित्रता के उसमें दर्शन होते हैं।

एक दिन जोसेफ ने बताया कि चितरकोट मे एक भारी जलसा होने वाला है। गाव के कई लोग उसे देखने जा रहे हैं। जलसे में देश के भारी नेता आयेंगे। उसने बताया कि जवाहिरलाल भी आने वाले है। वहा खूब नाच-गाने होंगे। उसने कहा कि यदि मैं देखने चलूं, तो अच्छा हो। ग्रेसरी और मरियम भी जलसा देखने जा रही थीं। मैंने हामी भर दी। हंसी-खुशी जाने को तैयार हो गयी। अपना गम भूल जाऊंगी और जोसेफ की मन की भी हो जायगी। यह मेरे लिए जैसे एक मौका था जिसे ईशू ने भेजा था। वहां से लौटकर मैं अपनी जिन्दगी बदल सकती हूं। तब मेरी एक नयी कहानी चलेगी, जिसमें कही दु:ख न होगा। चारों ओर प्यार होगा और उस संसार में केवल हम दो होंगे—मेरा प्यारा जोसेफ और मैं, उसकी रानी।

११

चितरकोट का भारी खुला मैदान। राई के खेत-सा जगमग और

फूला। रंग-बिरंगी झंडियां और पताकाए, जैसे किसी ने खेत में सरसों और तिल के दाने बो दिये थे। *छींट की तरह सारा मैदान छिटका था।* एक ओर ऊंचा पंडाल, कीमती कपड़ों से भरपूर सजा जैसे किसी बरात मे दूल्हे को सजाया जाता है। चारो ओर आदमियों के बैठने की जगह थी। बीच का मैदान पीली मिट्टी के ताजे बखरे हुए खेत की तरह सुन्दर दिखायी दे रहा था। उसमे दल के दल आदिवासी टहल रहे थे। मादर, किरकी, मृदंग, ढोलक, चरकला, टिमकी, झांझ और थाली—दुनियाभर के सब बाजे-गाजे वहां इकट्ठे हो गये थे। झुण्ड के झुण्ड औरत-मरद नाचने की दरेस कसे मैदान मे आ डटे थे। आज यहा जलसा होगा। अलग-अलग गांव से आये आदिवासी भाई-बहन अपने नाच दिखायेंगे। सारे दलों ने ऐसी दरेस पहन रखी थी कि उनमे से किसी को पहचानना कठिन था। उन्हे देखकर मेरा मन कचोट उठा। काश, मैं अपने गाव में होती! मुझे भी आज मैदान में उतरने का मौका मिलता। कंगला की याद हो आयी। कितनी बार हम दोनो ने होड लगाकर अपने पैंतरे दिखाये थे। आज कगला होता···मैंने चारों ओर देखा, कहीं कंगला दिख जाय, तो यह बेड़ी उतार फेंकू और मैदान मे उतर जाऊ। कही वह नही दिखा।

सामने से मैंने सरपा और टिमकी को अपनी ओर आते देखा। मैं भी उनकी ओर बढी। आज वे भी खुश थी, भेंट करना हम भूल गयी। काफी समय के बाद मिलने पर भी केवल कंधा लगाकर रह गये। सबकी आंखों मे से आसू उड़ गये थे। कोई नही रोया। तीनों एक-दूसरे के गले मे हाथ डालकर खूब हंसे। और खुशी की पूछताछ की।

सरपा ने बताया कि कंगला भी नाच मे भाग लेने आया है। उसने बताया कि गांव का एक पूरा दल है, कंगला उसका मुखिया है। उसने मैदान की ओर अंगुली दिखाकर बताया—वह रहा कंगला। मैंने देखा। वह पहचान मे नहीं आया। उसके ठाठ निराले थे। कौडियों की माला, सिर पर हरी पगड़ी, मोर पंखा, घुघचियों का हार और पैरों मे घुंघरू, मेरा कंगला आज देवदूत की तरह सजा था। मैं उसे देखती रही। उसके पास ही झारन खड़ी थी, बढ़ई की लड़की। वह कंगला का हाथ पकड़े थी। वह भी परी बनी खड़ी थी। उसकी खूबसूरती का अन्त नहीं। वह कंगला का हाथ

पकड़े उससे सटकर खड़ी है…हंस-हंसकर बातें कर रही है। उसकी हंसी कांटा बनकर मेरे कलेजे मे चुभ गयी। उस ओर से मैंने आंख फेर ली। टिमकी ने गांव के पुरा-पड़ोसियों के हालचाल बखाने। तापे की कमर टूट गयी है…आवा की एक आख धुंधली पड़ गयी है…सिन्दीराम को हफ्ते से ताप आ रहा है…चैती का ब्याह अगले महीने हो रहा है…बसन्ती ने अपने लमसेना को जहर दे दिया…उसका बाप जिहल मे है…और…और विलियम झरपन के पीछे लगा है, यहा भी आया है।

यहां भी आया है। सुनकर खून सूख गया। ईसू न करे उस दुष्ट से कहीं भेंट हो जाय। मैंने पूछा, "कहां है वह ?"

टिमकी ने यहां-वहां नजर दौडायी। बोली, "दिखता तो नहीं, आया साथ है, कहीं होगा।" वह अपने आप मुसकरायी, बोली, "उसकी याद कभी आती है ?"

मैंने दांत पीसे, बोली, "क्या कहती है, टिमकी ? लगता है उसकी आखें लोच लू। रोज ईशू के सामने हाथ जोड़ती हूं और मनौती मांगती हूं कि मैं अगले जनम मे चील बनूं और उसका मांस लोंच-लोंचकर खाऊं।"

"इतनी नफरत ?" टिमकी ने आखें चढ़ायी, बोली, "पर वह बेचारा तो तेरे गुणगान करते नहीं थकता।

सरपा ने आगे जाकर मेरे गले में हाथ लगाया। बोली, "हार तो लाखों में एक है। उसका एहसान मान। क्या सजी-सजायी फिरती है।"

ग्रेमरी ने बीच में अपनी बात भी डाल दी, बोली, "आजकल भाभी के ठाठ निराले हैं। खूब पढ लेती हैं, सरपट अंगरेजी बोल लेती है।" सरपा ने मेरे दोनों हाथ पकड़ लिये। उन्हे दबाते हुए बोली, "सच बोल बंजारी, एक बार तो इंगरेजी बोल दे।"

बंजारी…सुनकर अपने आप मेरे ओंठ खुल गये—"ग्रैंड, से अगेन, बंजारी…बंजारी…बंजारी।" मैं उससे लिपट गयी। मेरे मुह से अंगरेजी सुनकर उसे बड़ी खुशी हुई।

एक लम्बी सांस लेकर बोली, "हमारे करम में यह कहां ?"

एक ओर से आवाज आयी—"जवाहिरलाल की जय !"

"नेहरू जिन्दाबाद !"

"गांधीजी की जय !"

आवाज बढ़ती गयी और सारा मैदान एकबारगी चिल्ला उठा :

"जवाहिरलाल की जय !"
"भारतमाता की जय !"

सब ओर से धूम मच गयी। मंच पर लोग यहां-वहां दौड़ने लगे। सामने से भीड़ को तीर की तरह चीरते जवाहिरलाल आ रहे थे। हाथ में काला डंडा, सफेद दरेस और सामने गुलाब का सुन्दर फूल; उसी फूल की तरह हंसता और चमकता उनका चेहरा। पहली बार उन्हें देखा है। नाम मैं एक अर्से से सुन रही हूं। जब छोटी थी तभी गांधी महात्मा का नाम सुना था। उनके बाद जवाहिर को ही जानती थी। तब यहां अंगरेज का राज था, लेकिन गांवभर के लोग इन दोनों का नाम आदर से लेते थे। कहते थे—ये अंगरेजों के दुश्मन हैं। इन्होंने संकल्प कर लिया है कि उन्हें हिन्दुस्तान से भगा देंगे। गांव के बूढ़े गांधी महात्मा और जवाहिरलाल को देवता के अवतार मानते थे। उनकी तारीफ करते न थकते। ऐसे देव अवतार जवाहिरलाल को आज आंखों के सामने देखकर जैसे एक मनोरथ पूरा हो गया था। सब कुछ भूलकर मैं उन्हें देख रही थी। वे भारत की जनता के प्रानाधार हैं। सारी जनता के भाग उनके हाथ हैं। देस की नांव के वे खिवैया हैं…मैं नेहरूजी को बराबर देखती रही। भीड़ से गुजरकर वे मंच पर चढ़ गये। चारों ओर नजर दौड़ाकर उन्होंने देखा। हाथ जोड़कर सबको सिर झुकाया। उन्हें सिर झुकाते देखकर मेरी श्रद्धा और बढ़ गयी। इत्ता बड़ा आदमी हमारे सामने सिर झुकाता है। उनके सामने हम किस खेत की मूली हैं। मंच में और कई नेता बैठे थे। हाथ जोड़कर नेहरूजी नीचे बैठ गये।

एक नेता ने खड़े होकर भाखन देना शुरू कर दिया। भाखन बहुत लम्बा था। बहुत-सा वे ईसाई धरम के बारे में बोले। इत्ता लम्बा भाखन मैंने पहली बार सुना था।

ईसाई मिशनरी भले ही आदिवासियों के धर्म-विचार के प्रति सहानुभूति या आदर न रखे, किन्तु हमें ईसाई धर्म के प्रति अनुदार दृष्टि

नहीं रखनी चाहिए—दुनिया मे जितने भी धर्म हैं, हमारे आदर के अधिकारी हैं···ईसाई धर्म-प्रचारकों को हम दुश्मन क्यों मानें ?···भगवान ईसा एक परम भागवत थे···वे बाल ब्रह्मचारी थे···हम लोग अनेक त्योहार मनाते हैं, नाताल (क्रिसमस) का भी त्योहार मनाएं···।[१]

भाखन सुनकर इनके बारे मे जानने को जी हुआ। ईसाइयों की प्रशंसा करते ये थकते नही, आखिर हैं कौन ? मैंने ग्रेसरी से पूछा, पर वह भी नहीं जानती थी। पास बैठे एक दूसरे आदमी से मैंने पूछा, "भइया, ये कौन है ?"

"होंगे कोई।" कहकर उसने टाल दिया।

"क्रिस्ची है क्या ?" मैंने पूछा। वह बोला, "दिखता तो नही।"

पास बैठे एक आदमी ने कहा, "क्रिस्ची नही है रे, आदिवासियो का कोई सेवक है।" मुझे दर्द हुआ। भाखन मुझे कुछ अच्छा नही लगा। आखिर आंखें रहते ये ऐसी बातें क्यो करते है। मन होता था कोई मुझसे भाखन देने कहे, तो सब उगल दू···पर। उनका भाखन खतम हो गया। उन्होंने तीन बार जै हिन्, जै हिन्, जै हिन् कहा। सारे लोगों ने आवाज लगायी। आवाज चारों दिशाओं में गूज उठी। उसकी झाई अभी खतम नहीं हुई थी, कि नेहरूजी उठकर खड़े हो गये। पहले की तरह मुसकराते हुए हाथ जोड़कर उन्होने जनता की ओर नजर दौड़ायी, फिर बोलना शुरू किया। उनकी आवाज कितनी मीठी थी, कितनी प्यारी···बोलते-बोलते वे जोश में आ जाते थे, तब उनकी आवाज कांपने लगती थी, जैसे कोई हकलाता हो, पर गति नहीं टूटी—वेग से बहते नाले की तरह उनके स्वर बढ रहे थे :

हमारे देश के जो आदिवासी भाई हैं, वे सीखें, पढ़ें और आगे बढ़ें। खेती करें और अपने देश की उन्नति करें। हम चाहते हैं, आपके रीति-रिवाज और धर्म जैसे हैं, वैसे ही रहें।[२]

कितने ऊंचे विचार हैं उनके। आखिर देवदूत जो हैं। देवता कभी उल्टी बात नही करता। जवाहिरलाल के एक-एक शब्द में जादू था। जब बाहर निकलता तो उसका वजन भारी मालूम पड़ता था। लगता जैसे

---

१. काका कालेलकर के भाषण का एक अंश।

२. आदिवासियो के बीच एक अधिवेशन मे नेहरू जी द्वारा दिये गये भाषण का अंश।

दिमाग में कोई भारी चीज़ पटक रहा है। मैं तो सोच ही नहीं सकती, जवाहिरलाल इत्ता सब कहां से और कैसे बोल जाते हैं ? सब कुछ देश की भलाई के लिए, अपने लिए कुछ नहीं, बिलकुल नहीं।

आपने सुना होगा कि हम अक्सर 'जय हिन्द' कहते हैं, भारत माता की जय कहते हैं। भारत माता की जय के माने क्या ? इसके माने हैं, देश के रहने वालों की जय, याने आपकी जय। भारत माता कोई स्त्री थोड़े है। भारत माता तो हम हैं, आप हैं। हम सब भारत माता के छोटे-छोटे टुकड़े हैं। भारत माता की जय कहने से हमारी जनता की जय होती है। इसी तरह हम जय हिन्द कहते हैं। इसके माने है, देश के रहने वालों की जय। इसलिए जब मैं जय हिन्द कहूं, तो आप भी मेरे साथ तीन बार जय हिन्द कहें :

"जयहिन्द !
"जयहिन्द !!
"जयहिन्द !!!"[1]

आकाश की छाती को चीरकर जय हिन्द जैसे ऊपर उड़ा जा रहा था। मैंने अपनी पूरी ताकत लगाकर जय हिन्द की आवाज लगायी पर वह इतने बड़े जनसमूह के स्वर में डूबी-सी लग रही थी।

तीन बार जय हिन्द कहने के बाद मंच पर खड़े होकर किसी ने आवाज लगायी, "जवाहिरलाल नेहरू की जय !"

सारी जनता ने गला फाड़कर इस आवाज को दुहराया :

"भारत माता की जय !"

"महात्मा गांधी की जय !"

"जै हिन्, जै हिन् !"

'जै हिन्' की आवाज के डूबने न डूबने मैदान के बीच से आवाज निकली :

डा डिग्ग, डिग्ग, डिग्ग

....

---

१. आदिवासियों के बीच एक अधिवेशन में नेहरू जी द्वारा दिये [illegible] अंश।

घा धिन् धिन् घा गा धिन्

....

डिगम डिगम डिम

....

ता धिक् ता धिक्

मैदान में खड़े नर्तक दल अपने आप थिरक रहे थे। जिसके पास जो बाजे थे, पूरी ताकत के साथ पीट रहे थे। कोई ढोल, कोई मांदर, कोई टिमकी। नेहरूजी उस ओर एकटक देख रहे थे।

सबसे पहले मैदान के आखिरी कोने में खड़े दल ने अपने ढोल ज़ोर-ज़ोर से पीटे। रंग-बिरंगे कपड़े और सिर पर जंगली भैंस के सींग पहने ये बैंगा आदिवासी निराले थे। औरतें केवल कमर में लाल कपड़ा लपेटे थीं। जवान-बूढ़ी—सभी उमर की औरतें थीं वहां और सभी की छाती खुली थी। कौड़ियों की माला और पैर में कड़े पहने आदमियों के हाथों में हाथ डाले वह दल आगे बढ़ा। उनके बीच ढोलिये भी थे :

ढाग ढाग ढी ढी ढिन् ढिन्
रे ऽऽऽ हे हे ऽऽऽ, तो···रे···रे
हे ऽऽऽ हे हे ऽऽ

बीच में किसी ने आवाज़ लगायी थी :

तोरे हरे ना ना रे, तोरे हरे ना ना ऽऽ

सबने यह दुहराया :

तोरे हरे ना ना रे तोरे···

पहिले गायव पहले बिनोयव
पहिले आखर गायब दाऊ, चांद सुरज की सेवा।
दूसरे आखर गायब दाऊ, धरती माई की सेवा।
तीसर आखर गायव दाऊ, ठाकुर देव की सेवा।
चवथन आखर गायब दाऊ, काली माई की सेवा।
पाचव आखर गायव दाऊ, आजी दादी की सेवा।

छाठव आसर गायव दाऊ, ठाकुर भैरों की सेवा।
सातवा आसर गायव दाऊ, सवा लाख वनसपति की सेवा।

'शारदा' की यह टेर निराली थी। नाच आरम्भ करने के पहले देवताओं की याद कर लेना जरूरी है। बैगाओं का यह नाच एक रस्मअदायी रहा। इस दल के पास ही एक दूसरा दल खड़ा था। इस दल के आदमी भी सिर पर सींग बांधे थे। शक्ल से पहाड़ी माड़िया लगते थे। उन्होंने भी अपने ढोल पीटने शुरू कर दिये :

हाट फिटी गेला हाट रे दिन हेला
जांग फिटी गेला मा से
राती कौनो जाने दिन आस्ती
पुरुसोर डॅर हेला
सिरलिगा झिरलिगा राइकेरा झोंडी
सेम्मी वी टोकसा गरी
गाडी वाइल परा चॅमनी छैंडिवो
कतक होइवी ऊन्ना करी।[1]

'हाट फिटी गेला, हाट रे दिन हेला' सुनकर जी न जाने क्या करने लगा। मैं अपने आप कहने लगी, "तू आठ दिनों की बात करता है, यहां तो साल गुजर रही है।" कुछ और सोचती पर सोचने का समय कहां था ?

होयो हीयो ऽऽ हीयो
होयो हीयो तेहोम अपरि तना
अयर अयर तेगेन हेना तना
होयो हीयो ऽऽ हीयो
पुरना दुनिया गामे यडोतना
नवा गमायागामे दंडातमा।[2]

---

१. हे प्रियतम, हाट छूट गया, आठ दिनों से तुमसे भेंट नहीं हुई, एक माह से तेरा स्पर्श भी नहीं मिला—रात को कौन कहे, (मैं तो) दिन को भी चला आता, पर तेरे पुरुष का भय जो लगता है।

२. अरे, अब तो तुम हवा में उड़ी जा रही हो। अब तुम्हारी नजर आगे ही आगे जाती है। पुरानी दुनिया छोड़कर तुम नयी दुनिया की खोज में जा रही हो।

मुण्डाओं का यह गीत कितनी मार कर गया। मैं सचमुच हवा में उड़ी जा रही थी। उड़ान का अन्त नहीं था। ये सारे मुण्डा मिलकर मुझ पर ही अपने तीर छोड़ रहे हैं, पर उससे क्या ? मेरे लिए ये फूल हैं, फूल की मार भला बुरी लगी है।

सामने बस्तर का ढंढहार[1] हो रहा था। बाजू में चावरी[2]। पीछे औरतें डमकट[3] नाच रही थीं। दूसरे कोने में उमेड, सटको, डंडा और ददरी हो रहे थे। इन सबको चीरता हुआ औरत और मरदों का एक दल पूरब से आगे बढ़ा, जैसे पानी भरे बादलों की सेना आगे बढ़ती है। ढोलकिये ने एक ऊंची उचाट भरी। औरतें झुक गयीं। एक औरत के पीछे एक आदमी खड़ा हो गया। इस तरह सारा दल बंट गया। एक झुकी औरत, उसके पीछे एक खड़ा आदमी, बीच में मादर और ढोल। ढोलकिये ने हाथ पीटकर तान दी :

ओ हो ऽऽ हो ऽऽ चल

दूसरे ने आवाज़ मिलायी :

चल चल रे चल
चल चल भइया हाय
चल चल मोर बियासी के नागर
हो कसइ मजा के,
हो कसइ मजा के मोर बियासी के नागर !

सारा दल एक गोल दायरे में घूमने लगा, जैसे वहां सचमुच छत्तीसगढ़ के किसान धान जोत रहे हैं।

हरियर हरियर दिखथे धान
चिनउर, बड़कोनी, गुरमटिया, अजान
तरि नारी भइया मोर तरि नारी ना ना
हो ही जी मेती एसों सोला आना।

नाच ने सारे लोगों का ध्यान खींच लिया था। चारों ओर शान्ति थी।

---

१. एक नृत्य, जो माघ महीने में नाचा जाता है।
२. एक नृत्य, जो चैत में नाचा जाता है।
३. विवाह के समय नाचा जाने वाला बस्तर की महिलाओं का नाच।

इत्ते लोग, पर हल्ला-गुल्ला का नाम नही। नाच की गति धीरे-धीरे कम होने लगी, तो दूसरा दल मैदान में था।

घा धिन घा गा तिन
ता तिन घा गा धिन

सारे लोगो ने ताली पीट दी। एक ओर से आवाज उठी, "जियो संथाली शेर।" उन शेरों ने धूम मचा दी :

हाताव सोराज दाराय राम राज
जो गाव में, दडियेन कोवाक मायाम
से ताक् सोहान, हुसनक् हेडोन
पांजायमे गांधी बाबावक् ताडाम
ओतोल बोतोल, वियेल बायोल
हिपिड में, पेरोङ् पाताका सोहान
जेल माया मगारा, ओडाक, दाराहारा
जाडगयनी बुड़वा नालोम।[1]

नाचते-नाचते दल ने तिरंगा झंडा फहरा दिया था। उसे देखकर नेहरू-जी भी उठ खड़े हुए। गीत मेरी समझ में पूरा नहीं आया, पर मरम समझ ही गयी थी। देश की बढ़ती का कितना सुन्दर गीत है। नेहरूजी इसे जरूर समझ गये होंगे, नहीं तो उठकर क्यों खड़े होते। उन्होने हंसकर ताली बजायी तो सारा दल उचाट भरने लगा :

धा धिन घा गा तिन
ता तिन घा गा धिन
धिक् धिक्……

१. हे भाइयो, पाये सुराज की, रामराज की और शहीदों के खून की रक्षा करो। यह सुहानी कथा कितनी सुन्दर है।
तुम गांधीजी के बताये रास्ते पर चलो।
(भाइयो) सुन्दर फर-फर करने वाला तीन रंग का सुहावना झण्डा फहराओ, खून और मांस के गारे से बने इस विशाल भवन को, जो (अभी) हड्डियों में टिका हुआ है, यों ही बरबाद न करो।

बीच में खड़े दल से न रहा गया। उसने अलग ढोल पीटा :

घम् घा घा घा घम्

डमरूवाले के हाथ अपने आप नाचने लगे

डा डिग् डिग्गा डिग्गा

घा घिन्न घिन्न घिन्ना

डिगिर डिगिर डिग्ग डिग्गा

एक आदमी ने खूब ऊंची उचाट भरी। मैं देखकर रह गयी, यह तो कंगला था। झरपन भी आज बछेरी बन गयी थी। कंगला से वह होड़ लगा रही थी। ये दोनो हाथ मे हाथ डाले दौड़कर आगे आये और नेहरूजी के सामने सिर झुका दिया। झुके सिर को एक झटके के साथ ऊपर उठाकर पीछे बिना लौटे ही वे दौड़े। एक साथ उनके डग गिर रहे थे। एक-सी उचाट दोनों भर रहे थे। सुन्दर कबूतर पक्षी के जोड़े जैसे इन दोनों ने संथालों के बाजे बन्द करा दिये। अपने दल के बीच जैसे ही वे पहुंचे कि :

"जवाहिरलाल की जै !"

'किसान के भाई पियारे जवाहिर की जै !' की आवाज सारे दल ने एक साथ छोड़ी। औरतों ने हाथ मे हाथ डाल दिये। बीच मे मांदर बजने लगा :

ओ होऽऽ हाय रे हायऽऽ

पुरुषों ने आवाज दी तो औरतों ने चुनौती समझी :

हे हे हाय रे हायऽऽ

दोनों ओर से हुंकारें भरी जाने लगी। दोनों दल अलग-अलग बंट गये। बीच में ढोलियों ने जगह ली। झूमकर झम-से उन्होंने औरतों की तरफ पैर बढ़ाये तो औरतें गा उठीं .

हे हे हाय रे हायऽऽ

छिन मानो राम,

गोता[1] परानो न मारो रेऽऽऽ

छिन मानो रामऽऽ

---

१. पक्षी।

पुरुषों ने साथ दिया :

ओ होऽऽ हाय रे हायऽऽ
गोता परानो न मारो रेऽऽ

पुरुष और स्त्रियों के समवेत स्वर 'रेएएएएएएएए' पर टिक गये। कंगला को शायद यह टेक अच्छी नहीं लगी, उसने विद्रोह कर दिया। अपना दल छोड़कर वह बाहर आ गया। ढोलकिये के सामने वह अपने आप उचटने लगा। झरपन भी न मानी। उसने कंगला का पीछा किया और अपना दल छोड़कर वह भी कंगला की बाजू में आकर खड़ी हो गयी और उचाट भरने लगी।

जब दल का नेता विद्रोह कर देता है, तो सिपाही चुप नहीं रहते। दोनों कतारें टूट गयी और पुरुषों ने अपने हाथ स्त्रियों के गले में डाल दिये। स्त्रियों ने अपने हाथों से पुरुषों की कमर बांध ली। गोल दायरे में कूल्हा मटकाते पूरा दल घूमने लगा। कंगला और झरपन बीच में उचाट भर रहे थे। मेरे पीछे बैठे आदमियों में से कुछ ने ज़ोर से ताली पीटी। एक बोला, "आज खूब पी है।"

दूसरे ने कहा, "कंगला कब बिना पिये रहता है। हीरा है हीरा।"

तीसरा कहने लगा, "जब से बंजारी गयी है बेचारा आधा भर रह गया है। आज बंजारी होती..."

मैंने अपना मुंह ढंक लिया। आंसू बाहर निकलने लगे। वह सच कहता है, काश ! आज मैं बंजारी होती—कंगला से फिर होड़ लगाती, ठीक उसी तरह जैसे मरघट में एक बार लगी थी, तब...मैं अपने आप सिसकी भरने लगी।

प्रेमरी ने झुककर मेरी ओर देखा। बोली, "रो रही हो, भाभी ?"

मैंने आंसू रोके। आंचल में आंखें साफ कीं और भरे गले से बोली, "नहीं, प्रेमरी।"

जी कड़ा कर मैंने मन में उठते तूफान को रोका। सामने झरपन नागिन की तरह उमड़ रही थी। उसने कंगला की कमर पकड़ ली। कंगला ने जैसे उसका गला दबाना चाहा। किसी बेदर्दी ने झरपन की छाती में सुई चुभा

दी थी। जवान बांस की शाखा की तरह वह झूल रही थी। उसका हर अंग बेहद लचक रहा था। अपने आप उसी ने पहल ली :

त ना ना रे ना ना हो,
तँ ना ना रे ना।

कमला ने भी जब उसका साथ दिया तो 'करमा' का मजमा पस्त पड़ गया। वह शैला में डूब गया। सारे दल ने अपने दोनों नेताओं का पूरा साथ दिया। बाजेवालों ने भी गति बदल दी। मादर की आवाज़ मन्द पड़ गयी, ढोलकियों ने गति पकड़ी। टिमकी, मृदंग और मजीरे खनक उठे :

तँ ना ना रे ना ना हो
तँ ना ना रे ना
तँ ना नाऽऽऽ
ना ना रे ना ना गांधी मिहराज
तये धीरे धीरे सिराज रे ऽऽऽ
तँ ना ना रे ना ना !

धीरे-धीरे सारे दल ने पैर बढ़ाये। एक साथ गिरते-उठते पैर और 'तँ ना ना रे ना ना' की टेक, प्रत्येक देखनेवाले की आखें अपने आप बंध गयी। बात की बात में नाच बरसाती नाले की तरह बहने लगा :

नरवा बहाये
सोनें गंगा नहाय
होय तोर ना ना ऽऽ
जवाहिरलाल !
होय तोर ना ना जवाहिरलाल !

मुझे तो अपनी आंखों में भरोसा नहीं हुआ, जवाहिरलाल मंच से जाने कब उतरकर इस दल में मिलकर नाचने लगे थे। मंच के नेता आश्चर्य से देख रहे थे। मैंने देखा, जवाहिरलाल कंगला की बाजू में खड़े-खड़े उचट रहे हैं। कैसा नेता है यह, अपने को कुछ समझता ही नहीं। दूध और पानी की तरह मिल गया। वाह, जवाहिरलाल, भगवान इस देवता को हजारों की

उमर दे। कंगला के भाग, वह किस देवता से कम है। पारस जिस लोहे को छूता है, सोना हो जाता है। जवाहिरलाल ने कंगला को छूकर सोना बना दिया। मुझे लगता था कि इस भारी भीड़ को चीरकर कंगला के पैर पकड़ लूं। उन्हें छूकर मेरे सब पाप धुल जायेंगे। बार-बार मन हुआ, एक-दो बार अपनी जगह से उठी···पर न जाने क्यों बढ़ न सकी। पिंजड़े में बन्द हिरनी की तरह सब देखती रही।

होय तेर ना ना रे जवाहिरलाल
झण्डा चमकाये तिरंगा,
गांधी मिहराज, होय तेर ना ना!

नाच खतम हुआ तो नेहरूजी ने कंगला को गले से लगा लिया।

मंच से खड़े होकर एक नेता ने घोषणा की कि इस जलसे में पहला इनाम गोंड टोली के नेता कंगला और झरपन को मिला। दूसरा इनाम संथालों को गया। कंगला ने आगे बढ़कर अपना इनाम लिया और झरपन ने एक टोली खोलकर शेर के दो बच्चे नेहरूजी के हाथ में दिये। नेहरूजी खूब खिलखिलाकर हंसे और कंगला तथा झरपन की उन्होंने पीठ ठोकी। दो-चार लोगों ने आगे बढ़कर इन तीनों की फोटू खींच ली। कंगला और झरपन दोनों खूब खुश थे। उनके चेहरे पर सूरजमुखी की चमक आ गयी थी। मजमा खतम हो गया और

"जवाहिरलाल की जै!"

"महात्मा गांधी की जै! भारत माता की जै!"

"जै हिन, जै हिन!"

नेता के मंच छोड़ते ही सारी भीड़ मैदान में खिल पड़ी। लोगों ने कंगला को घेर लिया। औरतों ने झरपन को ऊपर उठा लिया। दोनों का जय-जयकार होने लगा। मैं भी प्रेमरी का हाथ पकड़कर मैदान की ओर दौड़ी। चाहती थी कम से कम कंगला की पीठ ठोंक दूं, पर बीच ही में जोसेफ मिल गया। इतनी देर वह न जाने कहां नदारद था। जोसेफ के साथ विलियम भी था। विलियम को देखकर मेरा खून खुश्क पड़ा और पैर अट गये।

विलियम ने पूछा, "अच्छी तो हो?" उसकी आंखों में मुझे शरारत दिखी। मैंने कोई जवाब नहीं दिया। आंखें तो कंगला पर लगी थीं। उसके

चारों ओर इत्ती भीड़ इकट्ठी हो गयी थी कि वह दिखायी नहीं दे रहा था। आंखें बार-बार इस भीड़ से टकराकर रास्ता बनाना चाहती थीं। जोसेफ ने विलियम से ग्रेसरी का परिचय कराया। दोनों ने एक-दूसरे को हाथ जोड़े।

विलियम बोला, "बेंजो, कुछ तकलीफ तो नहीं। मुझे तो अभी भी तेरी याद आती है। सारा गांव तेरी याद में रोता है, तू तो हमारी राधा थी।" उसने यह मजाक में कहा था, पर मुझे अच्छा न लगा। उसे मजाक करना भी नहीं आता। जोसेफ और ग्रेसरी के सामने ऐसी बातें करना···मैंने ग्रेसरी को हाथ से इशारा किया और आगे बढ़ने लगी। जोसेफ ने आंखें तरेरीं। बोला, "बदतमीजी नहीं गयी! कोई बात करता है, तो सरग को देखती है। वैसे दिनभर घर में याद करते थकती नहीं।" मैं सन्न रह गयी। जोसेफ क्या कह गया, मैं विलियम की याद करती हूं! विलियम क्या सोचेगा? आखिर जोसेफ यह क्यों कह रहा है? अब वह मेरा आदमी है, मैं उसकी औरत हूं। क्या दुनिया का कोई मर्द अपनी औरत के सम्बन्ध में ऐसी बातें करता है?···मैं खड़ी-खड़ी न जाने कितने तर्कों में उलझ गयी। इसके पीछे जोसेफ का जरूर कोई अर्थ होगा। आदमी चापलूस है···पर, यह भी कोई चापलूसी है?···सोचती थी पुरुष कितना अजीब होता है?···उसकी जबान में लगाम नहीं, जैसे वह पैदाइशी नशेबाज है।

पीछे से किसी ने आकर जोसेफ से कहा कि उसे पादरी ने अभी बुलाया है। विलियम के साथ वह तुरन्त चला गया। जाते-जाते कह गया कि घंटे भर के भीतर में बजरिया में पीपर के झाड़ के नीचे मिलेगा, मैं तब तक वहां पहुंच जाऊं। दोनों के जाते ही बड़ा हल्का-सा लगा। मैंने ग्रेसरी से सलाह की और कंगला की ओर बढ़ गयी। पहले मुझे झरपन ने देखा। देखते ही मुझसे लिपट गयी। मैंने उसकी पीठ ठोकी। उसकी आंखें गीली हो गयीं। बोली, "क्या पीठ ठोकती है बंजारी, तेरे बिना तो सारा गांव काटता है··· और कंगला, उसके हाल तुझसे क्या कहूं, जैसे उसका अब इस दुनिया में कोई है ही नहीं। वह तो पागल-सा हो रहा है। जरा उसकी पीठ तो ठोंक दे। तुझे देखकर उसे संतोष मिलेगा। तेरे बिना उसका जीव मर गया है। कहता है, यह तो खाली काया है, प्रान तो उड़ गया।" इसी समय झरपा,

टमकी और गांव की दूसरी हमजोली लड़कियां भी आ गयीं। सब बहुत खुश थीं, गांव को इनाम जो मिला है। कंगला और शरपन दो हीरे आज सारे जलसे में चमक उठे। आपस में राजी-खुशी पूछी और फिर यहां-वहां का हंसी-मजाक होता रहा।

भीड़ छंटी तो मैंने कंगला को पास ही खड़ा पाया। उसकी आंखें मेरी आंखों में अनजाने ही टकरा गयीं। उसने तो अपनी नजर नीचे झुका ली, मैंने ही हाथ जोड़कर उसके सामने सिर झुका दिया। उसने कोई जवाब नहीं दिया। बुत बना खड़ा रहा। अभी-अभी वह खिलखिलाकर हंस रहा था, अपना इनाम लोगों को दिखा रहा था, मुझे देखते ही सारी हंसी पी गया। उसका चेहरा पीला हो गया और आंखों पर ओस जैसी बूंदें लटक गयीं। मैं कंगला का मन समझ गयी। मैंने उसके दोनों हाथ पकड़ लिये और लिपट-कर रोने लगी। गांव की सारी सहेलियां बड़ी जोर से हंसीं। उनकी हंसी ने जैसे तीर छोड़ा था। कंगला ने मुझे अलग कर दिया और बिना कुछ कहे वहां से चला गया। उसके पीछे गांव के सारे लोग चले गये। मेरा अपमान! कंगला मुझसे इत्ती नफरत करने लगा है। दो शब्द बोलना भी पाप समझता है।···प्रेसरी ने शायद मेरा मन पा लिया था। बोली, "भाभी, यह वही कंगला है क्या?"

मैंने सिर हिलाकर धीरे से हामी भर दी और आंचल से आंसू पोंछने लगी। प्रेसरी ने ढाढ़स बंधाया, "अब भी तुझे कितना प्यार करता है!"

"गलत कह रही हो, प्रेसरी। करता था, देखा नहीं अभी?"

प्रेसरी बोली, "बड़ी भोली हो, आदमी को समझो। तुमने उसकी आंखें नहीं देखीं? उसके ओठ नहीं देखे—जो पलभर पहले कमल की पंखुरियों की तरह खिले थे, तुम्हें देखते ही लाजवन्ती जैसे सिमट गये। उन्हें जैसे किसी ने जबरन पकड़कर सी दिया, अब भी तू उसके मन पर इत्ती ताकत रखती है।" उसने लम्बी सांस छोड़ी। बोली, "खैर, अब भूल जाओ भाभी, प्यार की यह जिन्दगी भूल जाओ। कंगला अब तेरा नहीं है, हो भी कैसे सकता है?"

"तुम ठीक कह रही हो, प्रेसरी!" मैंने कहा, "छाती पर पत्थर पर पत्थर गिर रहे हैं। कब तक सहूं? कैसे सहूं?"

"जब तक छाती पत्थर न बन जाय।...पत्थर ही पत्थर की चोट सह सकता है, भाभी। धीरज धरो, यह रात भी कभी बीतेगी और सुबह का सूरज फिर निकलेगा।"

"काश, सास रहते निकल आये!" ग्रेसरी के साथ मैदान छोड़कर मैं आगे बढ गयी। मैंने किसी को देखने की फिर कोशिश नहीं की। रास्ते मे क्या है, क्या नहीं—इसकी परवाह नही थी। नीचे सिर झुकाए बजरिया के पास पीपर के झाड तक पहुच गयी, वहां जोसेफ और विलियम खड़े थे। जोसेफ ने कहा कि वह पादरी के साथ दो-तीन घंटे बाद आएगा, हम दोनों विलियम के साथ गांव चल दें वरना रात हो जाएगी। ग्रेसरी ने अपनी मा के विषय मे पूछताछ की, तो जोसेफ ने बताया कि उसे भी पादरी ने रोक लिया है। उसने भी यही सदेश भेजा है कि ग्रेसरी गांव चली जाए।

मैं विलियम के साथ नहीं जाना चाहती थी। जोसेफ को एक ओर बुलाकर मैंने उसके कान मे कहा कि मैं भी दो-तीन घंटे बाद साथ चली चलूंगी। सुनकर जोसेफ बड़ी तेजी से गुर्राया, डांटकर बोला, "नौकरी छुड़ाने का विचार है क्या? वैसे ही आजकल पादरी खार खाये रहता है। मैं उसका घोड़ा हाकूंगा, उसका हुकम बजाऊंगा या तेरी रखवाली करूंगा?" मैं वहीं गड गयी। फिर मुह मे एक शब्द भी न निकाल सकी और चुपचाप विलियम के साथ चल पडी।

काफी देर तक सब मौन थे। घंटेभर चलने के बाद हमने एक नाले को पार किया और चढाई चढने लगे, तो विलियम ने शान्ति तोड़ी। अभी वह कुछ अन्तर से चल रहा था अब वह मेरे साथ-साथ चलने लगा। बोला, "मुझसे इतनी नफरत क्यों करती है, बजारी? आखिर तुझे ठिकाने से तो लगा दिया।"

"कुएं मे ढकेल दिया होता तो जनम भर तेरे एहसान मानती, विलियम!" मैंने लम्बी सांस खींची। ग्रेसरी ने कहा, "जोसेफ की बात निराली है भैया, आजकल वह खूब पीता है और रुपयों के चक्कर में पड़ा है। भाभी की बिलकुल परवाह नहीं करता।" ग्रेसरी ने मुन्नी के जाने की कहानी और उसमे मेरे ऊपर पड़ने वाले दुःख की गाथा भी कह दी। विलियम ने बड़ी हमदर्दी दिखायी। बोला, "जोसेफ को आने दे, अभी खबर लेता हूं।"

"नहीं-नहीं, विलियम !" मैंने जोर से कहा, "उससे कुछ नहीं कहना। मेरे वास्ते भगवान के वास्ते।"

"अच्छा, चिन्ता मत कर।" उसने मेरे गले में हाथ डाल दिया। मैंने प्रेमरी की ओर देखा, वह भी भयभीत-सी मेरी ओर देख रही थी। मैंने विलियम का हाथ हटाया, तो उसने फिर हाथ रख दिया। बोला, "अब तो तू पराई अमानत है, अमानत में खयानत नहीं करूंगा, डर काहे का, पर रास्ता काटने को हाथ तो रखने दे।"

"क्यों रखने दूं !" मैंने गुस्से से उसका हाथ हटा दिया और बीच में प्रेमरी को करके मैं दूसरी बाजू हो गयी। विलियम चुप रहा, पर तिरछी आंखों से काफी दूर तक मुझे घूरता रहा। थोड़ी दूर आगे बढ़ने के बाद वह फिर मेरे पास आ गया और कंधे पर हाथ रख दिया। रास्ता सूना नहीं था, लोग देखेंगे तो क्या कहेंगे ? फिर हाथ हटाकर बीच में प्रेमरी को मैंने कर दिया। आंख उठाकर विलियम की ओर मैंने देखा, तो वे शरारत से भरी नजर आयीं। मेरा देखना था कि उसने अपनी बायीं आंख एक कोने में दबाई और मेरी ओर इशारा किया। मेरा खून सूखने लगा और जमीन घूमती-सी नजर आने लगी। उसके साथ एक डग चलना भी मुझे भारी लगा, पर चारा भी वहां नहीं था।

एक टूटे-से मन्दिर के पास जब हम लोग पहुंचे तो सूरज क्षितिज को छूने लगा था। गांव अभी एक कोस बाकी था। आगे का रास्ता सुनसान और जंगली था। मेरे पैर भी चलते-चलते भारी हो गये थे। प्रेमरी पानी की मांग कर रही थी। मन्दिर के पीछे नीचे की ओर छोटा-सा नाला था। वहीं हम लोग उतरे। प्रेमरी ने पानी दिया। जब वह पानी पीने गयी, तो विलियम ने मेरे दोनों हाथ पकड़कर खींचे। बोला, "मैं तुमसे प्यार करता रहा हूं, बेजो, अब भी करता हूं। मेरे प्यार को न ठुकरा।"

अपने को छुड़ाते हुए मैंने कहा, "तुम्हीं ने तो मुझे दूसरे के गले में बांधा है, विलियम। मेरे ही पीछे मैंने कंगला को ठुकराया था, पर तूने ही मझधार में मुझे छोड़ दिया। अब तो वह मेरा है, उसकी मैं हूं और रहूंगी।"

"उससे तो मुझे नहीं छुड़ाता बेजो, शायद तू नहीं जानती, उसे आदमी मैंने ही बनाया है, मारा-मारा फिरता था। मेरा एहसान वह नहीं भूल

सकता। इसलिए कहता हूं कि उसका डर तो तू बिलकुल न कर। ग्रेसरी पानी पीने गयी है। चल, हम दूसरे घाट पानी पी आयें।"

सुनकर मैं तमतमा उठी। बोली, "ठीक कहता है तू, तूने उसे आदमी बनाया और मुझे भी। हम लोग तो जानवर थे।" कहते-कहते मैं अपने आप गुस्से से लाल हो गयी, भीतर से जैसे ज्वालामुखी भड़क उठा। बोली, "खबरदार! आगे से ऐसी बातें कीं, अब मुझे हाथ लगाया तो ठीक न होगा, विलियम!"

ग्रेसरी ने शायद यह सुन लिया था। पानी पीना छोड़कर वहीं से उसने आवाज लगायी, "क्या बात है, भाभी?" और पलभर में ही दौड़ते आकर सामने खड़ी हो गयी। विलियम तब भी मेरे पास खड़ा था। वह बोली, "क्या हो गया, भाभी?" मैं क्या कहती, बात टाल दी। बोली, "कुछ नहीं, यों ही।" मन हुआ आगे न बढ़ूं। विलियम से कह दूं कि वह चला जाय और हमारा साथ छोड़ दे, पर अंधेरा हो रहा था, गैल चलना धीरे-धीरे कम होता जा रहा था। हमारे गांव के आदमी हमें पीछे छोड़कर बहुत आगे बढ़ गये थे। विवश होकर विलियम का साथ पकड़ना पड़ा।

हम लोग आगे बढ़े। एक मील आगे चलने के बाद सुनसान और घना जंगल आ गया। रास्ते के दोनों ओर गहरी खाई थी। आसपास मरई और सागोन के ऊंचे-ऊंचे झाड़ थे। सामने गाड़ादान के मोड़ पर चार का जंगल था। काले-काले गोल-गोल चार देखकर ग्रेसरी रुक गई, बोली, "भाभी, दो-चार खा लें।" विलियम ने उसका साथ दिया, न चाहते हुए भी मुझे बात माननी पड़ी। तीनों चार खाने में भिड़ गये। बेहद मीठे चार थे और एक-से-एक झुरमुट, सिर से पैर तक लदे।

मैं एक डाल पकड़कर चार तोड़ रही थी कि पीछे से विलियम ने मुझे कसकर जकड़ लिया, बोला, "रानी, क्यों रूठती हो?..."

मैंने चार की डाल छोड़ दी, मेरे हाथ से तोते उड़ने लगे थे। मैंने अपने को छुड़ाने की कोशिश की, बोली, "छोड़ दे विलियम, वरना..."

"वरना क्या?" वह हंसा। मैं एकाएक चिल्ला पड़ी, "दौड़ो, दौड़ो, दौड़ो!"

ग्रेसरी ने आवाज लगायी, भाभी!" चार खाते-खाते वह काफी दूर

निकल गयी थी। डालों, कांटों पर राह बनाते वह मेरी ओर दौड़ी। विलियम ने मुझे छोड़ दिया था, पर मेरे पास ही खड़ा वह दांत पीस रहा था। कह रहा था, "आने दे जोसेफ को, खाल खिचवा लूगा।"

ग्रेसरी जब पास आ गयी, तो मैं उससे लिपट गयी। उसने पूछा, "क्या बात है, भाभी ?" मैं कांप रही थी और घबराई हुई नजरों से विलियम को देख रही थी। ग्रेसरी के प्रश्न का उत्तर मेरे मुंह से न निकला। उसका हाथ पकड़कर सड़क की ओर बढ़ी। हम लोग सड़क पर पहुंचे तो गांव का पटेल अपने तूफानी घोड़े पर चला आ रहा था। मैंने ग्रेसरी से उसे रोकने को कहा। वह रुक गया। मैं विलियम के साथ अब एक डग भी आगे नहीं बढ़ना चाहती थी। भगवान ने भी शायद मेरी इज्जत बचाने को पटेल को भेजा था। सब लाज-शरम छोड़कर मैंने पटेल से विनती की कि वह हम दोनों को अपने साथ घर ले चले।

पटेल ने विलियम की ओर देखा, फिर मेरी ओर देखकर बोला, "क्यों ?"

"वैसे ही पटेल साहब, ये तो किसी दूसरे गांव जाने वाले हैं। उसका रास्ता यहीं से जाता है।" मुझे झूठ बोलना ही पड़ा। उसने जब विलियम से पूछा कि वह कहां जायगा तो उसने भी गोल-मोल उत्तर दिया, पर यह साफ कह दिया कि उसे बेतमा नहीं जाना। मैंने सांस ली, मेरे जी में जी आया, मैंने मन ही मन ईसू की याद की।

पटेल बड़ा दयावन्त आदमी था। गांवभर के लोग उसके गुण बखानते थे। उसकी लड़की मेरे साथ पढ़ती थी, इसलिए पहचान भी थी। वह घोड़े से उतर पड़ा, बोला, "तुम दोनों को इस पर बैठाल देता पर जानवर अजीब है, जरा-सी लगाम खींची कि हवा हो गया।"

मैंने कहा, "यह तो आपकी दया है पटेल साहब, हमें तो सिर्फ आपका साथ चाहिए, गांव तो अब मील भर ही रह गया है, पैदल चल सकते हैं।"

"चलो, बेटी !" वह हमारे साथ हो लिया। विलियम वहीं खड़ा रहा। मैंने उसकी परवाह नहीं की। थोड़ा आगे चलकर जब मैंने पीछे देखा तो विलियम वहां नहीं था।

बात की बात में हम लोग गांव पहुंच गये। पटेल रास्तेभर अच्छी-

अच्छी बातें करता रहा। वह चुनाव की चर्चा कर रहा था। सरकार की बड़ी-बड़ी योजनाएं बता रहा था। यह मैं जानती थी कि इस बार पटेल चुनाव में खड़ा हुआ है। उसे जवाहिरलाल की टिकिट मिली है। उसने बात की बात में हंसते हुए पूछा था, "तुम लोग किसे वोट दे रही हो?"

ग्रेसरी ने कहा था, "मैं तो नाबालिग हूं, पटेल साहब।"

"और तुम भी!" मेरी ओर हंसते हुए उसने इशारा किया। मैंने अपना आंचल मुंह में डालकर हंसी रोकते हुए कहा, "वोट तो तुम्हें ही देना चाहती हूं, पर···"

"पर क्या?" वह बोला।

"पादरी भी खड़ा हुआ है। कहता था, सारे ईसाइयों को मेरी पेटी में ही वोट डालना पड़ेगा।"

"वह तुम्हारा पादरी है, चाहो तो उसे ही वोट डाल सकती हो, पर तुम्हें कोई दबा नहीं सकता, तुम्हारा पति भी नहीं। तुम आजाद देश की नागरिक हो, जिसे चाहो वोट दे सकती हो···" पटेल ने जो बात कहनी शुरू की तो कहता गया, "मैं नहीं कहता मुझे वोट दो, पर यह भी कह दूं कि तुम्हें इस मसले में किसी की मरजी पर नहीं चलना चाहिए। तुम पर जो दबाव डाले, मुझसे कहो। सरकार तुम्हारी मदद करेगी···"

इसी बात-बात में घर आ गया था। पटेल को सिर झुकाकर और उसके एहसान का आभार जताकर हमने उसका साथ छोड़ दिया। ग्रेसरी अपने घर चली गयी। मैंने दरवाजा खोला तो लगा जैसे भीतर से किसी ने मां— कहकर मुझे पुकारा है। मैं दौड़ गयी, पर जैसे ही अंगूठे में उचटा लगा कि अड़कर रह गयी। मेरी मुन्नी···मैंने अपने कानों को दोनों हाथों से दबा लिया। घर काटने-सा लगा तो उसी पैर बाहर लौट आयी। थोड़ी देर परछी पर खड़ी रही और जोसेफ का रास्ता हेरती रही। धीरे-धीरे रात का अंधेरा घना होने लगा, बड़ी हिम्मत कर भीतर आयी, ढिबिया जलायी और अपने भारी पैर तथा बोझिल मन को लेकर खाट पर गिरी, तो अचेत हो गयी। पता नहीं कब नींद ने धर दबाया था।

चित्रकोट के इस जलसे की चर्चा काफी दिनों तक रही। उस चर्चा के

साथ कंगला का नाम कई बार सुनने को मिला। जितने लोग मजमा देखने गये थे, सबने एकसुर से कंगला के नाच की सिराहना की। वह उस दिन नाच में बिलकुल खो गया था। उस पर शारदा मइया की जरूर छाया रही है, वरना इत्ते बड़े दांव में उसकी जीत होना सहज नहीं है। सथालों का दल जब मैदान में उतरा था, तो अपने आपको भूल गयी थी। छत्तीसगढ़ियों ने जब 'बियासी के नागर' अपने हाथ-पैरों के लोच से चला ये थे, तो मेरी आंखों के सामने कजरा और बिजरा की जोड़ी खेत जोतते नजर आने लगी थी।

इसकूल में मिस्पा ने भी कंगला के बारे में पूछताछ की। इसकूल में एक अखबार आता है, उसमें कंगला की फोटो बड़े ठाठ के साथ छपी थी। मिस्पा शायद जानती थी कि कंगला मेरे नजदीक रह चुका है। अखबार का फोटो देखकर वह बड़ी खुश हुई। उसने फोटो मुझे भी बताया। देखकर दंग रह गयी। आंखें फट गयीं और मैं देखती रही। जी नहीं होता था कि वहां से आंख उठाऊं। वही कौड़ियों की माला, वही सींग, मटकते हाथ, खोया-खोया-सा चेहरा! मैंने अखबार को छाती से लगा लिया। मिस्पा बोली, "बड़ी खुश हो।" मैंने मुंह ऊपर-नीचे घुमाकर अपनी खुशी प्रकट की और एकाएक शरम भी लगी तो उसी गजट को मुंह में दबाकर रह गयी। मिस्पा ने भी लम्बी सांस ली, बोली, "कहीं वह मिल जाय तो उससे 'मैरिज' कर लूं, बांका नवजवान है।" मिस्पा की बात सुनकर जो हंसी मैं गजट के सहारे दबाना चाहती थी, वह फूट पड़ी। मुझे भी मजाक सूझा, बोली, "मेडम, तैयार हो तो बात चलाऊं।" उसने उतावली होकर पूछा, "तू उसे जानती है?"

"हां, खूब जानती हूं मेडम, मेरे ही गांव का है। बचपन में हम दोनों साथ खेले हैं।" वह कुर्सी छोड़कर उठ बैठी और अपने आप उचकने लगी, बोली, "ओ गॉड!" उसने मेरे हाथ पकड़कर कहा, "तेरा शुक्रिया करूंगी, एक बार उससे मिला दे।"

"मिला तो दूंगी।" मैंने हंसते हुए कहा, "पर पढ़ा-लिखा ज्यादा नहीं है। तुम्हारी गिटपिट वह नहीं समझेगा।"

"मैं सब समझा लूंगी बेंजो, तू इसकी चिन्ता न कर।"

मैंने दूसरी चुटकी ली, बोली, "पर वह जात का गोंड है, पक्का गोंड।

खिस्ती कभी नहीं बनेगा, शादी के पहले तुम्हें ही जात बदलना पड़ेगा।"

"पहले क्यों? अभी जात बदलने को तैयार हूं, ऐसा हीरा जिसे मिले···" वह मेरे हाथ पकड़कर झूलने लगी और बोली, "एक बार तो सामने ला दे।"

ओठ दबाकर मैंने हंसी रोक ली। सामने से रूबी आ रही थी सो यह बात यहीं खतम हो गयी। रूबी को इसकूल में देखकर मुझे अचरज हुआ। कई दिनों से उसे देखा नहीं था। जब से उसकी नौकरी छूटी है, पता नहीं रहा। मैंने दोनों हाथ उठाकर 'विश' किया। वह मेरे पास आकर खड़ी हो गयी। बड़ी देर तक उससे हमारी बातें होती रहीं।

पता लगा कि आजकल वह इसकूल में हिसाब-किताब रखने वाली क्लिर्क हो गयी है। उसने अपने आप जोसेफ की चर्चा निकाली। मैंने पूछा, "आजकल तो तुम दिखती नहीं, कहां रहती हो?" उसने टालते हुए जवाब दिया, "देखने के लिए भी आंखें चाहिए—दो दिन से तो यहीं आ रही हूं। पहले बेकार थी, बेकारी के दिनों में कहां जाती? जोसेफ न होता तो—तू बड़ी भागवान है बेंजो, जोसेफ जैसा हीरा मिला है। ऐसा आदमी दुनिया में कम मिलता है।" यह बात मुझे अच्छी नहीं लगी। ऐसी बात और कोई करता तो हर्ज नहीं, रूबी के मुंह से जोसेफ के बारे में कहे जाने वाले हर शब्द मेरे लिए तीर से कम नहीं थे। उसकी बात में मन नहीं लगा, बिना कुछ जवाब दिये, थोड़ा यहां-वहां देखकर और बहाना बनाकर मैं वहां से चली गयी।

घर में जोसेफ ने चितरकोट के बारे में कोई चर्चा नहीं की। वहां से लौटने के बाद मैं बड़ी चिन्तित थी। रास्ते में विलियम के साथ जो गुजरी, वह मेरे लिए ऐसा पहाड़ था, जो न जाने कब सिर पर टूट पड़े। विलियम ने नमक-मिर्च लगाकर न जाने क्या-क्या जोसेफ से बताया होगा। जोसेफ भला मेरी क्या सुनने चला है। सुनता भी कब है? उसका परिणाम क्या होना है, यह सोचकर ही खून सूख जाता था, पर जोसेफ ने कोई चर्चा ही नहीं की। वह दिनभर मुंह लटकाये अनमना-सा रहता था। शाम को उसमें जान आ जाती थी, तब वह सादा डाल लेता था और सैर को चला जाता था। मुझे पता लगा कि वह रोज शाम को रूबी के यहां जाता है। दिन में

उससे मिल नहीं सकता। सुना है कि पादरी के पास रूबी और जोसेफ की प्रेम-कहानी पहुंच गयी है। बड़ी अजीजी करने के बाद उसने रूबी को इस-कूल में जगह दी थी। जोसेफ को भी वह कड़ी डांट पिला चुका है। यदि कभी दोनों एक साथ पादरी को दिख गये, तो दोनों का बेड़ा पार है। इसी से पादरी की आंखों में धूल झोंककर वह शाम को उससे मिलता है।

रूबी में ऐसा क्या गुण है, मैं बहुत कोशिश करके भी न जान पायी। आखिर जोसेफ उस पर क्यों मरा जाता है। उसे अपनी नौकरी की भी फिकर नहीं है। अपनी औरत के रहते भला कोई पराई औरत के पीछे ऐसा दीवाना हुआ है ? मैंने प्रेसरी से इसकी चर्चा की, तो उसने बात टाल दी। बोली, "रूबी के लिए यह नयी बात नहीं है, भाभी ! पहले एक चपरासी से उसकी आंखें लगी थीं, फिर एक कम्पाउण्डर पर उसने डोरे डाले। एक डागधर भी अछूता नहीं रहा। परकी साल एक टीचर को उसने फंसाया था। जितने उसके जाल में फंसे, सबको नौकरी से हाथ धोना पड़ा। सौ चूहे खाकर भी बिल्ली का पेट नहीं भरता, भाभी।"

प्रेसरी की बातें सुनकर मेरी चिन्ता बढ़ गयी। सबकी नौकरी चली गयी, जोसेफ भी पिछले कुछ महीनों से पादरी के नाम पर रोता रहता है। एक बार तो पादरी मेरे सामने ही उसे भली-बुरी कह चुका है। ऐसी हालत में कब क्या हो जाय, पता नहीं। तब मेरा क्या होगा ? जोसेफ मेरे कहने पर चले तब तो चिन्ता की बात नहीं। किसान की बेटी हूं, बनी-मजूरी करके दोनों प्रेमियों का पेट मजे में भर सकती हूं, पर···पर कहीं वह मुझे छोड़कर रूबी के साथ भाग गया तो ? मेरा यहां कौन बैठा है ? विलियम जैसे लोगों की दुनिया में कमी नहीं है। यह चिन्ता जब-तब आकर मेरे मन को विकल कर जाती थी।

कुछ दिनों से गांव में पहल-पहल बढ़ गयी थी। कोई न कोई अफसर या नेता उतरे-पूतरे गांव में आता ही रहता था। पादरी उन सबसे मिलने जाता इसलिए जोसेफ की ड्यूटी भी बड़ी हो गयी थी। एक दिन तो वह रात-भर नहीं आया। सुबह जब लौटकर आया तो उसका माथा भारी था। कहने लगा, "रातभर आज खाने को नहीं मिला। मिनिस्टर आया था। कांग्रेस का राज है, तो अंधेर मचा है। बेचारा पादरी भी बकता रहा

खिरची कभी नहीं बनेगा, शादी के पहले तुम्हें ही जात बदलना पड़ेगा।"

"पहले क्यों ? अभी जात बदलने को तैयार हूं, ऐसा हीरा जिसे मिले···" वह मेरे हाथ पकड़कर झूलने लगी और बोली, "एक बार तो सामने ला दे।"

ओठ दबाकर मैंने हंसी रोक ली। सामने से रूबी आ रही थी सो यह बात यहीं खतम हो गयी। रूबी को इसकूल में देखकर मुझे अचरज हुआ। कई दिनों से उसे देखा नहीं था। जब से उसकी नौकरी छूटी है, पता नहीं रहा। मैंने दोनों हाथ उठाकर 'विश' किया। वह मेरे पास आकर खड़ी हो गयी। बड़ी देर तक उससे हमारी बातें होती रहीं।

पता लगा कि आजकल वह इसकूल में हिसाब-किताब रखने वाली क्लिर्क हो गयी है। उसने अपने आप जोसेफ की चर्चा निकाली। मैंने पूछा, "आजकल तो तुम दिखती नहीं, कहां रहती हो ?" उसने टालते हुए जवाब दिया, "देखने के लिए भी आंखें चाहिए—दो दिन से तो यहीं आ रही हूं। पहले बेकार थी, बेकारी के दिनों में कहां जाती ? जोसेफ न होता तो—तू बड़ी भागवान है बेंजो, जोसेफ जैसा हीरा मिला है। ऐसा आदमी दुनिया में कम मिलता है।" यह बात मुझे अच्छी नहीं लगी। ऐसी बात और कोई करता तो हर्ज नहीं, रूबी के मुंह से जोसेफ के बारे में कहे जाने वाले हर शब्द मेरे लिए तीर से कम नहीं थे। उसकी बात में मन नहीं लगा, बिना कुछ जवाब दिये, थोड़ा यहां-वहां देखकर और बहाना बनाकर मैं वहां से चली गयी।

घर में जोसेफ ने चितरकोट के बारे में कोई चर्चा नहीं की। वहां से लौटने के बाद मैं बड़ी चिन्तित थी। रास्ते में विलियम के साथ जो गुजरी, वह मेरे लिए ऐसा पहाड़ था, जो न जाने कब सिर पर टूट पड़े। विलियम ने नमक-मिर्च लगाकर न जाने क्या-क्या जोसेफ से बताया होगा। जोसेफ भला मेरी क्या सुनने चला है। सुनता भी कब है ? उसका परिणाम क्या होना है, यह सोचकर ही खून सूख जाता था, पर जोसेफ ने कोई चर्चा ही नहीं की। वह दिनभर मुंह लटकाये अनमना-सा रहता था। शाम को उसमें जान आ जाती थी, जब वह सोडा डाल लेता था और सैर को चला जाता था। मुझे पता लगा कि वह रोज शाम को रूबी के यहां जाता है। दिन में

उससे मिल नही सकता। सुना है कि पादरी के पास रूबी और जोसेफ की प्रेम-कहानी पहुंच गयी है। बड़ी अजीज़ी करने के बाद उसने रूबी को इसकूल में जगह दी थी। जोसेफ को भी वह कड़ी डांट पिला चुका है। यदि कभी दोनों एक साथ पादरी को दिख गये, तो दोनों का बेडा पार है। इसी से पादरी की आंखों मे धूल झोंककर वह शाम को उससे मिलता है।

रूबी में ऐसा क्या गुण है, मैं बहुत कोशिश करके भी न जान पायी। आखिर जोसेफ उस पर क्यों मरा जाता है। उसे अपनी नौकरी की भी फिकर नहीं है। अपनी औरत के रहते भला कोई पराई औरत के पीछे ऐसा दीवाना हुआ है ? मैंने ग्रेसरी से इसकी चर्चा की, तो उसने बात टाल दी। बोली, "रूबी के लिए यह नयी बात नही है, भाभी ! पहले एक चपरासी से उसकी आंखें लगी थीं, फिर एक कम्पाउण्डर पर उसने डोरे डाले। एक डागधर भी अछूता नहीं रहा। परकी साल एक टीचर को उसने फंसाया था। जितने उसके जाल मे फंसे, सबको नौकरी से हाथ धोना पडा। सौ चूहे खाकर भी बिल्ली का पेट नहीं भरता, भाभी।"

ग्रेसरी की बातें सुनकर मेरी चिन्ता बढ गयी। सबकी नौकरी चली गयी, जोसेफ भी पिछले कुछ महीनो से पादरी के नाम पर रोता रहता है। एक बार तो पादरी मेरे सामने ही उसे भली-बुरी कह चुका है। ऐसी हालत मे कब क्या हो जाय, पता नही। तब मेरा क्या होगा ? जोसेफ मेरे कहने पर चले तब तो चिन्ता की बात नहीं। किसान की बेटी हूं, बनी-मजूरी करके दोनों प्रेमियों का पेट मजे मे भर सकती हूं, पर···पर कही वह मुझे छोड़कर रूबी के साथ भाग गया तो ? मेरा यहा कौन बैठा है ? विलियम जैसे लोगो की दुनिया मे कमी नही है। यह चिन्ता जब-तब आकर मेरे मन को विकल कर जाती थी।

कुछ दिनों से गांव में चहल-पहल बढ गयी थी। कोई न कोई अफसर या नेता अतरे-दूसरे गांव में आता ही रहता था। पादरी उन सबसे मिलने जाता इसलिए जोसेफ की डीटी भी कडी हो गयी थी। एक दिन तो वह रात-भर नही आया। सुबह जब लौटकर आया तो उसका माथा भारी था। कहने लगा, "रातभर आख लगाने को नहीं मिला। मिनिस्टर आया था। कांग्रेस का राज है, तो अंधेर मचा है। बेचारा पादरी भी घबराता रहता

है। न जाने ये नेता कब क्या कानून पास कर लें और मिशनरी के काम में रोड़े अटकाएं। जब से इनका राज आया है, मिशनरी का काम कमजोर पड़ता जा रहा है। अच्छे-अच्छे पादरियों को सरकार नोटिस देकर देश से भगा रही है। इसी से पादरी इन नेताओं को मनाने में लगा रहता है। एक जमाना था, जब बड़े से बड़ा अफसर पादरी के सामने सिर झुकाता था। कभी पादरी अपने बंगले के बाहर नहीं निकला।···नेता आते हैं अपना प्रचार करने और परेशानी गांवभर को होती है।" जोसेफ ने एक ठंडी आह छोड़ी।

मैं चुपचाप उसकी बातें सुन रही थी। वह कह रहा था कि एक हफ्ते के बाद वोट पड़ने वाले हैं। पांच साल से ये नेता गद्दी जमाये बैठे हैं। इस बार पादरी कहता था कि इन्हें हटाकर चैन लेगा। जोसेफ ने बताया कि पादरी चुनाव में जीतने के लिए बड़ी हिम्मत कर रहा है। दिन-रात पैदल गांव-गांव घूमकर अपना प्रचार करता है। कहता है, चुनकर आ गया तो सारे गांव को 'सर्ग' बना देगा। कोई कभी भूखों नहीं मरेगा और किसी को बेघरबार नहीं रहना पड़ेगा।

पटेल भी चुनाव में खड़ा था। मैंने उसके बारे में पूछा तो जोसेफ की आंखें लाल हो गयीं, बोला, "वही तो सब झगड़े की जड़ है। गांवभर के लोग को बरगलाता है और अफसरों को उल्टी-सीधी रपट देकर पादरी की जड़ खोदने में लगा है। एकाध दिन···"

मैंने बीच में रोक दिया, बोली, "सुना है जवाहिरलाल ने उसे टिकिट दी है।"

"हां," वह बोला, "बैल जोड़ी वाली उसकी भी पेटी है। बैल और हल का चिह्न बनाकर देहातियों को यह सरकार कितना बुद्धू बनाती है। कहीं पटेल चुनकर आ गया तो हम सबकी खैर नहीं, हम पर गाज गिर पड़ेगी।"

"आखिर क्यों?" मैंने पूछा, तो वह बोला, "पटेल मिशनरी का जानी दुश्मन है।"

"तो क्या पटेल सब कुछ कर सकता है?" मैंने पूछा। वह बोला, "कर तो कुछ नहीं सकता, निरा बुद्धू है, पर बड़े मंत्री के सामने मनमाना बक तो सकता है। आजकल राज बैल जोड़ी वालों का है। जाने ये सब क्या कर

डाले। जिसके पास लगाम होती है, घोड़े को मनमाना हाक ही लेता है।" जोसेफ दिल खोलकर पटेल और काग्रेस सरकार को गालियां दे रहा था, पर मेरे मन मे पटेल के लिए बड़ी श्रद्धा थी। वह पिता से कम नही था। उस दिन वह रास्ते मे मेरी मदद न करता तो···और जब से मैंने जवाहिरलाल को देखा है, सब कुछ भूल गयी हूं। वह आदमी नही, देवता है, हमारा ईशू है। सारे लोग उस अकेले आदमी को सिर झुकाते है। उसकी छाया में जो काम करें, वह माटी भी हो तो सोना बन जाएगा। पटवारी ने कल बताया था कि जो बैल जोडी छाप पेटी मे वोट देगा, उसका नाम नेहरूजी तक पहुंच जाएगा, तब नेहरूजी उसके सारे दु ख मिटा देगे। दु ख मिटायें-न मिटायें, नाम उन तक पहुंच जाएगा, क्या यही कम है ?

सवेरे से गांव में धूम मची थी। मैदान मे लाल झण्डे के नीचे, लाल टोपी लगाये कोई नेता भाखन दे रहे थे। उनकी पेटी का निशान झोंपड़ी था। वह कभी नेहरूजी की तारीफ करता था और कभी गालियां देता था। ईसाइयो की बात करते समय भी वह ऐसा ही कुछ कह जाता। कभी कहता—ये मिशनरी वाले हमारे गरीब देहातियों की बडी सेवा करते है। कभी कहता कि ये भोली-भाली जनता को गुमराह करते हैं और उनकी ज़ात-बदल करते है। इनका धर्म विदेशी है, ये हमारे देश के दुश्मन है। वह कहता था कि यदि मैं जीत गया तो सारे देश में एक भी बड़ा आदमी नहीं रह जाएगा। सब महल धूल में मिल जायेगे और हर आदमी झोंपड़ी मे रहेगा। बडा लम्बा भाखन देकर वह मंच से उतर गया। उसकी सभा मे पन्द्रह-बीस आदमी से जादा नही थे। पादरी मीटिंग में नहीं गया। सुना है, कहता था कि इनसे तो कांगरेस सरकार ही भली है।

दूसरे दिन एक दूसरे दल के नेता दस-पन्द्रह आदमियों को जमाये मैदान मे डटे थे। भाखन देते समय उनके मुंह से जितने शब्द न निकलते, उससे ज्यादा उनके हाथ और पैर मटकते थे। वे दिल खोलकर नेहरूजी और उनके राज को गाली दे रहे थे। कहते थे, "हमारी पारटी जीत गयी, तो हंसिया और हथोड़े के निशान वाला यह झण्डा देश में लहरायगा। सारे किसान यहां के राजा होगे।" वे बार-बार एक देश का नाम लेते थे। कहते थे, "वहा भी पहले यहां जैसी गुलामी थी, पर अब सब एक बराबर है, वहां

न कोई किसी का मालिक है और न कोई किसी का नौकर।" मिशनरी के बारे में उनके विचार जैसे कांपते थे। इस गांव में ईसाइयों की संख्या ज्यादा थी। आसपास के गांवों में भी काफी ईसाई थे, इसलिए नेताजी न तो खुलकर ईसाइयों को गाली दे सकते थे, न तारीफ कर सकते थे।

नेहरूजी जैसी निर्भीकता मैंने किसी में नहीं देखी। उतने बड़े मजमे में सिंह जैसे दहाड़ते थे। किसी की क्या मजाल कि एक शब्द भी कह ले। पादरी भी नीचे जमीन पर भीगी बिल्ली बना बैठा था। जिस देश को ऐसा नेता मिले उसके भाग चमकने में क्या देर? उनके विचारों में कितनी सफाई थी। कोई घबराहट नहीं। उन्होंने ईसाइयों को गाली नहीं दी। कहते थे, "यह ऐसा देश है, जहां हर जात, हर धरम और हर फिरके के लोगों को रहने का अधिकार है। हिन्दू हो या मुसलमान, ईसाई हो या और कोई जात, कोई भेद नहीं। सब एक हैं। सब धर्मों को बढ़ने का मौका है।"

जहां भेदभाव नहीं, अपने-पराये की बात नहीं, वहीं तो जीवन का आनन्द है, नहीं तो आदमी वैसे ही घुलता रहता है, जैसे घुन लगा काठ अपने आप कमजोर हो जाता है। आज पादरी की यही दशा है। कहता है, "ईसाई धर्म की जड़ें गहरी करने के लिए मुझे वोट दो। ईसू का कहना था कि जाओ, दुनिया के भूले आदमियों को राह दिखाओ।...अब राह दिखाने का अवसर आ गया है। सारे हिन्दुस्तानी भटके हैं, भूले हैं।" वह कहता था कि अगर जीतकर आ गया, तो हर गांव में एक चरच बनवायेगा। मैं सोचती, तब न जाने यहां क्या होगा। न जाने कितनी कुंआरी तब बैजो बनेंगी, कितनों की जिन्दगी में कलंक लगेगा—जोसेफ ऐसे ही आदमी की पेटी में वोट देने को कहता है। कहता था "पादरी की पेटी का निशान 'खजूर का पेड़' है। जिस पेटी में यह चिह्न बना हो, उसी में वोट डालना।"

मैंने नाहीं कर दी। बोली, "सुना है वोट डालने में हर आदमी और हर औरत आजाद है।"

"नहीं," वह तेजी से चिल्लाया, "यदि खजूर की छाप वाली पेटी में वोट न डालोगी तो खाल खींच लूंगा।"

"खाल खींच लोगे"—मैंने सहज ही कहा, तो वह तमककर बोला,

"हा, तू अपना बोट जिस पेटी मे डालेगी पादरी को पता लग जायगा। यदि मुझे पादरी ने बताया, कि तूने बैलजोड़ी वाली पेटी मे बोट डाला है तो…"

मैं वहां से उठकर बाहर चली गयी। सोचने लगी, इस देश का यह कानून ही खराब है। यदि लोगों की बोट डालने मे खाल खीची जाती है तो सरकार चुनाव का ढोंग ही क्यों रचाती है। जहां वोट देने के लिए आदमी आजाद न हो और वह जिसे वोट दे उसका पता सबको लग जाय तो फिर चुनाव करने से क्या फायदा।

सामने से ग्रेसरी आ रही थी। वह हस रही थी। पास आकर बोली, "भाभी, सुना है अपने यहा कल बोट पड़ने वाले है।"

"हां, ग्रेसरी!" मैंने उत्तर दिया।

उसने पूछा, "तुम किसी पेटी में बोट डालोगी? पटेल की पेटी मे न?"

जोसेफ ने शायद यह सुन लिया था। दांत पीसता वह बाहर आया, बोला, "पटेल की पेटी में?…हमारे दुश्मन, नमकहराम, एहसान-फरामोश की…" गालियां देता वह चला गया। मैंने ग्रेसरी से पूछा, "अब क्या करूं? वह कहता है कि पादरी को ही बोट दो। नहीं देती तो उसे पता लग जायगा, तब मेरा जाने क्या हाल होगा। अभी घुट-घुटकर सांस ले रही हूं, फिर वह भी कठिन हो जायगा।"

ग्रेसरी को इसके बारे में ज्यादा मालूम नहीं था। अभी तो उसे बोट डालने का अधिकार ही नही था। मैंने उसकी मां मरियम से इस बारे मे सलाह ली, वह बोली, "मैं कुछ नही कह सकती, बेंजो! यही जानती हूं कि हम सबको पादरी को ही बोट देना चाहिए। वह हमारा रक्षक है। उसी का नमक हम सब खाते है। वह हमारे बल पर ही तो चुनाव मे खड़ा हुआ है।"

दूसरे दिन सारे गाव में शांति थी। कही कोई भाषण नही दे रहा था। रात भर जो चहल-पहल थी, एकदम शांत हो गयी थी। सारा गाव बोट डालने जा रहा था। मेरे इसकूल मे ही बोट डालने की पेटियां रखी थीं। मरियम के साथ मैं भी बोट डालने चली गयी। जिंदगी में पहली बार मैं यह काम कर रही थी।

अफसरों ने मुझे हरे रंग का एक कागज दिया और भीतर एक कमरे में भेज दिया। वहां चार-पांच पेटियां रखी थीं—बैल जोड़ी छाप, झोपड़ी छाप, हंसिया छाप, खजूर का पेड़···मैं एक पल खड़ी होकर सोचने लगी। बार-बार चारों पेटियों में नजर डालती थी, पर वह आकर बैल जोड़ी छाप वाली पेटी में थम जाती थी। एक चित्र में मैंने नेहरूजी को हाथ जोड़कर वोट मांगते देखा था। सोच रही थी—देवता खुद वोट मांग रहा है, उसे छोड़कर फिर किसे वोट दूं। पर जोसेफ का चेहरा जैसे ही आंखों के सामने आया, सब भूल गयी। चुपचाप खजूर के पेड़ वाली पेटी में वोट डालकर चली आयी।

बाहर आयी तो गुलाबी रंग का दूसरा वोट मुझे दिया गया। मैं फिर एक दूसरे कमरे में गयी। वहां भी इसी तरह पेटियों को रखे देखा, पर वोट डालने का जी नहीं हुआ। दिमाग भारी हो गया था, अपना वोट एक पेटी के ऊपर रखकर चली आयी—सब देखेगा, उठा लेगा। अन्दर डालने में ही क्या धरा है? पैरों में आज जो बेड़ी पड़ी है कल भी पड़ी रहेगी—चाहे कोई जीते, कोई हारे। नेहरू का राज हो या पादरी की हकूमत, मेरे लिए दोनों में कोई अन्तर नहीं है। मेरी हालत यही बनी रहेगी, उसे सिर्फ मेरा भाग बदल सकता है, यदि वह जीत जाय—पर वह तो चुनाव में खड़ा ही नहीं हुआ। मैं पछताने लगी, ऐसा जानती तो अपने 'भाग' को भी चुनाव में खड़ा कर देती—एक बार परीक्षा तो हो जाती—खोटा है या खरा।

उत्साह के साथ वोट डालने गयी थी, पर भारी मन लेकर लौटी। सोच रही थी पादरी चुनाव में तो जीत ही जायगा तब···। रास्ते में मिन्ना मिल गयी। मैंने पूछा, "बहन, किसकी पेटी में वोट डालोगी?"

वह बोली, "अपनी पेटी में।"

"यानी खजूर के पेड़ में!" मैंने कहा।

उसने धीमी हंसी में हंस दिया, बोली, "अपनी पेटी तो हंसिया छाप है।" मिन्ना तेजी से चली गयी। मैं सोचती रही कि वह भी कैसी है, पादरी के इसकूल में काम करती है और उसकी पेटी में वोट नहीं डालेगी। पादरी उसे जब चाहे नौकरी से निकाल सकता है। कैसी औरत है यह, नौकरी की भी इसे परवाह नहीं है। इतना भी नहीं जानती कि पादरी ने कुछ किया

नही रहेगा—कौन उसे वोट देता है, कौन नही देता।

दिन भर वोट पड़ते रहे। सारे दिन मैं न जाने कितने लोगो से मिली। सबकी पसन्द अलग-अलग थी। किसी ने झोंपड़ी को वोट डाले थे, किसी ने बैलो को वोट दिये थे, कोई हसिया छाप की बात करता था, तो कोई खजूर के पेड़ पर घमंड करता था। मुझे भरोसा था कि लोग चाहे जो बात करें, जीत खजूर के पेड़ की ही होगी। मैंने उसे ही वोट दिया था। हर औरत और मर्द ने उसे ही वोट दिया होगा। जो लोग दूसरी पेटी मे वोट दे आये है, उनकी संख्या निश्चय ही काफी कम होगी।

रात भर नीद नही आयी। मन भारी था। पादरी जीत जायगा, इसका मुझे दु.ख नही था, पर वह देवता हार जायगा, जिसे देखने लाखो लोग टूट पड़े थे, यह याद आते ही आखें छलछला आती थीं।

दूसरे दिन दोपहर को जोसेफ घर आया, तो उसका चेहरा उदास था। बिना कुछ कहे हथेलियों को कपाल पर रखे वह खटिया पर बैठ गया। मैंने उदासी का कारण पूछा तो बडी देर तक वह कुछ नही बोला। मुझे डर था, कही उसकी नौकरी तो नही जाती रही। मैंने उसके सिर पर हाथ फेरा। बोली, "क्या हुआ, कुछ कहो भी ?"

"पादरी हार गया···" धीरे से उसने कहा।

"पादरी हार गया !" अनजाने ही मेरे मुंह से निकल गया, "तो जीता कौन ?" मैंने पूछा। वह बोला, "वही पटेल, कलमुंहा कहीं का !"

पटेल जीत गया, बैल जोडी छाप की जीत हो गयी, जवाहिरलाल जीत गये—मैं बेहद खुश हुई। पर अपनी खुशी को छिपाकर मैंने कहा, "तब तो बड़ा बुरा हुआ।"

"हां, गाज गिर गयी।" जोसेफ बैठा-बैठा अपने आप सिसकने लगा, जैसे उसी की हार हुई है। मैं चुपचाप बाहर निकलकर आ गयी। चाहती थी कि ग्रेसरी से यह शुभ संवाद सुना दूं और अपने मन का गुबार निकाल दूं।

बाहर एक भारी जुलूस निकल रहा था।

"जवाहिरलाल की जै !"

"महात्मा गांधी की जै !"

"कागरेस राज की जै !"
"गाव के भागबिधाता पटेल की जै !"
"बैल जोडी अमर हो !"

चुनाव मे पादरी दाव हार गया था। इस हार ने उसे एकदम बदल दिया था। उसके मुख पर न पहले की तरह कभी हंसी आती थी और न शरीर मे वह चुस्ती रह गयी थी। कभी उसका लाल चेहरा ऐसा चमकता था जैसे खून की बूद चूना चाहती है। टेसू के फूलों जैसी उसमे लाली थी और वड़ के पके फल की तरह उसमें आकर्षण था। उसके अग-अंग मे बिजली जैसी गति थी। चलता था तो जमीन हिलती थी, बात करता था, तो उसके हाथ-पैर कांपते थे। चरच, इसकूल, असपताल और अन्य संस्थाओं का काम वह चुटकी बजाते करता था। मजाल है कही कोई ढील रह जाय ! इता बोझ उसके सिर था, पर उसकी आखें सब तरफ रहती थी। उसकी मरजी के बिना यदि कही कोई पत्ता हिलता तो वह डाल ही काटकर फेंक देता था। पर अब सब बदल गया था। जासौन जैसा उसका चेहरा जैसे सूरज की गरमी से एकदम झुलस गया था। चलता तो जाने क्या सोचता रहता था—कोई डग चींटी जैसा रखता तो किसी डग को बगुले की तरह ऐसा फैलाता मानो पूरी दूरी एकदम समेट लेना चाहता है। उसका चेहरा लोगों ने उस दिन से ऊपर उठा कम देखा।

वह असपताल जाता है, पर काम में उसे रुचि नहीं रही। डाक्टर है इसलिए मरीजों को देखता है, उनके अच्छे होने की उसे चिन्ता नहीं है। चिंता होती तो इसकूल की एक पुरानी 'मेटरन' असपताल में क्यों दम तोड़ती? उसे हलका-सा बुखार था, वह बढ़कर 'निमोनिया' में बदल गया, पर डाक्टर के कान पर जू तक नहीं रेंगी। और पहले वह हवा में उड़ता जाता था और जब तक मरीज उठकर खड़ा न हो जाय, वह दम नहीं लेता था। आज पहली बार डाक्टर की लापरवाही से एक मरीज मर गया, वह भी इसकूल की सबसे भरोसेदार सिस्टर। दस सालों से वह यहां काम कर रही थी और इसकूल की तरक्की में उसने अपनी जान लगा दी थी। वह मर गई, पर पादरी ने आह तक न भरी। बोला—"मरना-जीना तो लगा है।

अच्छा हुआ मर गई, दफन कर दो।" सब चक्कर में थे। इसकूल की प्रिन्सपल खुद घबराई थी—उसके शव पर पादरी ने एक माला भी नहीं चढाई।

उसे दफना दिया गया। कहते है, उसके बाद प्रिन्सपल पादरी से मिलने गयी, तो पादरी की आखो मे आंसू थे। आदमी की आंखों में आंसू—वह भी ऐसे आदमी की आंखों में, जिसकी मुट्ठी मजबूत हो। जो पत्थर की तरह दृढ़ था, मेघ की तरह गरजता था, बिजली की तरह चमकता था।···पादरी के मन्सूबे चकनाचूर हो गये थे। उसने कहा था—"चुनाव मे हार गया। अब तक जिंदा हू, क्या यही कम है। हार्ट फेल हो जाता था।" प्रिन्सपल चुपचाप उसकी तरफ देख रही थी। उससे क्या कहे, उसे क्या समझाये। चुनाव तो घोड़े की दौड़ है—हार-जीत उसमे लगी है। पर इससे क्या ? पादरी के लिए इस दौड़ मे पीछे रहना कठिन गुजरा। उसे अपनी हार से बड़ी चिन्ता पटेल की जीत की थी। उसके सामने उस दिन का दृश्य झूल गया, जब जिले का सबसे बड़ा अफसर वहां आया था और रेचल ने उसे 'सोध' लिया था। रेचल ईसाई थी। उसका भडाफोड़ पटेल ने ही किया था। वह अफसर भी पटेल के घर ही ठहरा था। आज भी वह अफसर मौजूद है और पटेल भी कभी सीधी आंख उठाकर पादरी की ओर नहीं देखता। लोगों से अकसर कहता रहता है कि इन मिशनरियो की जड़ यहां से खोदकर फेंकना है।

किसी ने पादरी से यह भी बता दिया था कि पटेल इसी गांव मे आर्यसमाज का एक आश्रम खोलने वाला है। उसने कुछ आर्यसमाजियों को भी बुलाया है। वे सारे गांव मे घूमते रहते हैं। यदि यहां आश्रम बन गया तो··· पादरी की चिंता का अंत नहीं है। उसका काम सेवा करना है, ईशू की सेवा। ईशू ने उसे आदेश दिया है कि 'दुनिया के भूले-भटके लोगों को राह लगाओ'। जो ईसाई धर्म नही मानते, भूले हुए हैं। उन्हें मनाने के लि सेवा जरूरी है। वह चाहे तन से हो, चाहे मन से या धन से। पादरी इनमे से किसी की कमी नहीं, पर आज जैसे सब कुछ रहते उस नही था। पटेल भारत सरकार का प्रतिनिधि है।

सुना है, आजकल पादरी पूरा खाना भी नही खाता। ७ बताया था कि साहब की खुराक आधी हो गई है। खाते

आप जाने क्या बड़बड़ाते रहते है। एक दिन कह रहे थे, यहां से तबादला करवा लूंगा। तबादला न हुआ, तो नौकरी छोड़कर लन्दन चला जाऊंगा।

वह जोसेफ पर तो पहले से ही बिगड़ा था, आजकल उसे देखते ही बरस पड़ता है, जैसे वह फूटी आंखों भी नहीं सुहाता। एक दिन वह घंटे भर लेट पहुंचा तो पादरी ने सारी आग उसी पर उगल दी। घंटे भर तो उसे डांटता रहा, फिर उसने रूबी को बुलवाया, दोनों को उसने चाय पिलायी। बड़ी प्यारी-प्यारी बातें उसने की। लम्बा लेक्चर दिया और लेक्चर खतम होते ही, एक-एक कागज उसने दोनों को थमा दिया। दोनों पढ़कर सफेद पड़ गये। जोसेफ को चरच की चौकीदारी से और रूबी को इसकूल की किलरकी से निकाल दिया गया था। जोसेफ ने दौड़कर पादरी के पांव पकड़ लिये, वह खूब गिड़गिड़ाया, उसने बड़ी चिरौरी की और बताया कि अब वह रूबी को बहिन मानता है, पर पादरी ने कुछ नहीं सुना। वह बोला, "टुम काला आडमी बहोत बडमाश। अपना औरत का सामने इस छोकरी को पकरता।" रूबी चुप थी। उसने पादरी से कुछ नहीं कहा। वह कुर्सी में बैठे-बैठे रोने लगी। उसके आंसुओं को देखकर पादरी ने यह हमदर्दी दिखायी कि खुद रूबी का हाथ पकड़कर अपने बंगले के बाहर तक उसे पहुंचा दिया। जोसेफ भी चुपचाप उठकर चला आया। मुझे पता लगा कि बाहर आकर जोसेफ और रूबी एक-दूसरे से लिपटकर खूब रोये।

यहां ग्रेसरी के घर में धूम मची थी। आज उसका डाक्टर आया था उसे ब्याहने। शाम को पांच बजे ग्रेसरी का ब्याह है। तब वह दुलहिन बनेगी, उसका भी अपना घर होगा, अपने बच्चे होंगे। बच्चे की बात सोचते ही मुझे मुन्नी की याद आ गयी। मरियम ने कहा था—मुन्नी सुख है, जब चाहोगी उसे देख सकती हो। यहां से पांच मील दूर है। आज उसे देखने को जी हुआ। वैसे हमेशा की तरह आज भी उल्टे-सीधे विचारों ने दिमाग को घेरा था, पर मुन्नी से मिलने की साध उनसे आगे बढ़ गयी। चाहे वह मेरे पास न रहे, पर अपनी प्यारी बेटी को एक बार तो देख लूंगी, उसके गालों को चूम लूंगी—भले ही उसके चेहरे पर विलियम की छाया हो, पर है तो वह मेरी बेटी। पर यह समस्या इतनी सरल नहीं थी। मरियम अपनी लड़की के ब्याह में लगी है। ग्रेसरी तो डाक्टर की आंखों में रमी है, पल भर

उससे जुदा नही हो सकती। यह दिन ही कुछ ऐसा होता है। लड़की की ज़िंदगी में वह मील का पत्थर है। वहा से उसकी धारा बदलती है। उसकी गति को नया मोड़ मिलता है। ग्रेसरी आज सब कुछ भूली थी। अभी तक वह आज मुझसे भी मिलने नही आयी। तब मैं किससे कहूं कि वह मुझे मुन्नी को दिखाने को ले चले। जोसेफ से कह नही सकती थी। उसकी हालत और थी। उसकी रोजी-रोटी पादरी ने छीन ली थी। वह यहां-वहां पादरी के विरुद्ध तरह-तरह की बातें कर रहा था। किसी से कहता था—उसकी हत्या कर दूंगा। किसी से कहता था—एक दिन रात को आते-जाते ऐसी मरम्मत करूगा कि वह भी ज़िंदगी भर याद रखेगा। मैंने सुना है कि रूबी अब भी हस रही है। लोगों से कहती—मुझे नौकरी नही चाहिए, वह तो चाहे जहां मिल जायेगी। मैं सोच रही थी, रूबी का यह कहना गलत नही है। उसे काहे की फिकर? और फिकर हो भी क्यों? उसे जोसेफ जो मिल गया है।—दोनों बेकार हैं। सोचकर मेरी चिंता बढ गई। एक ओर मुन्नी को देखने की लालसा थी, तो दूसरी ओर रूबी पर नजर। कही वह जोसेफ को लेकर भाग गयी तो··· मेरा क्या होगा? और इन सब चिन्ताओ के बीच ग्रेसरी की शादी है। मेरी प्यारी सहेली की शादी। यह दुःख भी कम न था। शादी है, इसका दुःख नहीं, पर शादी के बाद वह भी गाव छोड़ देगी। ग्रेसरी के ही कारण दुःख के बड़े-बड़े बोझ मैंने हंसते-खेलते झेले है। जब मुझे जिन्दगी एक भयानक आधी रात की तरह लगी है और जब मुझे *मौत के सिवाय और कोई साथी नहीं* दिखा, तब ग्रेसरी ने मुझे सहारा दिया है। उसने अपने मीठे और प्यार भरे शब्दों मे मेरी चिंता को ऐसी डुबकी दी है कि मेरा पत्थर-सा भारी मन सेमल की कपास की तरह हलका होकर उड़ने लगा है। विलियम···जोसेफ··· और इन दोनों के बीच ग्रेसरी। दुनिया भी किस अजायबघर से कम है! कैसे-कैसे चेहरे यहां देखने को मिलते हैं!

मुन्नी को देखने की बात जितनी तेजी से मन में उतरी थी, उतनी ही तेजी से लुप्त हो गई। विलियम को देखना भी मुसीबत है। उसकी छाया जाकर मैं छुऊं और उसे अपने खून का अंग समझकर अपने तन से लगाऊं, कितना भयानक होगा यह! दांत वाली जहरीली नागिन को कोई गले लगाये और उससे बचने की आशा करे—नहीं, अब मैं कभी मुन्नी की सूरत नही

आप जाने क्या बड़बड़ाते रहते है। एक दिन कह रहे थे, यहां से तबादला करवा लूगा। तबादला न हुआ, तो नौकरी छोड़कर लन्दन चला जाऊंगा।

वह जोसेफ पर तो पहले से ही बिगड़ा था, आजकल उसे देखते ही बरस पड़ता है, जैसे वह फूटी आंखो भी नही सुहाता। एक दिन वह घंटे भर लेट पहुचा तो पादरी ने सारी आग उसी पर उगल दी। घंटे भर तो उसे डांटता रहा, फिर उसने रूबी को बुलवाया, दोनों को उसने चाय पिलायी। बड़ी प्यारी-प्यारी बातें उसने की। लम्बा लेक्चर दिया और लेक्चर खत्म होते ही, एक-एक कागज उसने दोनो को थमा दिया। दोनों पढकर सफेद पड़ गये। जोसेफ को चरच की चौकीदारी से और रूबी को इसकूल की किलरकी से निकाल दिया गया था। जोसेफ ने दौड़कर पादरी के पाव पकड़ लिये, वह खूब गिड़गिडाया, उसने बड़ी चिरौरी की और बताया कि अब वह रूबी को बहिन मानता है, पर पादरी ने कुछ नही सुना। वह बोला, "टुम काला आडमी बहोत बडमाश। अपना औरत का सामने इस छोकरी को पकरता।" रूबी चुप थी। उसने पादरी से कुछ नही कहा। वह कुर्सी मे बैठे-बैठे रोने लगी। उसके आसुओ को देखकर पादरी ने यह हमदर्दी दिखायी कि खुद रूबी का हाथ पकड़कर अपने बंगले के बाहर तक उसे पहुंचा दिया। जोसेफ भी चुपचाप उठकर चला आया। मुझे पता लगा कि बाहर आकर जोसेफ और रूबी एक-दूसरे से लिपटकर खूब रोये।

यहा ग्रेसरी के घर में धूम मची थी। आज उसका डागदर आया था उसे ब्याहने। शाम को पांच बजे ग्रेसरी का ब्याह है। तब वह दुलहिन बनेगी, उसका भी अपना घर होगा, अपने बच्चे होगे। बच्चे की बात सोचते ही मुझे मुन्नी की याद आ गयी। मरियम ने कहा था—मुन्नी खुश है, जब चाहोगी उसे देख सकती हो। यहां से पांच मील दूर है। आज उसे देखने को जी हुआ। वैसे हमेशा की तरह आज भी उल्टे-सीधे विचारों ने दिमाग को घेरा था, पर मुन्नी से मिलने की साध उनके आगे बढ गयी। चाहे वह मेरे पास न रहे, पर अपनी प्यारी बेटी को एक बार तो देख लूगी, उसके गालों को चूम लूगी—भले ही उसके चेहरे पर विलियम की छाया हो, पर है तो वह मेरी बेटी। पर यह समस्या इतनी सरल नहीं थी। मरियम अपनी लड़की के ब्याह मे लगी है। ग्रेसरी तो डागदर को आंखों में रखे है, पल भर

उससे जुदा नही हो सकती । यह दिन ही कुछ ऐसा होता है । लड़की की ज़िंदगी में वह मील का पत्थर है । वहा से उसकी धारा बदलती है । उसकी गति को नया मोड़ मिलता है । ग्रेसरी आज सब कुछ भूली थी । अभी तक वह आज मुझसे भी मिलने नही आयी । तब मैं किससे कहूं कि वह मुझे मुन्नी को दिखाने को ले चले । जोसेफ से कह नही सकती थी । उसकी हालत और थी । उसकी रोजी-रोटी पादरी ने छीन ली थी । वह यहा-वहां पादरी के विरुद्ध तरह-तरह की बातें कर रहा था । किसी से कहता था—उसकी हत्या कर दूंगा । किसी से कहता था—एक दिन रात को आते-जाते ऐसी मरम्मत करूंगा कि वह भी ज़िंदगी भर याद रखेगा । मैंने सुना है कि रूबी अब भी हस रही है। लोगों से कहती—मुझे नौकरी नही चाहिए, वह तो चाहे जहां मिल जायेगी । मैं सोच रही थी, रूबी का यह कहना गलत नही है । उसे काहे की फिकर ? और फिकर हो भी क्यों ? उसे जोसेफ जो मिल गया है ।—दोनो बेकार हैं । सोचकर मेरी चिंता बढ़ गई । एक ओर मुन्नी को देखने की लालसा थी, तो दूसरी ओर रूबी पर नजर। कहीं वह जोसेफ को लेकर भाग गयी तो··· मेरा क्या होगा ? और इन सब चिन्ताओं के बीच ग्रेसरी की शादी है। मेरी प्यारी सहेली की शादी । यह दु.ख भी कम न था । शादी है, इसका दुःख नही, पर शादी के बाद वह भी गांव छोड़ देगी । ग्रेसरी के ही कारण दु.ख के बड़े-बड़े बोझ मैंने हंसते-खेलते झेले है । जब मुझे जिन्दगी एक भयानक आधी रात की तरह लगी है और जब मुझे मौत के सिवाय और कोई साथी नहीं दिखा, तब ग्रेसरी ने मुझे सहारा दिया है। उसने अपने मीठे और प्यार भरे शब्दों मे मेरी चिंता को ऐसी डुबकी दी है कि मेरा पत्थर-सा भारी मन सेमल की कपास की तरह हल्का होकर उड़ने लगा है । विलियम···जोसेफ··· और इन दोनों के बीच ग्रेसरी । दुनिया भी किस अजायबघर से कम है ! कैसे-कैसे चेहरे यहां देखने को मिलते हैं !

मुन्नी को देखने की बात जितनी तेजी से मन मे उतरी थी, उतनी ही तेजी से लुप्त हो गई । विलियम को देखना भी मुसीबत है । उसकी छाया जाकर मैं छुऊं और उसे अपने खून का अंग समझकर अपने तन से लगाऊं, कितना भयानक होगा यह ! दांत वाली जहरीली नागिन को कोई गले लगाये और उससे बचने की आशा करे—नही, अब मैं कभी मुन्नी की सूरत नहीं

देखूंगी, उसे बिलकुल भूल जाऊंगी। वह मेरी कौन है ?

एक उचाट भरकर ग्रेसरी के घर पहुंची तो उसने मेरी कमर पकड़कर मुझे ऊपर उठा लिया और 'चाईं-माईं' करने लगी। बोली, "कितनी हल्की हो, भाभी !" मुश्किल से उससे पिण्ड छुड़ाया, तो मरियम ने बर्फी का एक टुकड़ा मेरे मुह में दे दिया, "बेटी, मुह मीठा कर, ऐसा दिन कब आता है।"

ग्रेसरी मेरा हाथ पकड़कर मुझे ऊपर ले गयी। वहा उसका डागधर बैठा था। मुझे देखकर उसने हाथ जोड़े। मैंने भी मुसकराकर जवाब दिया। राजी-खुशी की पूछताछ हुई। ग्रेसरी चुप नही थी। उसका अंग-अंग खुशी से निहाल था। मैंने कहा, "ग्रेसरी, शादी के बाद तो तुम मुझे भूल ही जाओगी।"

उसके बोलने के पहले ही डागधर ने जवाब दिया, "तुम्हे यह नही भूल सकती बेजो, इसने जितने पत्र लिखे हैं, सबमे तुम्हारी खूब चर्चा की है। मैं तो सोचता हू तुम्हारे बिना यह वहां कैसे रहेगी।"

"हां, भाभी, तुम भी मेरे साथ चलो। जोसेफ भइया को तुम्हारी क्या फिकर। फिर उसकी नौकरी भी वहा लगवा दूगी।" ग्रेसरी ने कहा। डागधर को शायद यह पता लग गया था कि जोसेफ नौकरी से निकाल दिया गया है। वह बोला, "हां, बेजो, उसे हम अपने अस्पताल मे नौकरी दिलवा देंगे।"

"बात करूंगी"—मैंने धीरे से कहा और चली आयी। आने लगी तो ग्रेसरी ने जोसेफ को और मुझे खाना खाने का निमंत्रण दे डाला। मैं कुछ जवाब देती कि वह मुझे अकेला छोड़कर डागधर के पास भाग गयी। जब मैं आने लगी तो मैंने भीतर खूब खिलखिलाकर हंसने की आवाज सुनी।

शाम को आकाश मे बादल छाये थे। धीरे-धीरे वे काले होते गए, इतने काले कि कब फूट पड़ें, पता नही। पटेल के घर से चंग की आवाज आ रही थी। कुछ लोग मिलकर गा रहे थे। गाने की धुन कुछ परिचित-सी लगी, तो मैंने उसकी ओर कान लगा दिये :

> घुमड़ि रहे चारि खूट कारे बादर,
> घुमड़ि रहे।

कौन पटि गरजे, कौन पटि घुमड़े,
कौन पटि बुदला चुहाय।
भीटा पटि घुमड़े, भट्ठा पटि गरजै,
खल्ले पटि बुदला चुहाय।
कौन पटि उबरे, कौन पटि बिगरे,
कौन पटि कोदों लहराय।
ओही पटि चलिबो, संगि अपन रहिबो,
जोन पटि चोला हरियाय।

गीत के बीच-बीच में चिर-परिचित 'हकार' के स्वर भी सुन पड़ते थे, उससे लगता कि यह खाली गीत नहीं, साथ में नाच भी हो रहा है। मैं परछी पर खड़ी कान लगाये थी। जब कभी अपने जाने-पहचाने सुर सुन पड़ते हैं तो मन मोर बन जाता है और मेरे पैर अपने आप थिरकने लगते हैं। यहां भी यही हुआ। 'ओही पटि चलिबो···जोन पटि चोला हरियाय'—मैं गुनगुनाने लगी और अपने आप नाचने भी लगी। इस ददरिया में मैंने अपने को एकदम भुला दिया। यह तार तब टूटा जब दो कुत्ते झगड़ते-झगड़ते मेरे पास आ गये। मैंने पत्थर का ढेला उठाकर फेंका और उन्हें भगाया। फिर अपनी परछी पर खड़ी हो गयी। गीत और नाच अभी भी चल रहा था। गीत की मिठास मैं ले रही थी। वैसे यह फागुन का महीना है, इस समय इस गीत का गाया जाना बेतुका-सा ही है। आसमान के बादल भूले-भटके राही हैं, आ गये हैं, पर बरसकर ही जायेंगे, क्या पता। तब यह गीत···ज़रूर पटेल की खुशी में वह डूबा है। गीत गाना है, वह चाहे जो हो, जहां का हो, जब का हो। आदमी की खुशी जब मन में नहीं समाती तब ऐसे ही बेतुके गीत उसके मुंह से निकलते हैं।

एक कार भरभराती हुई चरच के गेट के पास आकर रुक गयी। उससे मुसकराती हुई प्रेमरी उतरी। वह गुलाबी रंग की जरीदार चमकती फिराक पहने थी। सिर में महीन सफेद कपड़ा बांधे थी। उनका [illegible] गुलाबी चेहरा और काजल लगी आंखें बेहद चमक रही थीं। [illegible] किसी परी से कम न थी। उसने आकर मेरे हाथ पकड़ लिये।

खींचकर ले गयी। वह मेरी साड़ी उतारने लगी। मैंने अपनी कमर में हाथ रख लिया। बोली, "यह क्या पागलपन सवार हो गया, ग्रेसरी ?"

"कुछ नहीं, भाभी अभी ! चरच चलना है।" उसने गुलाबी रंग की एक साडी मुझे दी और बोली, "यह 'उनकी' ओर से। इसे ही पहनकर अभी हमारे साथ मोटर में चलो।"

मैंने आनाकानी की, पर मेरी कुछ न चली। लाचार होकर वह साड़ी पहननी पड़ी।

चरच खूब सजी हुई थी और साथ ही ठसाठस भरी थी। भीतर आकर मैं भी एक कोने में बैठ गयी। मैंने जब नजर घुमायी तो देखा कि बाजू में रूबी बैठी है। मैंने उस ओर से नजर फेर ली और सामने देखती रही। वह भी चुप थी।

पादरी ने चरच में प्रवेश किया। सब खड़े हो गये। सबने तीन बार 'आमीन' कहा और फिर बैठ गये। पादरी के चेहरे पर आज भी चमक नहीं थी, वह धूप में कुम्हलाए हुए गुलाब की तरह झुलसा था। उसमें उत्साह जैसी कोई झलक नहीं दिखी। उसे यह काम कराना है, इसी से करा रहा है।

सामने के दरवाजे से सबसे पहले दूल्हे ने प्रवेश किया। थोड़ी देर बाद वहीं से दुलहिन आयी। दोनों पादरी के सामने आकर खड़े हो गये। दोनों ने पादरी को सिर झुकाया। उसने हाथ उठाकर उन्हें आसीर्वाद दिया। फिर पादरी ने दोनों को उपदेस दिये। उपदेस सुनने के बाद उन दोनों ने ईशू को सिर झुकाया और एक-दूसरे के प्रति ईमानदार रहने की कसम खायी। मैंने भी कभी ऐसी ही कसम खायी थी। जोसेफ ने भी हंसते हुए कसम ली थी, पर आज·· वह कितना ईमानदार है! भूले हुए इस जीवन की एक हल्की-सी तसवीर सामने उतर आयी। हमारे जीवन में कितने खेल होते हैं। शादी-ब्याह भी क्या किसी खेल से कम है? बचपन में हम गुड़ियों का ब्याह रचाते थे। शादी भी तो यही गुड़ियों का ब्याह ही है। उससे ज्यादा यदि उसका कुछ महत्त्व होता तो···ईशू के सामने वफादार रहने की कसम···यह सब ढोंग है! आंख में धूल झोंकने का साधन है। हर साल जाने कितने जोड़े इस चरच में आते हैं और इसी तरह की कसम खाकर चले जाते हैं। चरच के बाहर उस कसम का फिर क्या मोल रह जाता है? समाज के ये जड़ बंधन

न जाने कब से चले आ रहे हैं, न जाने कब तक चले जायेंगे।

पादरी ने सबको सावधान किया। उन दोनों का परिचय दिया। मिस ग्रेसरी, मिसेज ग्रेसरी मार्टिन बन गयी।

सब लोग उठकर बाजू के कमरे मे चले गये। वहां केक और चाय का इंतजाम था। ग्रेसरी और डागधर ने एक-दूसरे की केक काटी और एक-दूसरे के मुंह मे दी। पादरी ने कोई मन्तर पढा और सबने केक खायी तथा चाय पी।

इसके बाद भेंट देने का तांता लगा। सबने जाकर कुछ न कुछ उपहार इन्हे दिये। मैं अपने साथ कुछ लायी नहीं थी, क्या देती, बड़ा खराब लगा। रूबी ने भी जब भेंट दी तो मेरा कलेजा फटने लगा। वह भेंट दे सकती है, पर मैं अपनी प्यारी सहेली को कुछ नहीं दे सकती। नजर चारों ओर दौडाई, पर जोसेफ कहीं नहीं दिखा। अन्त में गले मे जो हार मैं पहने थी, वही सकुचाते हुए ग्रेसरी के गले में डाल आयी। वह हार क्या था, जंगली लाल घुंघचियों की माला, बीच में दो-चार कौडियों की गुरियां थीं, अपने 'जंगली' जीवन की एकमात्र निशानी। ग्रेसरी ने यह माला बहुत पसन्द की। गले से निकालकर उसने वह सबको दिखायी, बोली, "सबसे सुन्दर उपहार।" उसकी आंखें बता रही थी कि वह उस उपहार से सचमुच खुश है।

शादी हो गयी। मरियम ग्रेसरी से लिपटकर फूट पड़ी। वह भी अब अकेली रहेगी। इत्ते दिनों तक मां-बेटी का साथ रहा, आज दोनों बिछुड़ रही हैं। दोनों के मन में कांटा चुभना सहज है। मेरा मन भी भर आया था। मेरा दर्द—दूसरा क्या जाने? ग्रेसरी मेरे लिए क्या थी, यह कोई नहीं समझ सकता। मैं भी उससे लिपटकर रो पड़ी। पर यह रोना-धोना ज्यादा देर नहीं चला। चल भी नहीं सकता। डागधर लगातार इस ओर देख रहा था। हमारे रोने-धोने की उसे क्या फिक्र हो सकती है। उसे तो [illegible] ग्रेसरी को लेकर यहां से जल्दी से जल्दी जाने की थी। ग्रेसरी दुल्हिन [illegible] उसी कार में जाने वाले [illegible] का हाथ थाम और गोद छोड़कर [illegible] जाते वह यहां आने के और [illegible] की नौकरी [illegible] पर इसका असर कुछ पड़ नहीं रहा। उसकी दुल्हन [illegible]

आंखें फाड़े मोटर की धूल को देखती रही—तब तक देखती रही जब तक सारी धूल जमकर नीचे नहीं बैठ गयी।

१२

पटेल ने आखिर आर्यसमाज की इसथापना कर ही दी। चरच के सामने लम्बा मैदान था। उसी के एक कोने मे पटेल के हाथों आर्य-समाज के मन्दिर की इसथापना हो गयी। उस दिन वहां एक भारी जलसा हुआ। पटेल की लड़की लाजो मेरे साथ इसकूल मे पढती थी, सो मुझे बुलाकर ले गयी थी। अकेले घर मे जी नहीं लगता था, सो चली गयी। वहा पहले लोगो ने बड़ी-बडी पोथी बांची। फिर पटेल ने एक पत्थर जमीन पर रखकर मन्दिर की नीव डाली। गेरुआ रग के कपड़े पहने एक स्वामीजी उनके साथ थे। उनका नाम आत्मानन्द था। उनके चेहरे पर बडा तेज था। उसे देखकर बड़ी शान्ति मिलती थी। उन्होने बडा लम्बा भाखन दिया। वह मेरी समझ में नहीं आया। थोड़ा-सा कुछ समझ पायी, बाद में वह भी भूल गयी।

पटेल का भाखन साफ था। उसने कहा था कि इस मन्दिर में सब धरम के लोग आ सकते है। हर जात का आदमी उसका सदस्य बन सकता है। पटेल ने एक लम्बी योजना पढ़कर सुनायी। उसने बताया कि यहां एक भारी इमारत बनेगी। उसमें हजारों रुपये खर्च होगे। इमारत मे एक दवाखाना होगा। उस दवाखाने में देशी दवाइया मिलेंगी। उसके लिए दूर से कोई नामी बैद्य बुलाया जायगा। इस मन्दिर मे इसकूल भी लगेगा। इसकूल मे तीन साल से बच्चों को भरती किया जायगा। लोगों को पढने के लिए किताबें और अखबार मन्दिर में मिलेंगे। रोज रात को गांव के आदमी मन्दिर मे जमा होगे, वहा देश-विदेश की चर्चा करेंगे। कभी-कभी नाच-गाने भी होगें। पटेल ने बताया कि वह सरकार से कहकर मन्दिर को कुछ सहायता भी दिलवा देगा। उन रुपयों से गरीब किसानों को कर्ज दिया जायगा। यह कर्जा धीरे-धीरे वसूल होगा।

पटेल ने और बहुत-सी बातें कहीं। सुनकर मैं खुश हुई। इस समय

ग्रेसरी का अभाव मुझे खटका। सोच रही थी कि यदि वह होती तो पटेल की महानता बताती। उसे कांगरेस राज का परताप दिखाती।

घर आयी तो जोसेफ लाल बैठा था। मुझ पर एकदम बरस पड़ा। जाने क्या-क्या बकने लगा। मैंने कहा, "जलसा देखने गयी थी अब तो पादरी की तरफ छोड, उसका नमक तो नही खाता..."

झल्लाते हुए वह बोला, "पादरी कल सबेरे पहाड़ चला जायगा।"

"पहाड चला जायेगा!" मैंने आश्चर्य से पूछा, "क्या समाधि लगाने वाला है?" जोसेफ ने अपने दांत दोनों ओठों के बीच दबा लिये। बोला, "गंवार कहीं की, गरमी आ गयी है, पहाडी जगह नही जायगा, तो क्या यहां तपेगा?" गरमी मे आदमी पहाडी जगह चले जाते हैं, यह मुझे आज मालूम हुआ। हम तो चिलचिलाती दुपहरिया मे भी काम करते रहे हैं। सारा गांव काम करता है। काम की धुन इतनी रहती है कि आग भी बरसे, तो पता नहीं लगता। प्रेमी किसी झिरिया के किनारे करौंदा की छांव मे खड़ा भी पुकारे :

सीचेला झैं जावे दिन तो दुपहरिया
उएले उतर जा जहांमुन जा झिरिया।

तो हमें परवाह नहीं रहती। उसकी मीठी पुकार और तीखी तान का भी काम के सामने कोई मोल नहीं है। वह बार-बार 'लहकी' के सुर दुहराता है, पवन वनपटी में थप्पड़ मार-मारकर प्रेमी की वकालत करता है, पर...और पादरी घर से कम निकलता है, फिर भी पहाड़ जाने की बात ...जमाना ही बडों का है। उसका है, जिनके पास पैसा है। एक आदमी के पैर मे जरिया का कांटा गडता है, तो डागधरों की मुसीबत हो जाती है; दूसरा दम तोडता है, तो भी किसी के मुंह से आह तक नही निकलती। कहां हम और कहां पादरी, जमीन-आसमान का अन्तर है। तब पादरी का पहाड जाना ठीक है।

जोसेफ से यह सुनकर कि पादरी ने तुरत घर खाली करने का हुकुम दिया है, मैं घबरा गयी। इसी समय पटेल की याद आ गयी। मन्दिर की इसथापना की बात मैंने जोसेफ से कही। मैंने यह भी कहा कि वह जात-पांत का भेद नहीं रखता और अपने यहां एकाध खोली हमे रहने को दे

देगा। उसकी लड़की लाजो से कहकर काम भी करा लूंगी, पर जोसेफ तैयार नही हुआ। बोला कि पटेल मुझ पर बुरी नियत रखता होगा। यदि वह खोली देगा, तो मुझ पर जरूर डोरे डालेगा।

सुना, तो मैं हंसकर रह गयी। वह मुझे अपनी बेटी मानता है, पर शक की दवा ही क्या है ? मैंने इस बात पर फिर जोर देना ठीक नही समझा। मरियम से बात की, तो उसने पादरी से कहकर कुछ दिन की मुहलत दिलाने का वचन दिया।

मिस्पा से भी मैंने इस मुसीबत की चर्चा की थी। सुनकर वह बड़ी खुश हुई थी। कहती थी—अच्छा हुआ जोसेफ की नौकरी छूट गयी। चपरासी था—और तुम चपरासी की औरत कहाती थी। उसने कहा कि हम लोग उसके ही घर आकर रह सकते है। उसके यहां कई कमरे है, एक हमे भी दे देगी। पर मैंने उसके पास रहना ठीक नही समझा। उसका क्या ठिकाना, कब क्या कर जाय और क्या कह बैठे। जोसेफ का कहना था कि हम लोग चलकर रूबी के घर रह लें। उसके यहां भी खूब जगह है। मैंने बलपूर्वक इसका विरोध किया। सांप की बाबी में चलकर हम डेरा डाल दें। जोसेफ ने अपनी अड न छोडी, बोला, "दो-तीन दिन में हम वही चलेंगे।"

मैंने विवाद करना ठीक नही समझा। जब चलने का समय आयगा, निबट लूंगी। मैंने रहने का सवाल छोडकर रोजी-रोटी की बात निकाली। आखिर बेकार कब तक रहेंगे। कुछ न कुछ तो करना ही होगा। वैसे पटेल चाहे तो नौकरी दिलवा सकता है, पर जोसेफ का मन जब समझ मे आये। वह क्या चाहता है, क्या नही, मैं नही समझ पायी। आखिर सारी बातें मैंने उसी पर छोड़ दीं। यदि वह रूबी के घर रहने को तैयार है और इसी में उसकी खुशी है, तो मुझे वह भी मंजूर है।

दूसरे दिन पादरी तामिया चला गया। यहा के काम की जिम्मेदारी वह इसकूल की प्रिन्सपल पर छोड गया। आशा की हलकी-सी किरन मुझे दिखी। प्रिन्सपल से कहकर कुछ दिनों की मुहलत तो मैं ले सकती हूं। शाम को जोसेफ घर लौटा, तो बेहद उदास था। इत्ती उदासी मैंने नौकरी छूटने के दिन भी नही देखी। उसका सारा चेहरा एकदम पीला-सा पड़ गया था। मेरे बिना पूछे ही उसने बताया कि रूबी गाव छोड़कर भाग गयी

है। कहने लगा, "धोखा दे गयी, मुझे भरोसा नहीं था कि वह मेरे साथ ही दगा करेगी। कल शाम को घुल-घुलकर बातें कर रही थी। इतने दिन चरच में नौकरी करने के बाद जो पैसे कल पादरी ने दिये थे, वह मुझसे हड़प कर गयी। कहती थी कि दो-एक दिन में दे दूंगी, आज गायब हो गयी।" आज न जाने क्यों जोसेफ अपने आप सब कुछ बता रहा था। बोला, "धता बता गयी। शहर का कोई बाबू रात को उसके यहां आया था, उसी के साथ चली गयी। जाते वक्त मिली भी नहीं। रेचल से कह गयी है कि कभी यहां लौटकर नहीं आयगी। उसकी मां से पूछा तो उसने यह सब कुछ बताया ही नहीं। खुशी-खुशी कह रही थी, 'मेरी बेटी बड़ी होशियार है, खासे रईस को फंसाया है, जिन्दगी चैन से कट जायगी।"

जोसेफ की बातें सुनकर मेरा मन खुश हो रहा था। पैसे चले गये इसका भी दुःख नहीं था। अब जोसेफ गुमराह नहीं होगा, यह खुशी क्या कम थी। राह का कांटा इतनी सरलता से निकल गया, और मुझे चाहिए क्या था? पैसे—समझ लूंगी मेरे जोसेफ की निछावर ले गयी।

जोसेफ का दिमाग वैसे ही फिरा था, अब वह पागल जैसा हो गया। कभी रूबी का नाम लेकर चिल्लाता तो कभी कल्दारों की गिनती लगाता। एक कल्दार के लिए एक पत्थर फेंकता और खुशी से नाचने लगता था। "पूरे सौ दे गया था पादरी"—गिनते-गिनते रोने लगता और रूबी के साथ की ज़िन्दगी में जो कुछ बीता है, उसकी चर्चा अपने आप करने लगता था।

भरोसे का फल यही होता है। मैं जानती थी कि रूबी एक दिन जोसेफ को डुबाकर छोड़ेगी। किसी पर अधिक भरोसा करना और किसी से अधिक आशा रखना असमय मौत बुलाना है। यदि आदमी को कच्ची नींद में एकाएक उठा दिया जाय, तो भारी खतरा सामने आ सकता है—या तो वह खुद जान दे देगा या किसी की जान ले लेगा। जोसेफ को रूबी कच्ची नींद में उठाकर चली गयी थी। उसका विश्वास छला गया था, उसकी आशा को झकझोरकर जैसे किसी ने उसका गला घोंट दिया था।

मैंने मरियम से सब बताया। उसने आकर जोसेफ को समझाया—पछताने में क्या धरा है। रुपया-पैसा तो आदमी के हाथ का मैल है। उसके लिए इत्ता रोना-धोना ठीक नहीं। मरियम ने पादरी की तारीफ भी की।

उसने कहा, "आदमी सोना है, कभी किसी का नुकसान नहीं करता।" उसने सलाह दी कि यदि जोसेफ और मैं—दोनों उससे जाकर पहाड़ पर मिलें, तो काम चल जायगा, वह फिर नौकरी में रख लेगा। अब रूबी भी हमेशा के लिए चली गयी है, खतरा नही रहा। उसने बताया कि थोड़े दिनों बाद शायद ग्रेसरी भी तामिया पहुंचेगी। डागघर ने यहा कहा था कि वह हर साल गरमी मे तामिया के असपताल में चला जाता है। बड़े-बड़े अफसर वहा आकर रहते है। उनका इलाज उसे करना पडता है। तीन-चार माह वही रहता है। ग्रेसरी मेरी काफी मदद कर सकती थी। उसका पति सरकारी डागधर है, उसकी बातों का पादरी पर जरूर असर होगा, और नहीं तो वह खुद नौकरी तो दे ही सकता है।

मैंने जोसेफ से तामिया चलने की बात कही, पर वह तैयार नही हुआ। वह दिनभर बेकार यहां-वहा फिरता रहता था। लोगो ने बताया कि वह सारा दिन नरवा के किनारे बिताता है, वहां बैठा-बैठा कभी विरह का गीत गाता, तो कभी अपने आप ऊटपटांग बातें करता है। मुझे डर था कही वह पागल न हो जाय।

एक दिन मिस्पा मे मैंने उसके बारे मे चर्चा की। मिस्पा के विचार सुने, तो मेरा खून सूख गया। बोली, "अच्छा करता है। अब हमारा ठीक साथी बनेगा। हम उससे दोस्ती करेगा, बेंजो। खून छनेगी जब दो दीवाने मिल जायेंगे।" मिस्पा उससे दोस्ती करेगी—ओफ, मैंने भी कितनी गलत जगह बात निकाली। मैं आदमी की कमजोरी समझ गयी थी, वह पैदाइशी नशेबाज होता है। उसे सपेरे की पिटारी की तरह हमेशा बन्द रखना चाहिए। यदि वह कभी पिटारी से बाहर निकाला जाय, तो उसे बीन पर उलझाये रखना चाहिए। उसे एकदम खुला रखना खतरनाक है। मेरी इसी गलती का फायदा रूबी ने उठाया था। वह शायद इस भेद को जानती थी, तभी तो जोसेफ उस पर बुरी तरह पागल था। आज भी उसका नाम लेकर वह रोता है।—मिस्पा ने भी कभी रूबी की तरह जोसेफ को जाल मे फंसाया तो···नही, अब मैं ऐसा नही करने दूंगी। दूध का जला छाछ को भी फूंक-फूंककर पीता है। रूबी मुझे एक बडा सबक दे गयी है। अब कभी कोई लड़की रूबी नहीं बन सकती। मिस्पा से बिना कुछ कहे मैं घर चली

आयी। आते समय उसने भी कुछ नहीं पूछा।

अब मैंने कमर कस ली कि जोसेफ को अपना बनाकर रहूंगी। मैं उससे मीठी-मीठी बातें करती थी। वह नाराज होता तो मैं हंसकर उसके गले मे हाथ डाल देती थी। कभी-कभी वह मुझे मार भी देता था। उस मार को भी मैंने परवाह नही की। उसकी हथेलियां पकड़कर मैं सहलाने लगती और उन पर तेल चुपड़ देती थी। किसी भी तरह मैं जोसेफ के मन पर कब्जा जमाना चाहती थी। सब कुछ भूलकर वह मुझे अपना ले, यही मैं चाहती थी। मैं उसकी रूबी बन जाऊं, रूबी की तरह वह मुझे भी आंखों में बसा ले, बस। इसीलिए भला-बुरा मैं सब सहती रही। उसे घर के बाहर मैं नहीं जाने देती थी। जबरन जाता तो उसका पीछा करती। कहती—अकेली घर मे क्या करूंगी? तुम्हारे बिना मेरा कौन है? जहां तुम तहां मैं।

उसके साथ जाने लगती तो वह झल्लाकर लौट आता था। एक दिन मैंने फिर चर्चा निकाली। मैंने कहा, "मरियम ठीक कहती थी। हम लोगों को चलकर पादरी के पैर पकड़ने चाहिए।" मैंने जोर दिया और कहा कि अब हम लोगो के पास दूसरा चारा नहीं है। एक बार ईसाई बन गये, तो अपने धरम मे वापस जाने से रहे। गाव जायेंगे तो सब हंसी उड़ायेंगे, सब हमे तिरछी नजरो से देखेगे, इसलिए भला-बुरा सब यही सहना पड़ेगा। बहुत समझाने-बुझाने के बाद आखिर वह तामिया जाने को तैयार हो गया। मरियम ने भी हमे रुपयो से मदद दी, आड़े वखत उसकी यह मदद हमारे लिए वरदान थी।

चलते समय इसकूल से मैंने अपना सर्टिफिकेट भी ले लिया, क्या जाने इस गाव मे दुबारा आने को मिलता है या नही। कही पादरी न माना तो वहीं नौकरी तलाश करनी होगी।

जाने के पहले मिस्पा और लाजो से मिलने गयी। दोनों ने बड़ा दु:ख प्रकट किया। लाजो ने मुझे खूब रोका, बोली, "दद्दा से कहकर यहीं नौकरी लगवा देती हूं।" मैंने उसे धन्यवाद दिया और अपनी लाचारी बतायी। मिस्पा तो रोने ही लगी। कहती थी, "तुम जैसा होशियार लड़की अब कहां मिलेगा। इतनी जल्दी कितना सीख गयी।"

मेरा सारा समय यहां मुसीबत उठाते बीता है, सीखने का नाम कहां।

पर हां, इन मुसीबतों ने मुझे जो पाठ पढाये थे, वे और किसी पढाई से बड़े थे। वैसे अब मैं धीरे-धीरे अंगरेजी पढ़ लेती थी। दूसरे जब अंगरेजी बोलते तो कुछ-कुछ समझ भी लेती थी। ग्रेसरी ने मुझे ठिकाने मे कपड़े पहनना भी सिखा दिया था। कुछ और बातें देख-देखकर सीख गयी थी। अब जब किसी से मिलती, तो पहले की तरह झिझक नही होती थी। इस बीच तरह-तरह के लोग मैंने देखे थे इसलिए दुनिया के उजेले के नीचे का अंधेरा भी मैं पहचानने लगी थी।

मुर्गे ने बांग दी। हम लोग उठ गये। एक पेटी मे थोड़ा सामान रखा। बाकी मरियम के घर छोड दिया और ईशू को सिर झुकाकर हम तामिया की ओर चल पड़े। मरियम का आशीर्वाद मेरे साथ था, ईशू चाहेगा तो फिर लौटकर आयेंगे। गेंवड़े के बाहर निकलते-निकलते सामने से सूरज की सुनहली किरणों ने हमारे रास्ते मे सोना बरसा दिया। हंस पक्षी के जोड़े की तरह हम दोनों जैसे किसी का सन्देशा लिये खुशी-खुशी आगे बढ़ गये।

ढाई कोस पैदल चलने के बाद हमे मोटर मिल गयी और पाच घंटे में उसने तामिया पहुंचा दिया। मोटर की यात्रा बडी दुःखभरी थी। एक के ऊपर एक आदमी लदे थे। उसमे बैठने वाला कोई सुखी नही था। पाच घंटे बड़ी मुश्किल से कटे। जब तामिया मे मोटर से उतरी, तो लगा जैसे बैतरनी पार उतर गयी।

तामिया मे हम लोग एक मित्र के घर ठहर गये। वह एक होटल के कम्पाउण्ड मे रहता था और जोसेफ का पुराना साथी था। होटल का नाम था 'ट्रेवलर्स होम' और जोसेफ के मित्र का नाम था मिस्टर शालुक। मिस्टर उसके नाम का ही एक अग था क्योकि हर कोई उसे मिस्टर शालुक कहकर ही पुकारता था। कभी किसी के मुंह से मैंने अकेला शालुक शब्द नही सुना। मिस्टर शालुक 'ट्रेवलर्स होम' मे चौकीदार था। उससे हमें पता लग गया कि पादरी इसी होटल में आकर ठहरा है।

तामिया पहाड़ी जगह थी। चारो ओर हरे-भरे और घने जंगल तथा झाडिया थी। छोटे-छोटे दूधिया नाले पत्थर की बडी-बड़ी चट्टानों की गोद से खरगोश के बच्चों की तरह उचककर आगे भाग जाते थे। ऐसा लगता था जैसे उन्हें पकडने के लिए कोई उनके पीछे लगा है। चारों ओर हरियाली

और चारों ओर नमी थी। कई जगह रंग-बिरंगे फूलों से नालों के किनारे सजे थे, वे उनका स्वागत कर रहे थे और नाले बड़ी-बड़ी झाड़ियां चीरकर किसी सुहागिन की मांग की तरह अपना रास्ता बनाते जा रहे थे।

हमारे गांव जैसी यहां गर्मी नहीं थी। दिनभर ठंडा पवन धीरे-धीरे बहता रहता था, गर्मी का कहीं नाम नहीं।

मिस्टर शालुक का घर एक नाले के किनारे ही था। उसके घर में उसकी स्त्री थी और दो छोटे बच्चे। स्त्री अधेड़ उमर की थी और प्रायः दिनभर चिड़चिड़ाया करती थी। बच्चों को वह खूब मारती-पीटती और बात-बात में उन्हें गालियां देती थी। बच्चे भी इतने ढीठ थे कि उन पर मार का कोई असर नहीं होता था। वे बराबर दिनभर शैतानी करते रहते। मुझसे मिसेज शालुक का व्यवहार बुरा नहीं था। बोलने में अक्खड़पना जरूर था, पर इतनी ही अकड़ से वह अपने पति से भी बोलती थी। इसलिए उसमें मुझे कहीं बुराई नहीं दिखी।

मिसेज शालुक ने बताया कि गर्मी में यहां बहार आ जाती है, यह चमन गुलजार हो जाता है। तरह-तरह के लोग आते हैं और इस गांव को जैसे सोते से जगा देते हैं। उसने बताया कि पहले यहां सरकार भी आया करती थी, पर दो सालों से आना बन्द हो गया है। पर सरकार का बड़ा अफसर अपने दल-बल सहित अब भी यहां आता है। आसपास के बड़े-बड़े लोग यहां आना नहीं छोड़ते। इसलिए गर्मी में यहां हर चीज के भाव कई गुने बढ़ जाते हैं। यहां के व्यापारियों का सारा धन्धा इसी सीजन में होता है। आठ महीने तो यहां उल्लू बोला करते हैं। चार महीने में ही व्यापारी इतना कमा लेते हैं कि सालभर बैठे-बैठे खा सकें।

'ट्रैवलर्स होम' का मालिक बम्बई का रहने वाला था। बम्बई में उसका बहुत बड़ा और आलीशान होटल है। गर्मी में वह यहां चला आता है, पर इससे बम्बई का होटल बन्द नहीं होता। नौकर-चाकर सारा कारोबार चलाते हैं। होटल की इमारत बहुत बड़ी थी। मुझे पता लगा कि यह उसी की इमारत है। चार महीने में ही वह लाख-दो लाख का व्यापार कर लेता है। सारे बड़े-बड़े लोग यहीं आकर ठहरते हैं। तामिया में दो-चार होटल और हैं, पर इस 'होम' के सामने उनकी कोई गिनती नहीं। होटल अंगरेजी

फैशन का है और 'होम' जैसा ही सब तरह का आराम यहां ठहरने वालों को मिलता है। उनसे दस रुपया दिन से लेकर सौ रुपया दिन तक किराया लिया जाता है। इतना किराया सुनकर ही मैं दंग रह गयी थी। एक दिन के लिए लोग इत्ता पैसा कैसे दे देते है। इस होटल के मालिक का नाम था कपूर।

एक दिन कपूर से मेरा परिचय हुआ। उसकी शक्ल देखकर ही मैं डर गयी। सांवले रंग का गोल चेहरा, तिरछी मूछें और कंजी किन्तु बड़ी-बड़ी आंखें; एकाएक देखकर कोई भी डर सकता था। उसका शरीर भी भारी था। ऊपर से देखकर ही लगता था कि वह बडा सख्त आदमी होगा। बाद में मुझे पता लगा कि मेरा अनुमान ठीक निकला। वह हमेशा टिप-टाप रहता था और ज़रा-सी बात पर नौकरो को डाटता ही नही, मार भी देता था। वह हमेशा अपने हाथ मे काले रंग का एक चाबुक रखा करता था।

उसके होटल मे पुरुषो के सिवाय औरतें भी काम करती थी। ये सब लडकियां बम्बई की थी और प्रायः सभी की उम्र बीस-पच्चीस के आसपास ही रही होगी। कपूर ने शादी नहीं की और न उसका शादी करने का विचार है। वह अपने यहा काम करने वाली लडकियों को ही अपनी औरत समझता है। मिस्टर शालुक ने उस दिन एकाएक कपूर से मेरा परिचय करा दिया। कपूर शायद इस समय जल्दी मे था, हंसकर उसने हाथ जोड़े और चाबुक हिलाता बोला, "यही ठहरी हो न, फिर मिलेंगे। माफ करना।"

एक दिन इस होटल की दो लडकियों से मेरी पहचान हुई—एक का नाम था मिस संध्या और दूसरी का मिस रजनी। कहते हैं ये नाम कपूर ने रखवाये थे। उनका असल नाम कुछ और ही था, मैंने वह पूछा भी नहीं। ये दोनों लडकिया फिराक और ऊंची एड़ी के जूते पहना करती थी। पता लगा कि मिस रजनी का गला बड़ा मीठा है और वह अच्छा नाचती भी है। मिस संध्या नाचना नही जानती थी, गाना भी उसे उतना अच्छा नही आता था, पर बातों में बड़ी तेज थी। कैंची की तरह उसकी जबान चला करती थी। वह सिगरिट भी पीती थी और बातें करते समय अजीब ढंग से अपनी आंखें मटकाती थी। किसी लड़की को सिगरिट पीते मैंने पहली बार देखा था। मैंने उससे कहा, "सिगरिट तो मर्दों की चीज है, तुम क्यों पीती हो?"

उसने अपनी भवें चढ़ाकर कहा, "मजा आता है, मिस्टर कपूर की यह देन है।"

इतना कहकर उसने ज़ोर से कश खींचा और आकाश की ओर मुंह करके धुआं छोड़ा।

मिस रजनी और संध्या—दोनों बम्बई में रहती हैं और पांच-छह बरस से होटल में काम कर रही हैं। कहते हैं कि पहले ये किसी गांव में रहती थीं, बाद में यहां आयीं। कैसे आयीं और कौन लाया, इसका पता मुझे नहीं चल सका। उनसे इस सम्बन्ध में एकाध बार पूछा भी, पर दोनों ने हमेशा बात टाल दी। होटल में लड़कियों के लिए काम करना मेरे लिए नयी बात थी। मैंने मिस रजनी से पूछा कि यहां क्या काम करती हो?

उसने कहा, "काम की दुनिया में क्या कमी है? यहां हम बहोत काम करता है।" इस उत्तर से मुझे सन्तोष नहीं था। मैंने इस बारे में जब ज्यादा खोज-बीन की, तो सब मालूम हो गया। सुनकर आत्मा तड़प उठी। उन लड़कियों की बेशरमी पर मुझे तरस आया।

जोसेफ ने जाकर पादरी से बातचीत की, पर कुछ काम न निकला। उसने आकर बताया कि पादरी ने लात मारकर भगा दिया। कहता था—अब कभी मुंह मत दिखाना। उसने किसी और को नौकरी में रख लिया है। मिस्टर शालुक से सलाह कर एक दिन मैं भी पादरी के पास गयी। मैंने बड़ी अजीजी की। जोसेफ की तरफ से माफी मांगी। मैंने यहां तक कहा कि वह रूबी को सचमुच बहिन मानता रहा है, पर पादरी कमल का पत्ता बना रहा। उसने कहा, "वह रूबी को बहिन मानता है, तू भी इसी तरह किसी को भाई मानती होगी। हम समझता है। वह एकदम जंगली है। बात करने का उसे तमीज नहीं…" जोसेफ को उसने जो कहा वह उतना बुरा मुझे नहीं लगा, पर अपने चरित्र पर लांछन सुनकर आग लग गयी। मन हुआ कि जो कुछ अभी तक देखा है उसके सामने उगल दूं, पर सारी बातें जीभ तक आकर रुक गईं। मैं चुपचाप वहां से उठकर चली आयी।

हमारे सामने एक बड़ी उलझन थी—हम कहां जायें, क्या करें? जोसेफ को जैसे कोई चिन्ता ही नहीं थी। वह दिनभर यहां-वहां घूमा करता था। कहां जाता है, क्या करता है, मुझे पता नहीं। मुझे पता ही आया कि ग्रेसरी

अपने पति के साथ गरमी में यहां आयेगी। उसकी याद आते ही आशा की हलकी-सी किरन मेरे मन मे दौड गयी। मैंने जोसेफ से कहा कि वह यहां के असपताल मे जाकर पता लगाये कि डागधर कब तक आने वाला है। पहले तो उसने बात ही टाल दी, पर जब मिस्टर शालुक ने जोर दिया तब वह गया। आकर उसने बताया कि डागधर दस-पन्द्रह दिनो मे आने वाला है। उसके बगले की सफाई हो रही है। मैंने सतोख की सास ली, दस-पद्रह दिनों का समय बहुत नही होता। इत्ते दिन काटे हैं तो फिर दस-पन्द्रह दिन कटने मे क्या धरा है। मुझे भरोसा था कि ग्रेसरी मुझे जरूर मदद करेगी। जैसे भी हो, वह मुझे जरूर सहारा देगी। मैंने जोसेफ को धीरज बधाया, पर उसका दिमाग कही और था, जाने वह क्या सोचता रहता था। वह शायद रूबी को अभी तक नही भुला पाया, क्योकि यहां-वहां वह उसी की चरचा करता रहता था। लोगो को वह उसकी हुलिया बताता और उसके बारे मे पूछता रहता था। मेरी बातों पर इसी से उसने कान नही दिया।

यहां आकर वह रोज़ शाम को खूब पी लिया करता था। मिस्टर शालुक खुद अच्छे पियक्कड़ों में थे। उसकी औरत भी रात को शराब पीती थी। फिर जोसेफ ऐसी संगत पाकर कैसे बचता ! वह तो पहले से ही इसका प्रेमी था। वैसे मैंने भी शराब पी है, पर लादा की शराब, वह भी केवल नाचते समय। उसका शौक मुझे कभी नही रहा। शादी के बाद नाच छूट गया और तब से मैंने कभी लांदा को भी हाथ नहीं लगाया। जोसेफ शराब पीता था और खूब पीता था। कभी-कभी बेहोश तक हो जाता था। मैंने उसे मना करना ठीक नही समझा। उसने मेरी बात कब मानी है ? कुछ कहकर अपनी इज्ज़त क्यों हलकी करू ?

एक दिन जोसेफ ने बताया कि 'ट्रेवलर्स होम' में उसकी नौकरी जम गयी है। दो जून का खाना और पचास रुपये ऊपर से मिलेंगे। जब तक ग्रेसरी नही आती, यह बुरा नहीं था। आखिर हमें कुछ खाने को तो चाहिए। सुनकर मुझे खुशी हुई। होटल मे जोसेफ को बेरा का काम करना था। 'बेरा' का यहां विशेष काम होता है—होटल मे आने वाले हरेक यात्री की पूछताछ करना, उन्हें खाना खिलाना, चाय आदि देना, उनकी हर माग मालिक तक पहुंचाना और कभी समय पड़ने पर जूठी थालियां भी उठाना।

जोसेफ ने कहा कि कपूर मुझे भी नौकरी में रखना चाहते हैं, रह जाऊं तो क्या बुरा है।

मैं नौकरी करूं, वह भी होटल में, वह भी उस समय जब मिस रजनी और मिस संध्या की कहानी सुन चुकी थी···नहीं, यह मुझसे नहीं होगा, कतई न होगा। जोसेफ ने ज़ोर दिया और मारने-पीटने की भी धमकी दी। बोला, "मुफ्त में बैठे-बैठे खिलाने को मेरे पास नहीं है।" जोसेफ मुझे बहुत दबा चुका था, पर इस सीमा तक दबना मैंने ठीक नहीं समझा। आज पहली बार मैंने हिम्मत कर अपनी पूरी ताकत के साथ उसका विरोध किया। मैंने कहा, "तुम्हारे यहां भागकर नहीं आयी, तुम ब्याह कर लाये हो। तुमने ईशू के सामने ईमानदार होने की कसम खायी है। मुझ पर अत्याचार नहीं कर सकते।" उसने मुझे बहुत डराया-धमकाया, पर जब उसकी नहीं चली तो चुप रह गया।

नौकरी मिलते ही होटल का एक कमरा हमें रहने के लिए मिल गया। मिस्टर शालुक ने इत्ते दिन रहने के लिए छाया दी थी, उसके लिए धन्यवाद देकर हम इस नये कमरे में चले आये। जोसेफ की नौकरी का कोई समय नहीं था। सुबह सात बजे जाता था तो ग्यारह-बारह बजे रात को लौटता था। बीच में कभी घंटे-आधा घंटे को वह मुझसे मिलने चला आया करता था।

जोसेफ को इस काम से सन्तोख नहीं था। वह मन मानकर यह काम कर रहा था। यहां आकर उसके व्यवहार में भी कोई अन्तर नहीं आया। वह पहले की तरह मुझसे उखड़ा-उखड़ा रहता था।

मिस रजनी और मिस संध्या से मेरी भेंट अकसर होती रहती थी। दोनों हमेशा हंसती रहती थीं। गालों में लाली और आंखों में काजल लगाये चौबीसों घंटे वे बनी-ठनी रहती थीं। वे अंगरेजी बड़ी साफ और तेज बोलती थीं। उन्हें अपने काम से जरूर संतोख रहा है। दोनों में से किसी ने कभी कोई शिकायत नहीं की। उनके सिवाय एक औरत मुझे और मिली। अधेड़ उमर की यह औरत बड़ी मोटी थी। सब उसे मिस आन्ट कहते थे। वह रसोईघर की इन्चार्ज थी। सारे रसोइयों की रखवाली करना उसका काम था। मिस आन्ट जितनी मोटी थी, उतनी ही तेज भी

से कराती थी। दया नाम की कोई चीज मैंने कभी उसके पास नहीं देखी। मुझसे कभी वह बोली नहीं। एक बार मैंने नमस्ते की थी, तो उसने कोई जवाब नहीं दिया था। दूसरी बार मैंने उसे रोका, तो भवें चढ़ाकर उसने मेरी ओर देखा और बिना कुछ कहे वह चली गयी। तीसरी बार मैंने उसे फिर रोका, तो वह मुझे धक्का देकर आगे बढ़ गयी। उसके बाद मैंने कभी उसे नहीं रोका। उसे देखकर मैं ही अपना मुंह फेर लेती थी।

कपूर अकसर मेरी ओर देखा करता था। मैंने यह भी अनुभव किया कि वह यहां-वहां से छुपकर मुझे घूरता रहता है। मैं जब भी कमरे के बाहर निकलती और होटल की ओर देखती तो मुझे अकसर कपूर दिखता था। मुझे देखते ही वह या तो पीठ दे लेता या सिगरिट सुलगाने लगता था।

होटल का वातावरण मुझे अच्छा नहीं लगा, पर लाचारी थी। एक ओर तो खाई और दूसरी ओर गड्ढा—कहां जायें, क्या करें? सबसे बड़ी मुसीबत तो यह थी कि जोसेफ मेरा होते हुए भी मेरा नहीं था। वह मेरा पति था, पर मैं उसकी पत्नी नहीं थी। विवाह के कुछ दिन बाद से ही मुझे उससे जो उपेक्षा मिली, वह आज तक मिलती चली जा रही है, बल्कि दिन पर दिन बढ़ती जा रही है। मुन्नी के जाने के बाद मैंने यदि कुछ संतोष पाया था, तो यही कि अब जोसेफ का प्यार मुझे मिलेगा। मुन्नी को देखकर स्वाभाविक रूप से जो उपेक्षा उसे होती थी, अब दूर हो जायगी, पर रूबी ने मेरा रास्ता साफ नहीं होने दिया। एक दिन रूबी भी चली गयी। उसके ही कारण जोसेफ को नौकरी से हाथ धोना पड़ा और यहां के सारे नंगे तमाशे अब देखने को मिल रहे हैं। सब कुछ खोकर यदि मैं जोसेफ को पा लूं तो वही मेरे लिए जादू का चिराग होगा, पर इस रही-सही आशा पर भी तुषार पड़ गया। उसने यहां आकर भी कभी मुझसे प्रेम भरी बातें नहीं कीं। मैं हमेशा तरसती रही कि वह एक बार तो प्रेम से मेरे सिर पर हाथ फेरे और मीठी बातें करे।

…और एक दिन—जिन्दगी का सबसे धुंधला नक्शा मेरे सामने था। यह जिन्दगी वह सीमा थी, जिसके बाद मेरे लिए इस दुनिया से मोह हट गया था। यह सारी दुनिया मुझे झूठ और फरेब से भरी दिखाई दे रही थी। कंवला के प्यार से लेकर आज तक के इतिहास में मैंने केवल यही देखा है।

इस दुनिया में औरत बनना सबसे बड़ा पाप है। ईसू ने जिसे सबसे खूबसूरत चिराग कहा है, मुसलमानों ने जिसे खुदा का नूर नाम दिया है और हिन्दुओं ने जिसे साक्षात् देवी और लक्ष्मी माना है, वह वास्तव में पाप की गठरी के सिवाय कुछ नहीं है। जैसे बालक को खिलौना देकर भरमा दिया जाता है, पुरुषों ने इन नामों के मायाजाल मे औरत को मक्खी की तरह फंसाकर रखा है। सचमुच वह एक निर्जीव नाव है, चाहे जब जो खिवैया आ जाय और मनचाही ओर उसे ले जाय। वह उसका प्रतिकार नही कर सकती। यदि नाव बीच में धोखा देने की बात भी सोचे, तो नाविक उसके पहले ही उसे पानी में सदा के लिए डुबाकर तैरकर पार उतर जाता है। औरत के साथ यह सब क्यों ? यदि वह संसार का निर्माण करती है तो उसके साथ यह छल कैसा ? आदमी के लिए दुनिया में, सबसे कीमती चीज है ज़िन्दगी। ज़िन्दगी इन्सान को सिर्फ एक बार ही मिलती है, वह भी आंसू बहाते बीते, जब हम मरने लगें तो दुनिया के सामने सिर उठाकर देख भी न सकें, ज़िन्दगी भर अपमान और घृणा झेलते रहें और मौत के साथ भी वही जाय, क्या ईसू ने ज़िन्दगी इसीलिए बनाई है ? क्या औरत की ज़िन्दगी में इसके सिवाय कुछ और नही है ? यदि नही है तो दुनिया में औरत होना सबसे बड़ा पाप है। या तो आदमी को जन्म के साथ ही उसका गला घोंट देना चाहिए, जो वह नही कर सकता, या औरत को खुद जहर खाकर मर जाना चाहिए। इसके सिवाय उसके सामने चारा नही है—जब आदमी उसे जीने नही देना चाहता तो उसे घुएं मे घुटने और तड़पने देने का भी उसे अधिकार नहीं है।

यदि औरत को भी मनुष्य समझा जाता तो मेरे साथ यह सब न होता। जोसेफ मेरे साथ दगा क्यों करता ? मेरा पति···क्या कभी किसी आदमी ने दुनिया मे अपनी औरत के साथ ऐसा किया होगा, उसके साथ जिसे वह ब्याह करके लाता है, ब्याह के समय ईसू के सामने वफादार होने की कसम खाता है, उसे अपना आधा अंग मानने का ढोंग रचता है।

उस दिन अंधेरे में ही किसी ने दरवाजे खटखटाए थे। मैंने उठकर जब देखा तो वह 'ट्रेवलर्स होम' का मालिक कपूर था। मेरे सारे कपड़े अस्त-व्यस्त थे। उसे देखकर मैं भीतर भागी तो वह बोला, "वहां जाने की क्या ज़रूरत.

यहां आओ।" आज उसकी आवाज़ में नशा था। मैं कपूर से कभी नहीं बोली थी, फिर आज ऐसी बातें वह कैसे कर रहा है? मैंने आवाज़ लगायी और जोसेफ को बुलाया। कहीं से कोई जवाब नहीं। एक बार, दो बार, तीन बार, चार बार…पर जब वह हो, तो बोले। कपूर गहरा अट्टहास कर वहां से चला गया था। उसकी वह अनपेक्षित हंसी लोहे की कील की तरह मेरी छाती में गड गयी थी; और जब रजनी ने आकर बताया कि जोसेफ मुझे पांच सौ रुपये मे बेचकर चला गया है, तो मैं दहाड मारकर रह गयी थी। जोसेफ मुझे बेच गया! क्या वह बेच सकता है? क्या औरत आदमी की धरोहर है? वह जब तक चाहे उसका उपयोग करे और जब चाहे किसी कबाडी को बेचकर चल दे!

उस दिन से जिन्दगी का मोह मैंने छोड दिया था। मैने निश्चय कर लिया था कि यह काम मैं नही करूंगी। किसी पहाड़ और नाले की शरण लूंगी। मरकर चुड़ैल बनूं, यह मुझे पसन्द होगा—पर काश, हम जो सोचते हैं, कर सकते! भाग्य का लिखा कब किसने मेटा है? मेरे भाग मे कलंक का यह काला दाग भी लगना था। मुझे एक कमरे में जबरन बन्द कर दिया गया। दो दिन भूखा रखा गया। तीसरे दिन रात को कपूर ने आकर कमरे का दरवाजा खोला। उसके हाथ मे एक बोतल थी। वह जैसे हवा मे झूल रहा था। उसने बोतल खोलकर जबरन मेरे मुह मे लगा दी। जितनी मेरी ताकत थी, मैंने विरोध किया, पर औरत वैसे ही आदमी के सामने अपनी शक्ति खो देती है, मैं तो दो दिन से भूखी पडी थी, शराब पीने के बाद दिमाग मे एक हल्का-सा चक्कर आया, फिर मुझे होश नही रहा।

सुबह जब उठी, तो मेरे बाल और कपडे सब अस्त-व्यस्त थे। आंखों में गहरी खुमारी छायी थी। सामने अंधेरा नजर आ रहा था। मुझे अपने आपसे गहरी घृणा हो गयी थी। मैंने एक बार फिर भागकर आत्महत्या करनी चाही थी, पर फिर कपूर ने आकर अट्टहास से मेरा स्वागत किया था। उसके साथ रजनी और संध्या भी थीं।

मैंने इन दोनों के पैर पकड़ लिये। मिन्नतें कीं कि इस नरक से बाहर निकलने मे वे मेरी सहायता करें, पर वे भी पत्थर हो गई थीं। शायद उन पर भी यही सब बीत चुका था। करती क्या, मैंने मन की सारी ताकत

लगाकर अपने आपको समझाया, हाथ जोड़कर ईनू की याद की और उठकर खड़ी होने लगी, तो रजनी ने मुझे पकड़ने की कोशिश की। शायद वह डरती थी कि मैं भाग जाऊंगी। मैं जी भरकर हंसी, और जब सारी हंसी जीभ के नीचे उतर गयी, तो बोली, "डरो मत बहिन, अब तुम मुझे अपने में से एक समझो।" मैंने संध्या के हाथ से सिगरिट छुड़ा ली और अपने मुंह मे रखकर ज़ोर से एक कश खींचा। सिगरिट के धुएं में मैंने मिसेज बेंजो जोसेफ को उड़ा दिया और अब मिस ऊपा बन गयी। जी हां, मिस ऊपा। मिस्टर कपूर ने यह नाम मुझे दिया था। मुझे छाती से लगाकर उसने कहा था—सबसे खूबसूरत स्टार—मिस ऊपा···मिस इसलिए कि 'ट्रेवलर्स होम' का हर यात्री 'मिस' चाहता था, मिसेज से वह नफरत करता है।··· आदमी कितना अजीब है, नाम से उसे नफरत है।

१३

इस नयी जिन्दगी को भी मैंने अपना लिया। कपूर साहब की अधिक से अधिक कृपा पाने की मैंने कोशिश की। वे आंखें चढ़ाकर अपना चेहरा रोमांटिक बनाते, तो मैं उनकी टाई पकड़कर खींच देती। हंसकर वे मुझे गले लगा लेते थे। कहते, "पहले कितनी कटी-कटी रहती थी, सोचता था तुम भी क्या औरत हो। औरत तो अनार का दाना है, उसमें रस ही रस है, फिर तुम नीरस कैसी ? पर अब मैंने विचार बदल दिये, सचमुच तुम बड़ी सरस हो। तुम क्या आयीं मेरे भाग जाग गये।" मैं हंसकर चुप रह जाती। जब अकेली होती तो घंटों आंसू आंखों से अपने आप गिरते। जिन्दगी से निराश होने लगती। बीती जिन्दगी के न जाने किन पापों का फल आज भोग रही हूं, इन पापों का चुकारा फिर कैसे होगा ? उन्हें चुकाने के लिए न जाने कितने जनम लेने होंगे, न जाने कितने दु:ख उठाने होंगे।

रजनी को सिरदर्द था। दिनभर वह मुझसे शिकायत करती रही, पर रात को उसे नाचने के लिए तैयार होना पड़ा। पता लगा कि आज कमरा नम्बर पांच में किसी पुरानी रियासत का जमींदार आया है। बड़ी रोमानी

तबीयत का आदमी है वह। उनका मन वहलाने के लिए रजनी को नाचना होगा। रजनी ने कोई चीं-चपड़ नहीं की। वह शायद ऐसी जिन्दगी से अभ्यस्त हो गयी थी। चुपचाप कश्मीरी मखमल की फिराक उसने पहन ली और जूही के महकते फूलों की माला सिर में बांधकर वह नृत्य भवन में कूद पड़ी :

छूम छनन् छनन् छनन्
छूम छनन् छनन् छनन्

वह थिरक उठी। घुँघरुओं की झनकार में उसके पैर खो गये। तबलची गिरगिट की तरह गर्दन मटकाकर ज़ोर-ज़ोर से तबला पीटता रहा, सितार के सुर निकलते रहे, हारमोनियम लय मिलाता गया और रजनी इन सबको एक साथ साधने में तन्मय हो गयी। एक के बाद एक मुद्राएं बदलती गयी। कपूर उस धनी की ओर आस लगाये देखता रहा, जो इसके बदले चांदी की वर्षा करेगा। वह नृत्य से प्रसन्न था इसलिए कपूर को भी प्रसन्नता हुई।

हारमोनियम वाले ने जब गति बदली, तो रजनी फिर खड़ी हो गयी। कपूर ने उसे इशारा किया। बिना देर किये हाथ में सितार लेकर उसने अपने मीठे गले को खोल दिया :

लागी नहीं छूटे राम चाहे जिया जाये।

वादकों ने गीत का साथ दिया। रजनी ने सितार दूसरे को थमा दी और पैरों से उसने उनकी गति थामी। फिर क्या था! कमरे की दीवारें भी आखें फाड़े कान लगाये थी :

लागी नहीं छूटे राम चाहे जिया जाये।
मन अपनी मस्ती का जोगी,
कौन उसे समझाये, चाहे जिया जाये।
रिमझिम-रिमझिम बुन्दियां बरसें,
छिड़ी प्यार की बातें
मीठी-मीठी आग में सुलगीं,
कितनी ही बरसातें,

रिमझिम-रिमझिम बुन्दियां बरसें
जान-बूझ के दिल दीवाना बैठा रोग लगाये,
चाहे जिया जाये।

"चाहे जिया जाये, लागी नाहीं छूटे राम"—मैं भी गुनगुना उठी। गीत ने मेरी वेदना जगा दी। कंगला की भोली शक्ल मेरी आखों के सामने झूलने लगी और उसके साथ ही आंसुओं की बरसात लग गयी।

रजनी शायद थक गयी थी। उसके पैर शिथिल पड रहे थे, पर तबलची बार-बार थाप देकर उसके पैरों को जगा देता था। बिजली जैसी गति उनमें पलभर को आ जाती थी। कपूर ने मेरी ओर देखा। उसकी आंखें बिल्ली की आंखों की तरह चमक रही थीं। मैंने अपने आंसू पोंछे। उसने मुझे बाहर आने का इशारा किया। बाहर आयी तो बोला, "बडी भावुक हो।" मैंने बनावटी हंसी हंस दी। उसने मेरे सिर पर हाथ फेरा, "कोई बात नही, वह स्त्री क्या जो इतनी नरम न हो। लाजवन्ती के पौधे की तरह स्त्री को होना चाहिए। तुममें ये गुण हैं, पूछना क्या?" फिर उसने कहा, "ऊषा, अब तेरी बारी है। मैंने आश्चर्य से पूछा, "मेरी!"

"हां, तेरी।" कपूर ने बड़े प्यार से कहा, "बहुत बड़ी आसामी है, काटना तेरे हाथ है।"

मैं न समझी, काटने का मतलब क्या है? पूछने का समय भी उसने नही दिया। संध्या को बुलाकर उसने आज्ञा दी, "तैयार कर दो।" संध्या मुझे ड्रेसिंग कमरे में ले गयी और उसने ऐसा सिंगार कर दिया कि जब मैं आइने के सामने जाकर खड़ी हुई तो वह भी सिहर उठा। एक शीशी का कार्क खोलकर उसने एक 'पेक' मेरे हाथ दी। अब तक मैं सब कुछ समझ गयी थी कि मुझे क्या करना है। मैंने संध्या से कहा, "बहिन, सब कर सकती हूं, इस पाप से बचा लो।"

वह बोली, "नही ऊषा, हम भी इतने दिनों से यही करते आये हैं। जरा भी अड़ोगी तो कपूर का हंटर पीठ पर पड़ेगा। यह तो जेल है, कपूर उसका जेलर है, मुक्ति नही।" मेरा गला अपने आप भर आया, हिचकी आने लगी। संध्या ने लेमन की एक बोतल मेरे मुंह में लगा दी। उसके

खतम होते ही बीयर की दूसरी 'पेक' भी मैंने ढाल ली और मन कड़ा कर कमरे से निकल आयी।

लागी नाहीं छूटे राम,
चाहे जिया जाये।

रजनी ने अपने पैर अन्तिम वार पटके और वहीं गिर पड़ी। 'बहुत अच्छा, बहुत अच्छा' की ध्वनि के साथ तालियां बज उठीं। जमींदार ने नोटों की एक गड्डी इस अदा से फेंकी कि वह रजनी के माथे से जा टकरायी। कपूर ने आगे बढ़कर उसे उठा लिया। इसकी फिकर किसी को नहीं थी कि रजनी एकदम क्यों गिर पड़ी है। तबलची ने उसका हाथ पकड़कर उठाया, पर वह न उठी। कपूर की भवें तन गयीं। उसने दो-तीन लोगों को इशारा किया, वे उसे उठाकर ले गये। संध्या भी चली गयी। बाजे वालों ने कमरा साफ कर दिया। कपूर ने जमींदार के सामने सिर झुकाया, तो उसने कहा, "बढ़िया रम।"

"यस, सर!" कहकर वह चला गया। एक बैरा एक बोतल रम और दो गिलास रखकर चला गया। जमींदार ने अपना लम्बा कोट उतार फेंका और मेरा हाथ पकड़कर बराबरी से सोफा पर बैठा लिया। रम की बोतल खोली गयी। और आपस में लेना-देना काफी देर तक चलता रहा। उस रात जमींदार ने पांच सौ रुपये मेरे ऊपर बरसाये।

सुबह जाकर मैंने वे रुपये कपूर को दिये। उसने गिने। तब भी बोला, "कितने हैं?"

मैंने कहा, "पांच सौ।"

"बस, पांच सौ!" कपूर ने आंखें चढ़ाकर मेरी ओर देखा। "जी हां, क्या यह कम हैं?" मैं बोली तो जैसे फुग्गे से फूटकर हवा निकल गयी, "ऐसे दावाब के लिए जिसे फूल-फूल प्यार कर उठे, सिर्फ पांच सौ रुपया!" उसने कमर से अपना काला चाबुक निकालकर दो मेरी पीठ पर जड़ दिये, "गंवार, हट जा। संध्या होती, तो कई हजार काटती।"

वहां से आकर मैं खूब रोयी, फूट-फूटकर रोयी। दीवार पर अपना सिर पीटती रही। यहां भी चैन नहीं। इतना बड़ा पाप करने के बाद भी

कोड़े। मुझे मिलता क्या है? दो जून का खाना और पहनने को कपड़े, अच्छे-अच्छे कपड़े—वह भी इसलिए कि मुझे लोगों को रिझाना है और कपूर की तिजोरी भरना है।

दूसरे दिन मुझे एक नया काम सौंपा गया। वह था 'काउन्टर गर्ल' का। 'ट्रेवलर्स होम' के काउन्टर पर बैठना, लोगों से पैसे लेना और उन्हें बिल देना। मेरी सीट दरवाजे की बाजू मे ही थी। मुझे खूब सज-धजकर वहां बैठना पड़ता था और कपूर का सख्त आर्डर था कि पैसा लेते समय मुझे मुसकराकर गाहक की तरफ अवश्य देखना चाहिए। कोई भी गाहक मुंह लटकाये यहां से न जाय। उसकी खुशी पर ही इस होटल की बुनियाद है। कपूर का यह आदेश मैं हमेशा ध्यान रखती। कभी-कभी तो लोग इसका गलत अर्थ भी लगाते। जब मैं हंसती तो कोई सीटी बजाकर आंख मार देता था, तो कोई किसी रोमांटिक गीत की पंक्तियां दुहराने लगता था। यह सब मुझे पसन्द नहीं था, पर यहां पसन्द की बात ही कहां थी। सरकस के सिखाये जानवरों की तरह मुझे आंख मूंदकर वह सब करना पड़ता, जो कपूर चाहता था। उसकी मरजी के विरुद्ध एक कदम भी रखना उसकी कमर में सोते हंटर को जगाना था। उसका कहना बराबर मानो तो वह दुनिया की हर चीज़ लुटाने को तैयार है। कपूर बिजनिसमैन है, बिजनिस का ध्यान उसे हमेशा रहता है। जो उस पर वार करे, वह उसका दुश्मन है। वह उसकी जान भी ले सकता है।

काम करते थक गयी थी, तो बिस्तर में जाते ही पहले तो नींद आ गयी, पर आधी रात के करीब वह जो खुली, तो पलकों ने बन्द होने का नाम न लिया। प्रेसरी की याद हो आयी। उसके बारे में सोचने लगी। अब तो वह जरूर आ गयी होगी, पर मन न हुआ कि उसे जाकर अपना यह काला मुंह दिखाऊं—नहीं, मैं प्रेसरी से नहीं मिलूंगी, कभी नहीं मिलूंगी—जिन्दगी भर यह भार ढोना कबूल है, पर प्रेसरी को यह रूप दिखाना मुझे पसन्द नहीं।—मैंने प्रेसरी से मिलने की बात सोचना ही छोड़ देने का निश्चय किया। इसी विचार में सवेरा हो गया और फिर रोज का काम लग गया।

मिस्टर धाजुक होटल के एक कमरे मे मिल गया। मुझे दे... र

"तुम तो एकदम वदल गया, मिसेज बेंजो।"

मैंने कहा, "ओ यस, बेंजो नही, मिस ऊषा।"

उसने हंस दिया, बोला, "खूब मिस ऊषा, जोसेफ चला गया, वला से···!" जोसेफ का नाम सुना तो मन भारी हो गया। मैंने धीरे से कहा, "मिस्टर शालुक, तुम तो इस होटल का बहोत पुराना चौकीदार है। हम इहां से भागना मांगता, मदद कर सकता है।"

"भागना मांगता!" वह खूब खिलखिलाकर हंसा, बोला, "मिस, यहां से कोई नही भाग सकता। कपूर होटल चलाता है, खेल नही करता। बम्बई का आदमी है। तुमको उसने खरीदा है। तुम उसका है, तुम्हारा शरीर उसका है। वह किसी को आसानी से नही छोड़ता। जब तुम पैंतीस-चालीस वरस का हो जायगा, तभी तुम्हें भागने मिलेगा। न भी चाहोगे तो भगा दी जाओगी।"

मैंने मिस्टर शालुक से जोसेफ के बारे में पूछा। उसने बताया कि वह कुछ कहकर तो नही गया, पर कल उसका एक खत बम्बई से आया है। उस पर उसने अपना पता नही लिखा। पोस्ट आफिस की सील से पता लगा कि वह बम्बई से भेजा गया है। खत में लिखा है, "चैन से कट रही है, रूबी भी यही मिल गयी है। फिल्म कम्पनी में हम लोग कोशिश कर रहे है, उम्मीद है काम फतह होगा।" मैंने पूछा, "मेरे बारे मे कुछ लिखा है?" उसने सिर हिला दिया और अपना काम करने लगा।

मैं अपने कमरे में लौट आयी। मैंने अपनी पुरानी सारी चूड़ियां फोड़ डाली। जोसेफ का नाम अब मैं अपने साथ जिन्दा नही रखना चाहती थी। मैंने निश्चय कर लिया कि मैं उसे भूल जाऊंगी। वह मेरा कोई नही है, न कभी मेरा कोई रहा।

मिस्टर कपूर ने जब मुझे नंगे हाथ देखा, तो आपत्ति उठायी। मैं शरारत से बोली, "कपूर साहब, आपके राज मे काच की चूड़ियां!···आपकी वेइज्जती मुझे पसन्द नही।" इस चापलूसी से कपूर बेहद खुश हुआ। वह मुझे अपने साथ अपने कमरे मे ले गया। पेटी खोलकर उसने सोने की चार-चार चूड़ियां अपने हाथ से मुझे पहना दी। एक घड़ी निकालकर उसने मेरे दाहिने हाथ मे बांध दी। बोला, "अब तो कपूर का राज मानोगी?"

"वह तो मानती थी साहब, पर अब खूब मानूंगी।" मैंने कहा तो हम दोनों एक साथ खिलखिलाकर हस पड़े।

रोज की तरह आज भी मैं काउन्टर पर बैठी थी। इसी समय ग्रेसरी अपने डागघर के साथ होटल में आ गई। ग्रेसरी को देखते ही मेरा खून सूख गया और पैरों के नीचे से जमीन खिसकने लगी। ग्रेसरी ने मुझे देखा नही था। मेरी ओर तो उन दोनों की पीठ थी, पर वे लौटेंगे जरूर। मैं काउन्टर छोड़कर भाग गयी। बाहर आयी तो कपूर जोर से चिल्लाया। रजनी से मैंने बता दिया कि पेट गड़बड़ कर रहा है, थोड़ी देर में आती हूं। मेरी जगह रजनी ने काम सम्हाल लिया।

अपने कमरे में चली आयी और पलंग पर धम्म से गिर पड़ी। खूब रोती रही। ग्रेसरी मेरे सामने है पर मैं उससे नही मिल सकती। शायद उसे कल्पना भी न होगी कि मैं यहां इस हालत मे हूं। लेकिन कब तक ग्रेसरी से बचूंगी। उसे यहां अभी काफी दिन रहना है—बीच-बीच मे मैं पलग से उठकर खिड़कियों के सहारे बाहर झांक लेती थी। जब ग्रेसरी और उसका पति होटल से चले गये, तो मैं फिर काउन्टर पर आकर बैठ गयी। कपूर ने बड़ी चिन्ता के साथ पूछा, "क्या बात है, डार्लिंग?"

मैंने कहा, "कुछ नहीं, कपूर साहब, पेट मे दर्द हो रहा है।"

"पेट में दर्द!" उसने मुंह फाड़ दिया, "आज एक नया मिहमान कमरा नम्बर पांच मे फिर आने वाला है, तुम्हें दर्द है। चलो, अस्पताल ले चलू।"

अस्पताल का नाम सुनकर मेरा खून सूख गया। वहां ग्रेसरी का पति मिलेगा, वही तो डागघर है। मैंने कहा, "नही कपूर साहब, अस्पताल जाने की बात नहीं, दर्द ठीक हो रहा है, शाम तक बिलकुल ठीक हो जायेगा, आप चिन्ता न करें।"

वह बोला, "क्या ठिकाना? आज का तुम्हारा बीमार होना ठीक नही।" उसने मि० दालुक को आवाज दी और कहा, "ड्राइवर से कहो, मोटर ले आये।" मेरी ओर देखकर वह बोला, "अपने साथ तुम्हें ले चलेगा।"

आफत थी। सिर पर पहाड़ टूट रहा था। जिससे बचने का बहाना

बनाया, उसी के सामने खुद हाजिर होना पड़ेगा। अब क्या करूं, मेरा सिर चक्कर खाने लगा। छिपाना मैंने ठीक नही समझा और रजनी से जाकर मैंने सब किस्सा कह दिया। मैंने उससे विनती की कि इस बार वह मुझे बचा ले।

रजनी ने जाकर मिस्टर कपूर से जाने क्या कहा, उसने मोटर गैरेज में रखवा दी और अपने काम मे लग गया। मैंने रजनी का बडा एहसान माना। आभार से उसके सामने झुक गयी।

रजनी और संध्या के साथ उस दिन मै मन बहलाने पहाड़ पर चली गयी। छोटे-छोटे झरनो और झुरमुटो के किनारे हम लोग खूब घूमे। जगल की खुली हवा का हमने मनमाना आनन्द लिया। कई बार ऐसे प्रसग आये जब हम लोगों ने अपने भूले जीवन के बारे मे आपस मे पूछताछ की। रजनी और सध्या ने तो कई बातें बता दी, पर मैंने अपने को बहुत सम्हालकर रखा। अपनी कोई बात मैंने खुलने नही दी।

होटल की ज़िन्दगी कौन नहीं जानता ? इसलिए चाहती थी कि अपनी कहानी यही खतम कर दूं, पर कंगता ने वह खतम नही होने दी। मेरे दु:ख-दर्दों की पुकार आकाश की छाती चीरकर देवता के कानो तक जरूर पहुंची होगी। मुझे उस पर भरोसा है। वह सब कुछ जानता है। उससे कुछ छिपा नही। आदमी भले ही यह दावा करे कि वह जो कुछ कर रहा है, कोई उसे देखने वाला नही है, पर वह सब मिथ्या धारणा है। कोई न कोई उसे जरूर देखता है, वह देखने वाला कौन है, यह अपने-अपने मन की भावना के आधार पर पढ़ा जा सकता है। यदि ऐसी कोई ताकत अंतरिक्ष मे न होती, तो जहा जाकर आदमी की सारी ताक्त हार जाती है और वह अपने घुटने टेक देता है, वहां से वह फिर न उठता।

रविवार का दिन था। इस दिन सबकी छुट्टी होती है, पर होटल का यह सबसे 'बिजी' दिन होता है। सबेरे-सबेरे संध्या ने आकर बताया कि आज कमरा नम्बर पाच मे फिर कोई भारी आसामी उतरा है। कोई बहुत बड़ा सरकारी अफसर है। सुनकर मन ठंडा हो गया। आज की रात फिर मेरे पापों का प्याला भरने आयी है। संध्या ने हंसकर कहा, "कपूर की तुम

पर बड़ी कृपा है, ऊषा। जब मैं नयी-नयी इस होटल में आयी थी, तो यह कमरा मेरा था। अब तो उसके लिए तरसती हूं।"

"इसे तुम फिर अपना बना लो, संध्या !" मैंने उसके दोनों हाथ पकड़ लिये, "मुझे तो इस कमरे में जाते ही बड़ा दर्द होता है। इससे मुझे कोई लगाव नहीं, तुमसे बिलकुल मन की बात कर रही हूं बहिन। आज सवेरे-सवेरे तुमने फिर मेरे कलेजे मे सुई घुसेड़ दी।" संध्या ने अपने ओठ तिरछे कर व्यंग्य से हंस दिया। बोली, "ऊपर से सब यही कहते हैं, पाना सब चाहते हैं।" वह वहां से चली गयी।

पता लगाने पर मालूम हुआ कि जंगल विभाग का कोई बड़ा अफसर है।···अफसर है! ···वह भी यह सब करता है ! ···वह यहां सरकारी काम का बहाना लेकर आया होगा और···मालूम हुआ कि उसके साथ एक चपरासी भी है। एक बैरा ने उस चपरासी की बड़ी तारीफ की। कहता था, "बड़ा सीधा है और बहुत मीठा बोलता है।" उसने मुझे वह चपरासी दिखाया भी। वह होटल के बाहर टहल रहा था। मैंने देखा तो देखती रही। उसका चेहरा कंगला से मिलता-जुलता था। बार-बार मैंने उसे देखा, हर बार यही लगा कि वह कंगला ही है। एक लम्बी सांस मैंने अपने आप ली। आंखें भी धोखा देने लगीं। कंगला···ओफ, वह देवदूत, यहां आकर क्या करेगा। गौरैया की तरह सीधा मेरा कंगला, यहां आना क्या जाने।

मैं काउन्टर पर बैठी थी, तो वह मेरी बाजू से, नीचा सिर किये अंदर आ गया। मैंने देखा, वह कंगला ही है। बार-बार देखा, अन्त में निश्चय हो गया कि वह कंगला है। कंगला के सिवाय और कोई नही हो सकता, बशर्ते कि मेरी आंखें ठीक हैं। पर वह चपरासी कैसे बना ? थोड़ी देर सोचती रही। अपने आप काउन्टर छोड़कर बाहर आयी। मैंने एक बैरे से कहा कि वह पता लगाये कि इस चपरासी का नाम क्या है और वह कहां रहता है ?

घंटे भर में ही उसने पता लगा लिया। पता लगते ही मेरा मन बांसों उछलने लगा। पर शीघ्र ही मैंने अपने आपको मकड़ी के जाले के भीतर बन्द पाया। सोचने लगी, यदि कंगला मेरे बारे मे जान ले, तो क्या मुझे फिर स्वीकार करेगा ? दोपहर की छुट्टी में अपने कमरे में पड़ी-पड़ी मैं बहुत सोचती रही—कंगला से मिलूं या न मिलूं ? दोनों

सामने आये। अन्त मे अंतर से एक गहरी आवाज उठी, "यह चांस है। ईशू ने दिया है। यदि गंवा दिया, तो फिर जिन्दगी भर इसी नरक मे सड़ना पड़ेगा। मौका आदमी की जिन्दगी मे भूले-भटके कभी आता है, जिसने उसका उपयोग कर लिया, वह समझो पार उतर गया।"

काउन्टर पर मैं नही गयी। रजनी को वह काम मैंने सौंप दिया। कपूर से यह कहकर छुट्टी ले ली, कि रात जागना है, जरा आराम कर लू। मिस्टर शालुक को बुलाकर कंगला को मैंने अपने कमरे मे बुलाया। मिस्टर शालुक के बहुत कहने पर वह मेरे कमरे में आया। जैसे ही वह अन्दर आया कि मैंने भीतर से दरवाजा लगा लिया। दरवाजा लगाते ही उसने आखें ऊपर उठायी, बोला, "यह क्या ?" कहते-कहते वह रुक गया। शायद वह मुझे पहचान गया था। मैं दौडकर उससे लिपट गयी और खूब रोने लगी। मेरा कगला, मेरा प्यारा साथी आज मिला है। बीच मे एक बार और मिला था, पर तब मेरे हाथ-पैर बधे थे। मिलने की अपनी प्यास मैं पूरी नही कर पायी थी। उससे एक शब्द भी न बोल पायी थी। आज वह मिला है, मैं उससे दिल खोलकर मिल लूगी। उससे सब कुछ कह दूगी। वह मुझे इस पाप से जरूर उबारेगा।

मैंने उसे पलग पर बैठाया। पहले तो बैठने को भी तैयार नही हुआ। जबरन उसका हाथ पकड़कर मुझे बैठालना पड़ा। मैंने कहा, "माफी मागती हूं। माफ कर दो न ?"

वह बोला, "काहे की माफी ?"

"आज इस हालत मे हूं।" मेरी आंखों मे फिर आसू आ गये। मैंने पूरी ताकत के साथ उन्हे रोका।

"कैसी हालत?" उसने पूछा। निश्चय ही वह मेरी स्थिति नही जानता था। मुझ पर क्या-क्या बीती है, यह कहानी उसे नही मालूम थी। मैंने लाज-शरम छोड़कर अपनी सारी कहानी उसे कह दी। विलियम ने क्या किया, जोसेफ ने क्या किया, यहा कैसे आयी और क्या करती हूं, सब कुछ मैं कह गयी। मैं उसके पैरों पर गिर पड़ी और खूब गिड़गिड़ायी। इस नारकीय जिन्दगी से उबारने की मैंने प्रार्थना की। कंगला बड़ी देर तक सुनता रहा। फिर बोला, "मुझे ऐसी लड़की से क्या वास्ता ? मुझे अब किसी से वास्ता नही।

मैंने तो अब गांव भी छोड़ दिया है और यह नौकरी कर ली है।"

वह उठकर जाने लगा तो मैंने उसका हाथ पकड़ लिया। उसकी गोद में सिर पटक-पटककर मैंने बिनती की। मैंने यह भी बताया कि आज की रात मुझे उसके अफसर के साथ…

सुनकर कंगला दंग रह गया। बोला, "झूठ बोलना भी सीख गयी। अफसर तो देवता है।"

मैंने कहा, 'तुम्हारे विश्वास को ठेस पहुंची, माफ कर दो, पर मैं खुद अपनी रक्षा के लिए तुमसे कह रही हूं। भरोसा करो आज की रात वह देवता नहीं रहेगा।" अपने अफसर की आलोचना उसे इतनी बुरी लगी कि वह उठकर चला गया। मेरे बहुत रोकने पर भी वह न माना। मैं दरवाजे पर खड़ी-खड़ी उस निर्मोही को देखती रही, जब तक वह आंखों से ओझल नहीं हो गया।

रात को कमरा नं० पांच में फिर नृत्य-संगीत का मजमा जमा। वही 'लागी नाही छूटे राम, चाहे जिया जाये' की दर्दभरी पुकार मुझे सुनने को मिली। उसके बाद मुझे फिर कमरे में अकेला छोड़ दिया गया। मैंने उस अफसर के पैर पकड़ लिये और सिसकी भरकर रोने लगी। अफसर ने मेरी दोनों बांहें पकड़कर मुझे उठा लिया। बोला, "घबराओ नहीं। कगला ने मुझे सब कुछ बता दिया है। वह आदमी नहीं, देवता है। पहले भी कई बार वह तुम्हारा नाम मुझे बता चुका है।" उसने पूछा, 'बंजारी तुम्हीं हो न ?"

"कभी थी, अब नहीं हूं।" नीचे सिर झुकाकर मैंने धीरे से कहा।

"अब नहीं हो ?" उसे सुनकर आश्चर्य हुआ था।

"जी, नहीं हूं।"—फिर मैंने अपनी सारी कहानी कह दी। किस तरह बंजारी से मिसेज बेंजो जोसेफ बनी और किस तरह अब मिस ऊषा कहलाती हूं, यह सब मैंने बखान दिया। सुनकर उसने हमदर्दी दिखायी। मैंने ग्रेसरी और उसके डॉक्टर पति की भी चर्चा कर दी। उसने सब ध्यान से सुना, फिर उसने पूछा, "कंगला से शादी करोगी ?" सूरज की पहली किरन पाकर जैसे सूरजमुखी का फूल खिल उठता है, अफसर का प्रश्न सुनकर मेरा मुरझाया मन भी फूल उठा। लगा कि मैं उसके शब्द छीनकर अपनी

गांठ मे बांध लूं। मुंह से कुछ न कह सकी। आंखें लाज से झुक रही थी और मुंह अफसर के शब्दो का स्वाद ले रहा था। मैंने सिर हिलाकर अपनी सहमति व्यक्त की।

अफसर ने मुझसे जाने को कह दिया। तब रात के बारा बजे थे। मैं दरवाजे तक गयी। बाहर झांककर देखा, चारो ओर अंधेरा था। मैंने अफसर से प्रार्थना की कि वह बिजली बुझा दे और जब तक मैं अपने कमरे में न चली जाऊं, उसे बुझा रहने दे। दरवाजा खोलते समय बाहर पड़ते प्रकाश मे कही कपूर को मेरी झलक दिख गयी, तो फिर खैरियत नही। वह मेरी खाल खीचे बिना न छोड़ेगा। अफसर बड़ा भला आदमी था। उसने मुझे रात को क्यों बुलाया था, नाच-गाने मे क्यों पैसे खर्च किये थे, मेरी समझ में नही आया। इस पर मैंने ज्यादा सोचा-विचारा भी नही। मुझे तो अथाह और अछोर सागर के बीच जैसे एक छोटी-सी नाव मिल गयी थी। मैंने उस पर हाथ भी रख दिया था। किसी तरह उस पर बैठ जाना चाहती थी। जिन्दगी का आखिरी दाव मैंने लगा दिया था। इस बार भर किनारा मिल जाय, फिर कभी उसके पास भी नही फटकूगी। मैंने बहुत कुछ देख लिया है, बहुत कुछ सीख लिया है, कुछ पढ़ भी गयी हूं। अपनी रही-सही जिन्दगी को दुनिया की भलाई मे लगा दूंगी।

बची हुई रात तारे गिनते बीती। बिस्तर में भी नही लेट सकी। थोडी देर तो अफसर को असीसती रही। फिर नयी-नयी योजनाएं बनाने मे लग गयी। जेल से छूटते ही कंगला को लेकर मैं कहा जाऊंगी, क्या करूंगी? अपने गांव वापस जाने की कल्पना जब सामने आयी, तो मन पीछे हटा। अपना काला मुंह लेकर मैं कैसे गांव जाऊं?…बहुत सोचने के बाद अन्त में विजय इसी विचार की हुई। मैंने निश्चय कर लिया कि गांव ही जाऊंगी। जन्मभूमि आदमी की सबसे प्यारी जगह होती है। वही से पाप लेकर बाहर आयी थी, वही जाकर पाप धोऊंगी और उसी गांव को एक पुण्य तीर्थ बनाकर छोड़ूंगी।

सोचते-सोचते सबेरा हो गया। किसी ने दरवाजे पर दस्तक दी। दरवाजा खोला तो मि० कपूर को खड़ा पाया। मेरा चेहरा फक हो गया। शेखचिल्ली की तरह सारे विचार हवा में काफूर हो गये। वह पैसा मागेगा,

मैं क्या दूंगी ? कमला को देखकर इतनी खुश थी कि अफसर से पैसा नहीं मांग पायी। यदि उससे सुबह बीतने वाली यह बात बता देती तो वह ज़रूर मुझे पैसा भी दे देता, पर…

कपूर ने हंसते हुए पूछा, "आज तो हज़ारों पीटे होंगे।"

मैं बुत बनी खड़ी रही। वह प्यार से बोला, "बोलो रूपा, कितने काटे ?"

मैंने उसके पैर पकड़ लिये और फूट-फूटकर रोने लगी। उसने गरजकर कहा, "क्या पैसे नहीं लायी ?"

मैंने सिर हिला दिया, तो उसने लात मारकर मुझे दूर कर दिया। बोला, "ईडियट, यह हरकतें भी सीख गयी।" मैं उसके सामने गिड़गिड़ायी। मैंने कहा, "अफसर की तबीयत ठीक नहीं थी, इसलिए जाते ही उसने मुझे बाहर कर दिया।"

"कपूर को बेवकूफ नहीं बना सकती छोकरी !" उसने दांत पीसे, "बारह बजे तक तो मैं देखता रहा हूं, कमरे में थी।"

मैं कुछ न बोली। अपने शरीर के सारे तन्तुओं को समेटने और ताकत बटोरने में लग गयी। मैं जानती थी, अब कपूर का हंटर मेरी पीठ चूमने ही वाला है। हुआ भी यही—एक, दो, तीन, चार…और दरवाजा बाहर से बन्द कर कपूर गुस्से में तमतमाता चला गया। इतनी मार खाने के बाद भी आज आंखों से आंसू नहीं निकले। इस ज़िंदगी का अन्त यदि इन चार कोड़ों से ही हो जाय, तो इन्हें भी मैं देवता का परसाद समझूंगी।

सूरज ऊपर चढ़ आया था। खिड़की से काफी धूप मेरे कमरे में आ रही थी और मैं कोड़ों की मार से दर्द करती पीठ को अपनी हथेलियों से धीरे-धीरे सहला रही थी। कपूर ने ताकतभर हमला किया था। पीठ पर हथेली फेरती तो ज़ोर का दर्द होता। मन दर्द से कराह उठता।

कमरे में बन्द थी। मेरे सारे हवाई महल ढह रहे थे। बाहर होती तो दौड़-धूप कर लेती। कपूर को होटल का प्रत्येक आदमी जानता था, इसलिए चाहते हुए भी कोई मेरी मदद करने की हिम्मत नहीं कर सकता था।

मैं कमरे में टहलने लगी। सहसा बाहर से किसी के झगड़ने जैसी आवाज़ सुनाई दी। खिड़की से झांककर देखा तो होटल के सामने से वह

आवाज आ रही थी। मैंने उस ओर कान लगाये—यह आवाज़ कपूर की थी, कह रहा था, "मैं कुछ नही जानता। मैंने उसे खरीदा है।"

"इस युग मे आदमी के खरीदने की बात तुम्हे शोभा नही देती, कपूर साहब!" किसी ने जवाब दिया था। यह किसकी आवाज थी, एकाएक नहीं पहचान सकी। मुझे ऐसे लगा कि हो न हो वह अफसर बोल रहा है। कपूर पर इसका असर नही पड़ा था, बोला, "यह मेरे बिजनेस की बात है, आपको दखल देने का अधिकार नहीं।"

"कपूर साहब, दिन में रात के सपने मत देखिए!" यह डागधर की आवाज़ थी—तो क्या डागधर यहां आ गया है! ग्रेसरी भी उसके साथ होगी! इन्हें पता कैसे लग गया? रात की अफसर के साथ हुई बातें याद आ गयी।

डागधर तेज़ी से कह रहा था, "आज के युग मे मरजी के खिलाफ मनुष्य का व्यापार नही किया जा सकता। आप नहीं मानेंगे, तो मुझे पुलिस की मदद लेनी होगी।"

कपूर ने उसी तेज़ी से जवाब दिया, "उसकी मरजी के बिना यहा कुछ नही हो रहा।" उसके बाद बातें कुछ साफ नही सुनाई दी।

किसी ने मेरे कमरे का दरवाजा खोला। मैं चौंककर सावधान हो गयी। वह रजनी थी। वह दौड़ते हुए मेरे पास आयी, "बोली, 'कपूर साहब ने इसी हालत में बुलाया है।"

"क्यो?" मैंने पूछा। उसने बताया कि मेरे पीछे वहां हंगामा मचा है। उसने मुझसे यह भी कहा कि कपूर ने मेरे लिए खबर भिजवायी है। कहा है कि उन लोगों के सामने मैं कह दूं कि यहां अपनी मरजी से रह रही हूं। इसके बदले कपूर मुझे सोने-चांदी से लाद देगा। मैंने रजनी को कोई जवाब नहीं दिया। एक फीकी हंसी हंसकर बाहर आ गयी। रास्ते मे जी हिचकने लगा, न जाने वहां कौन-कौन हैं, उनके सामने यह मुंह कैसे दिखाऊं?...

होटल के कमरे में पहुंची तो ग्रेसरी ने लपककर मुझे पकड़ लिया, "भाभी!" मैं रोने लगी। अफसर ने कहा कि रोना-गाना नहीं चलेगा। आंसू पीकर और हिचकियों को एक गिलास ठंडे पानी मे घोलकर खड़ी हो गयी। वहां ग्रेसरी थी, उसका डागधर पति था, जगल का अफसर था,

कंगला था, होटल का मालिक कपूर था, रजनी-संध्या थीं और…

कपूर ने मेरी ओर तिरछी नजर से देखा, बोला, "मिस रूपा, मैं तुम्हें यहां जबरन पकड़कर तो नहीं लाया ?"

मैं जैसे अदालत मे अपराधी बनकर खड़ी थी, नीचे सिर झुकाये मैंने कहा "जी नहीं।"

"यहां तुम्हारी मरजी के विरुद्ध तो कोई काम नहीं कराया जाता है ?" मि० कपूर का प्रश्न था। मैं सोच में पड़ गई—इसका क्या उत्तर दू ? मैं चुप रही, तो ग्रेसरी ने मेरे सिर पर हाथ फेरा। बोली, "डरो मत, जो सच हो कह दो।"

मैं सिसकने लगी और सिसकते सिसकते मैंने सब कुछ बखान दिया। ग्रेसरी ने मेरे आसू पोंछे। मैंने कल रात की घटना भी बता दी और सुबह कपूर ने जो कोड़े लगाये थे, उनके निशान भी सबको दिखा दिये। मैंने जी कड़ा कर सब कुछ उगल दिया। मन पत्थर हो गया था। यदि इस नरक से उबरना न मिला, तो भी कपूर मेरा कुछ न बिगाड़ लेगा। मारने-पीटने का जो सिलसिला अभी चल रहा है, वही क्या कम है। चार की जगह आठ कोड़े लगायेगा, वह भी सह लूंगी, पर समय मिला है तो कहे बिना नहीं रहूंगी।

पीठ के निशान देखकर डागधर ने कहा, "ओफ़, ऐसा तो जानवर को भी नहीं मारते, कपूर साहब !"

कपूर ने कहा, "साहब, आपको इससे कोई वास्ता नहीं।"

डागधर गुस्से मे आ गया। उसने सामने रखा फोन उठाया, बोला, "अभी पुलिस को बुलाता हूं। आपने क्या समझ रखा है ?"

कपूर ने एक बड़ी तीखी नजर मुझ पर डाली। आगे बढ़कर डागधर के हाथ से फोन उसने ले लिया। बोला, "सर, ऐसी सैकड़ों लड़कियां रोज नौकरी के लिए मेरे होटल के चक्कर काटा करती है। लड़कियों की हमारे यहां कभी नहीं, पर इसके बदले पांच सौ रुपये जोसेफ को दिये है, यह रही उसकी रसीद।" डागधर की ओर बढ़ा दिया और मेरे बदले उन पैसों की

मैंने वहां खड़े

डाली। कंगला के मुंह पर

हवाइयां उड रही थीं। वह बेचारा क्या करे ? यदि उसके पास पैसा होता तो मैं गाव से यहा क्यों आती ? अफसर सिगरिट पी रहा थी। उसके चेहरे पर कोई विशेष भाव मुझे नजर नही आये। कपूर की आंखें लाल थीं। वह सताये हुए नाग की तरह मुझे देख रहा था। ग्रेसरी ने अपने पर्स से एक कागज निकाला और डाकघर के उस पर हस्ताक्षर लेकर कपूर की ओर बढा दिया। कपूर ने मुझ पर फिर एक नजर डाली और वहा से चला गया।

मैं ग्रेसरी को पकड लिया, "तुम्हारे एहसान जनम-जनम नही भूलूंगी, ग्रेसरी !" ग्रेसरी ने मेरे सिर पर हाथ फेरा और मुझे छाती से लगा लिया, बोली, "सब मरजी ईशू की है। चलो, घर चलें।"

मैं सीधी खडी हो गयी, बोली, "नही ग्रेसरी, तुम्हारे घर को मैं कलंकित नही करूंगी। अब मैं कमला के साथ अपने गाव को वापस चली जाऊंगी। गांव की और गाववालों की सेवा कर अपने पाप मोचन करूंगी और देखूंगी कि वहां की किसी बंजारी को निर्वासित होकर फिर मिसेज बेंजो जोसेफ न बनना पड़े।"

बाहर आकाश मे बादल आ गये थे, परन्तु सूरज की किरनें उसकी छाती चीरकर धरती को चूम रही थी, हवा के मन्द-मन्द झोंके पेड-पत्तों के साथ अठखेलियां कर रहे थे जैसे विश्व को कोई नया संदेश दे रहे हों।

राजेन्द्र अवस्थी

स्वतन्त्रता के बाद की हिन्दी कहानी के एक प्रमुख हस्ताक्षर। 'सारिका' और 'नन्दन' के भूतपूर्व संपादक। सम्प्रति 'कादम्बनी' का संपादन कर रहे हैं।

प्रमुख कृतियां

उपन्यास : अकेली आवाज, जंगल के फूल, सूरज-किरन की छांव, जाने कितनी आंखें, उतरते ज्वार की सीपियां, बहता हुआ पानी, बीमार शहर, यह घर मेरा नहीं है !
कहानी : एक औरत से इण्टरव्यू, दो जोड़ी आंखें, तलाश, एक प्यास पहेली, मेरी प्रिय कहानियां, समसेना, भूचाल, प्रतीक्षा, एक फिसलती हुई मछली। नाटक : बूची टेरेस। यात्रा-वृत्त : सैलानी की डायरी। रेखाचित्र : शहर से दूर। विविध : कान-चिंतन।